जनवरी - दिसंबर 2015 वर्ष-47 अंक-1-4

मूल्य
20 रू.

डॉ. अब्दुल कलाम विशेषांक

वैज्ञानिक

वैज्ञानिक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के सौजन्य से प्रकाशित

अग्नि-5 भारत की पहली अंर्तमहाद्वीपीय बैलिस्टिक मिसाइल है और यह भारत सरकार के रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है

www.OfficialKalam.com

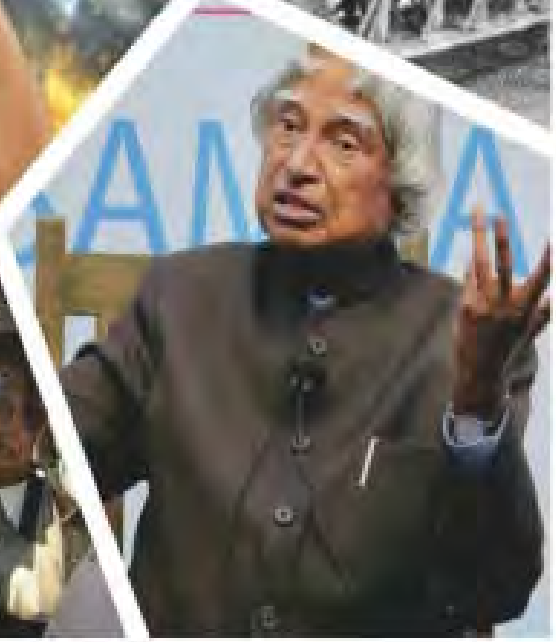

है कलाम

है साधु रूप अब्दुल कलाम.
तुमको सलाम तुमको सलाम.

तुम भारत मां के दूत बने,
ऋण चुकता किया पूत बने.
देश प्रेम निभाया तुमने.
असत्य रहा तुमको हराम,
है साधु रूप अब्दुल कलाम.
तुमको सलाम तुमको सलाम.

जब कलियुग रूपी हो रावण
दुर्योधन करता चीर हरण
ऐसे युग में तुम निश्छल थे
कर डाले अनगित महाकाम
है साधु रूप अब्दुल कलाम.
तुमको सलाम तुमको सलाम.

तुम जैसे मानव कभी नहीं
इस धरती से मिट सकते है,
तुम बसे रहोगे हृदय सदा
दे के प्रेरणा सूरज समान.
है साधु रूप अब्दुल कलाम.
तुमको सलाम तुमको सलाम.

- विपुल लखनवी

वैज्ञानिक

वर्ष - 47 अंक - 1–4

जनवरी- दिसंबर 2015

सम्पादक व व्यवस्थापक

श्री. विपुल सेन

सम्पादन मंडल

डॉ.कुलवंत सिंह
श्री.मनीष कुमार
श्री.सत्यवान बंसल
श्री.कवींद्र पाठक

♦ व्यवस्थापन मंडल ♦

श्री पी.एम.गांधी
श्री डी.एन.सिंह
श्री संजय गोस्वामी
श्री. अनिल अहिरवार
श्री. मुकेश गोयल

सदस्यता शुल्क आजीवन

व्यक्तिगत	: 400
संस्थागत	: 1000

भुगतान हेतु स्टेट बैंक आफ इंडिया खाता संख्या : 34185847362 IFCS code : SBIN: 0001268
कृते : 'वैज्ञानिक, हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद'
Pay to : Vaigyanik, Hindi Vigyan Sahitya Parishad
कृपया सदस्यता हेतु ई-भुगतान की रसीद अथवा चेक भुगतान अपने पूरे पते के साथ व्यवस्थापक के पते पर भेजें।

कार्यालय

'वैज्ञानिक', हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद,
सूचना प्रभाग, सेंट्रल कांप्लेक्स,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई-400 085

सभी पद अवैतनिक हैं

'वैज्ञानिक' में छपे लेखों का दायित्व लेखकों का है.

मूल्य : 20 रुपये

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय - 3

लेख

1. इतिहास बनाकर इतिहास हो गये : डॉ.कलाम
   प्राची कनुश्री - 5
2. 'नवाचार, अनुसंधान तथा चिकित्सकीय पेशे का समावेश'
   श्री घनश्याम तिवारी - 10
3. रेडियो रासायनिक सयंत्र में रासायनिक/ज्वलनशील सामग्री...
   एच.मिश्रा - 16
4. आभामण्डल का विज्ञान
   अनुज श्रीवास्तव - 20
5. क्या भूकंप की भविष्यवाणी संभव है ?
   राजेश कुमार मिश्रा - 23
6. बौने वृक्षों का दिलचस्प सफरनामा
   त्रिलोक सिंह वर्मा - 25
7. दिव्य मशरूम - गेनोडर्मा
   डा.सविता गुप्ता - 29
8. लुपस से लड़ने में लाईफ की मदद
   मनिषा पटवर्धन - 39
9. महानगरों की पर्यावरण समस्याएं और निदान
   श्री विपुल सेन - 42
10. मरूयुद्ध कौशल और वानस्पतिक छद्मावरण का विज्ञान
    प्रोफेसर (डॉ.) सुशीला राय - 45
11. सोयाबीन का औषधीय महत्त्व
    डॉ हेमलता पंत - 54
12. इबोला के लपेट में पश्चिम अफ्रीका : कुछ वैज्ञानिक तथ्य
    राघव शैलेंद्र कुमार सिंह - 57
13. मूत्र संक्रमण के प्रकार और उपचार
    डॉ.दया शंकर त्रिपाठी - 66
14. शहतुत- एक बहुपयोगी फल वृक्ष
    डॉ.नवीन कुमार बोहरा - 70
15. पर्यावरण संरक्षण- उम्मीद महिलाओं से - 73

विज्ञान समाचार प्रस्तुति : संजय गोस्वामी - 74

1. मिलते-जुलते ग्रह
2. गैनीमेडे में जीवन की संभावना

टिप्पणियां प्रस्तुति : पूनम सेन - 76

1. आलू से बिजली
2. लैपटॉप की बेकार बैटरी से जलेगा बल्ब
3. सोना है आपका मोबाइल
4. ई-कचरे में सोना
5. दूर नहीं उड़ती कारों का सपना
6. विमान भी तो ड्रोन है
7. हैकर्स से ख़तरा

वैज्ञानिक राजभाषा वर्ग पहेली -2 - 81
वैज्ञानिक राजभाषा वर्ग पहेली -1 का हल - 82
डा.होमी भाभा हिन्दी विज्ञान लेख प्रतियोगिता 2014 के परिणाम - 83

सम्पादकीय

कलाम को सलाम .....

हमारे देश के लिये वर्ष 2015 वैज्ञानिकी के क्षेत्र में काफी हलचलों वाला रहा. जहां एक तरफ भारतीय वैज्ञानिकों ने विशेषतयः इसरो ने मंगलयान के सफल प्रक्षेपण के लगभग एक वर्ष बाद 29 सितंबर 2015 को एस्ट्रोसैट के रूप में भारत की पहली अंतरिक्ष वेधशाला को स्थापित किया. वहीं देश के विज्ञान और तकनीकी विभाग ने देश का पहला गायरोट्रॉन विकसित करने में सफलता प्राप्त की. सामरिक क्षेत्र में उपयोगी एकॉस्टिक न्यूक्लियर वेब नामक पहचान पद्धति को भारतीय सेना को सुपुर्द किया गया. चिकित्सा के क्षेत्र में मधुमेह को नियंत्रित करनेवाली आयुर्वेदिक हर्बल औषधि विकसित हुई जिसे आयुष के माध्यम से लोक सेवा में समर्पित किया गया. इतना ही नहीं कृषि के क्षेत्र में भारतीय वैज्ञानिकों ने नई ऊंचाई प्राप्त की. लेकिन वहीं दूसरी ओर भारत के मिसाइलमैन अबुल पाकिर जैनुल्लाबदीन अब्दुल कलाम का आकस्मिक निधन जैसा एक बड़ा झटका भी लगा.

देश के युवाओं और बच्चों के प्रेरणास्रोत डॉ कलाम का जीवन किसी सन्यासी से कम नहीं था. अंतिम सांस तक देश के उत्थान हेतु युवाओं को प्रेरणा देते रहने का शायद एकमात्र उदाहरण डॉ. कलाम 27 जुलाई 2015 की शाम भारतीय प्रबंधन संस्थान शिलॉंग में 'रहने योग्य ग्रह' पर जब एक व्याख्यान दे रहे थे तब उन्हें जोरदार दिल का दौरा पड़ा और वे बेहोश हो कर गिर पड़े. गंभीर हालत में उन्हें बेथानी अस्पताल में आईसीयू

में ले जाया गया और दो घंटे के बाद इनकी मृत्यु की पुष्टि कर दी गई. अस्पताल के सीईओ जॉन साइलो ने बताया कि जब कलाम को अस्पताल लाया गया, तब उनकी नब्ज और ब्लड प्रेशर साथ छोड़ चुके थे. अपने निधन से लगभग 9 घण्टे पहले ही उन्होंने ट्वीट करके बताया था कि वह भारतीय प्रबन्धन संस्थान शिलौंग में लेक्चर के लिए जा रहे हैं.

देश के एकमात्र और पहले वैज्ञानिक जो भारत के राष्ट्रपति और भारत रत्न बने और जो राष्ट्र के उच्च पद ग्रहण करने के बाद भी लोकसंपर्क के जरिये लोक शिक्षण के प्रति जीवन भर समर्पित रहे. अवकाश ग्रहण के बाद भी उन्होंने सक्रियता बरकरार रखी. ऐसे महान विज्ञानी डॉ कलाम की स्मृति को नमन करते हुए यह अंक हम उन्हें समर्पित कर रहे हैं. साथ ही हमने इसमें आभा मंडल का विज्ञान, भूकम्प, लूपस और इबोला जैसे रोगों की खोजपूर्ण जानकारी और मरुयुद्ध कौशल तकनीक सहित कई प्रकार के आलेखों को संजोया है. इस अंक में नियमित स्तम्भ 'विज्ञान समाचार', 'टिपण्णी' और 'वैज्ञानिक राजभाषा वर्ग पहेली' का भी प्रकाशन कर रहे है. प्रस्तुत अंक के बारे में आपकी प्रतिक्रियाओं और सुझावों का हमें इन्तजार रहेगा. आशा है कि यह अंक डॉ. कलाम सहित विज्ञान का यादगार अंक साबित होगा.

वैज्ञानिक

स्मृति-शेष

इतिहास बनाकर इतिहास हो गये : डॉ कलाम

प्राची कनुश्री,
डी.आर.डी.ओ.बंगलौर

समुद्र के किनारे बसे रामेश्वरम तमिलनाडु के प्राकृतिक सौन्दर्य के बीच 'डॉक्टर अबुल पाकिर जैनुल्लाबदीन अब्दुल कलाम' का जन्म 15 अक्टूबर 1931 को धनुषकोड़ी गांव में मस्जिद मार्ग पर स्थित घर में हुआ. द्वीप जैसा छोटा सा शहर प्राकृतिक छटा से भरपूर था. शायद इसीलिए अब्दुल कलाम जी का प्रकृति से बहुत जुड़ाव रहा है. 1964 में 33 वर्ष की उम्र में डॉक्टर अब्दुल कलाम ने जल की भयानक विनाशलीला देखी और जल की शक्ति का वास्तविक अनुमान लगाया. चक्रवाती तूफान में पायबन पुल और यात्रियों से भरी एक रेलगाड़ी के साथ-साथ अब्दुल कलाम का पुश्तैनी गाँव भी बह गया था. जब वह मात्र 19 वर्ष के थे, तब द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका को भी महसूस किया. युद्ध का दावानल रामेश्वरम के द्वार तक पहुँचा था. इन परिस्थितियों में भोजन सहित सभी आवश्यक वस्तुओं का अभाव हो गया था.

इनके पिता नाविक 'जैनुल्लाब्दीन' न तो ज्यादा पढ़े-लिखे थे, न ही पैसे वाले थे, जो मछुआरों को नाव किराये पर दिया करते थे. इनके माता पिता पक्के नमाजी और नेक दिल थे. डॉ. कलाम ने अपनी आरंभिक शिक्षा जारी रखने के लिए अख़बार वितरित करने का कार्य भी किया था. डॉ कलाम स्वयं पाँच भाई एवं पाँच बहन थे और घर में भी तीन परिवार रहा करते थे. प्रेम, दया और स्नेह की प्रतिमूर्ति इनकी माता ने 92 वर्ष की उम्र पाई.

डॉ. अब्दुल कलाम जब आठ- नौ साल के थे, तब से सुबह चार बजे उठते थे और स्नान करने के बाद गणित के अध्यापक स्वामीयर के पास गणित पढ़ने चले जाते थे. स्वामीयर की यह विशेषता थी कि जो विद्यार्थी स्नान करके नहीं आता था, वह उसे नहीं पढ़ाते थे. स्वामीयर एक अनोखे अध्यापक थे और पाँच विद्यार्थियों को प्रतिवर्ष निःशुल्क ट्यूशन पढ़ाते थे. इनकी माता इन्हें उठाकर स्नान कराती थीं और नाश्ता करवाकर ट्यूशन पढ़ने भेज देती थीं. अब्दुल कलाम ट्यूशन पढ़कर साढ़े पाँच बजे वापस आते थे. उसके

अपने परिवार के साथ बालक कलाम

बाद अपने पिता के साथ नमाज़ पढ़ते थे, फिर क़ुरान शरीफ़ का अध्ययन करने के लिए वह अरेबिक स्कूल (मदरसा) चले जाते थे. इसके पश्चात अब्दुल कलाम रामेश्वरम के रेलवे स्टेशन और बस अड्डे पर जाकर समाचार पत्र एकत्र करते थे. इस प्रकार इन्हें तीन किलोमीटर जाना पड़ता था. उन दिनों धनुषकोड़ी से मेल ट्रेन गुज़रती थी, लेकिन वहाँ उसका ठहराव नहीं होता था. चलती ट्रेन से ही अख़बार के बण्डल रेलवे स्टेशन पर फेंक दिए जाते थे. अब्दुल कलाम अख़बार लेने के बाद रामेश्वरम शहर की सड़कों पर दौड़-दौड़कर सबसे पहले उसका वितरण करते थे. अब्दुल कलाम अपने भाइयों में छोटे थे, दूसरे घर के लिए थोड़ी कमाई भी कर लेते थे, इसलिए इनकी मां का प्यार इन पर कुछ ज़्यादा ही था. अब्दुल कलाम अख़बार वितरण का कार्य करके प्रतिदिन प्रातः 8 बजे घर लौट आते थे. इनकी माता अन्य बच्चों की तुलना में इन्हें अच्छा नाश्ता देती थीं, क्योंकि यह पढ़ाई और धनार्जन दोनों कार्य कर रहे थे. शाम को स्कूल से लौटने के बाद यह पुनः रामेश्वरम जाते थे ताकि ग्राहकों से बकाया पैसा प्राप्त कर सकें. इस प्रकार वह एक किशोर के रूप में भाग-दौड़ करते हुए पढ़ाई और धनार्जन कर रहे थे.

अध्यापकों के संबंध में अब्दुल कलाम काफ़ी खुशक़िस्मत थे. इन्हें शिक्षण काल में सदैव दो-एक अध्यापक ऐसे प्राप्त हुए, जो योग्य थे और उनकी कृपा भी इन पर रही. यह समय 1936 से 1957 के मध्य का था. ऐसे में इन्हें अनुभव हुआ कि वह अपने अध्यापकों द्वारा आगे बढ़ रहे हैं. अध्यापक की प्रतिष्ठा और सार्थकता अब्दुल कलाम के शब्दों में प्रस्तुत है:-

यह 1936 का वर्ष था. मुझे याद है कि पाँच वर्ष कि अवस्था में रामेश्वरम के पंचायत प्राथमिक स्कूल में मेरा दीक्षा-संस्कार हुआ था. तब मेरे एक शिक्षक 'मुत्थु अय्यर' मेरे ओर विशेष ध्यान देते थे क्योंकि मैं कक्षा में अपने कार्य में बहुत अच्छा था. वह मुझसे बहुत प्रभावित थे. एक दिन वह मेरे घर आए और मेरे पिता से कहा कि मैं पढ़ाई में बहुत अच्छा हूँ. यह सुनकर मेरे घर के सभी लोग बहुत खुश हुए और मेरी पसंद की मिठाई मुझे खिलाई. एक विशिष्ट घटना जिसे मैं कभी नहीं भूल सकता, वह थी- कक्षा में 'प्रथम स्थान' प्राप्त करने की. एक बार मैं स्कूल नहीं जा सका तो मुत्थु जी मेरे घर आए और उन्होंने पिताजी से पूछा कि कोई समस्या तो नहीं है और मैं आज स्कूल क्यों नहीं आया? साथ ही उन्होंने यह भी पूछा कि क्या वह कोई सहायता कर सकते हैं? उस दिन मुझे ज्वर हो गया था. तब मुत्थु जी ने मेरी हस्तलिपि के बारे में इंगित किया जो काफ़ी ख़राब थी. उन्होंने मुझे तीन पृष्ठ प्रतिदिन अभ्यास करने का निर्देश दिया. उन्होंने मेरे पिताजी से कहा कि मैं प्रतिदिन यह अभ्यास करूँ. मैंने यह अभ्यास नियमित रूप से किया. मुत्थु जी के कार्यों को देखते हुए बाद में मेरे पिताजी ने कहा था कि वह एक अच्छे व्यक्ति ही नहीं बल्कि हमारे परिवार के भी अच्छे मित्र हैं.'

अब्दुल कलाम 'एयरोस्पेस टेक्नोलॉजी' में आए, तो इसके पीछे इनके पाँचवीं कक्षा के अध्यापक 'सुब्रहमण्यम अय्यर'

विक्रम साराभाई के साथ

की प्रेरणा ज़रूर थी. वह हमारे स्कूल के अच्छे शिक्षकों में से एक थे. एक बार उन्होंने कक्षा में बताया कि पक्षी कैसे उड़ता है? मैं यह नहीं समझ पाया था, इस कारण मैंने इंकार कर दिया था। तब उन्होंने कक्षा के अन्य बच्चों से पूछा तो उन्होंने भी अधिकांशतः इंकार ही किया, लेकिन इस उत्तर से अय्यर जी विचलित नहीं हुए. अगले दिन अय्यर जी इस संदर्भ में हमें समुद्र के किनारे ले गए. उस प्राकृतिक दृश्य में कई प्रकार के पक्षी थे, जो सागर के किनारे उतर रहे थे और उड़ रहे थे। तत्पश्चात उन्होंने समुद्री पक्षियों को दिखाया, जो 10-20 के झुण्ड में उड़ रहे थे. उन्होंने समुद्र के किनारे मौजूद पक्षियों के उड़ने के संबंध में प्रत्येक क्रिया को साक्षात अनुभव के आधार पर समझाया. हमने भी बड़ी बारीकी से पक्षियों के शरीर की बनावट के साथ उनके उड़ने का ढंग भी देखा. इस प्रकार हमने व्यावहारिक प्रयोग के माध्यम से यह सीखा कि पक्षी किस प्रकार उड़ पाने में सफल होता है. इसी कारण हमारे यह अध्यापक महान थे. वह चाहते तो हमें मौखिक रूप से समझाकर ही अपने कर्तव्य की इतिश्री कर सकते थे लेकिन उन्होंने हमें व्यावहारिक उदाहरण के माध्यम से समझाया और कक्षा के हम सभी बच्चे समझ भी गए. मेरे लिए यह मात्र पक्षी की उड़ान तक की ही बात नहीं थी. पक्षी की वह उड़ान मुझमें समा गई थी. मुझे महसूस होता था कि मैं रामेश्वरम के समुद्र तट पर हूँ. उस दिन के बाद मैंने सोच लिया था कि मेरी शिक्षा किसी न किसी प्रकार के उड़ान से संबंधित होगी. उस समय तक मैं नहीं समझा था कि मैं 'उड़ान विज्ञान' की दिशा में अग्रसर होने वाला हूँ. वैसे उस घटना ने मुझे प्रेरणा दी थी कि मैं अपनी ज़िंदगी का कोई लक्ष्य निर्धारित करूँ. उसी समय मैंने तय कर लिया था कि उड़ान में करियर बनाऊँगा.

एक दिन मैंने अपने अध्यापक 'श्री सिवा सुब्रहमण्यम अय्यर' से पूछा कि श्रीमान! मुझे यह बताएं कि मेरी आगे की उन्नति उड़ान से संबंधित रहते हुए कैसे हो सकती है? तब उन्होंने धैर्यपूर्वक जवाब दिया कि मैं पहले आठवीं कक्षा उत्तीर्ण करूँ, फिर हाई स्कूल। तत्पश्चात कॉलेज में मुझे उड़ान से संबंधित शिक्षा का अवसर प्राप्त हो सकता है. यदि मैं ऐसा करता हूँ तो उड़ान विज्ञान के साथ जुड़ सकता हूँ. इन सब बातों ने मुझे जीवन के लिए एक मंज़िल और उद्देश्य भी प्रदान किया. जब मैं कॉलेज गया तो मैंने भौतिक विज्ञान विषय लिया. जब मैं अभियांत्रिकी की शिक्षा के लिए 'मद्रास इंस्टीट्यूट ऑफ़ टेक्नोलॉजी' में गया तो मैंने एयरोनॉटिकल इंजीनियरिंग का चुनाव किया. इस प्रकार मेरी ज़िन्दगी एक 'रॉकेट इंजीनियर', 'एयरोस्पेस इंजीनियर' और 'तकनीकी कर्मी' और उन्मुख हुई. वह एक घटना जिसके बारे में मेरे अध्यापक ने मुझे प्रत्यक्ष उदाहरण से समझाया था, मेरे जीवन का महत्त्वपूर्ण बिन्दु बन गई और अंततः मैंने अपने व्यवसाय का चुनाव भी कर लिया.

अब मैं अपने गणित के अध्यापक 'प्रोफेसर दोदाद्री आयंगर' के विषय में चर्चा करना चाहूँगा. विज्ञान के छात्र के रूप में मुझे 'सेंट जोसेफ कॉलेज' में देवता के समान एक व्यक्ति को प्रति सुबह देखने का अवसर प्राप्त होता था, जो विद्यार्थियों को गणित पढ़ाया करते थे. बाद में मुझे उनसे गणित पढ़ने

का अवसर प्राप्त हुआ. उन्होंने मेरी प्रतिभा को बहुत हद तक निखारा. मैंने उनकी कक्षा में आधुनिक बीजगणित, सांख्यिकी और कॉम्पलेक्स वेरिएबल्स का अध्ययन किया. 1952 में इन्होंने एक अद्वितीय व्याख्यान दिया, जो भारत के प्राचीन गणितज्ञों एवं खगोलविज्ञों के संबंध में था. इस व्याख्यान में इन्होंने भारत के चार गणितज्ञों एवं खगोलविदों के बारे में बताया था, जो इस प्रकार थे- आर्यभट्ट, श्रीनिवास रामानुजन, ब्रह्मगुप्त और भास्कराचार्य.

इसके अलावा एम.आई.टी. प्रोफेसर श्रीनिवास' (जो डायरेक्टर भी थे) का भी काफ़ी योगदान रहा अब्दुल कलाम की प्रतिभा निखारने में. इनके विषय में अब्दुल कलाम ने कहा था:- शिक्षक को एक प्रशिक्षक भी होना चाहिए- प्रोफेसर श्रीनिवासन की भाँति.'

वे 1962 में वे 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन' में आये. डॉक्टर अब्दुल कलाम को प्रोजेक्ट डायरेक्टर के रूप में भारत का पहला स्वदेशी उपग्रह (एस.एल.वी. तृतीय) प्रक्षेपास्त्र बनाने का श्रेय हासिल है. जुलाई 1980 में इन्होंने रोहिणी उपग्रह को पृथ्वी की कक्षा के निकट स्थापित किया था. इस प्रकार भारत भी 'अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष क्लब' का सदस्य बन गया. 'इसरो लॉन्च व्हीकल प्रोग्राम' को परवान चढ़ाने का श्रेय भी इन्हें प्रदान किया जाता है. डॉक्टर कलाम ने स्वदेशी लक्ष्य भेदी (गाइडेड मिसाइल्स) को डिज़ाइन किया. इन्होंने अग्नि एवं पृथ्वी जैसी मिसाइल्स को स्वदेशी तकनीक से बनाया था. डॉक्टर कलाम जुलाई 1992 से दिसम्बर 1999 तक रक्षा मंत्री के 'विज्ञान सलाहकार' तथा 'सुरक्षा शोध और विकास विभाग' के सचिव थे. उन्होंने स्ट्रेटेजिक मिसाइल्स सिस्टम का उपयोग आग्नेयास्त्रों के रूप में किया. इसी प्रकार पोखरण में दूसरी बार न्यूक्लियर विस्फोट भी परमाणु ऊर्जा के साथ मिलाकर किया. इस तरह भारत ने परमाणु हथियार के निर्माण की क्षमता प्राप्त करने में सफलता अर्जित की. डॉक्टर कलाम ने भारत के विकास स्तर को 2020 तक विज्ञान के क्षेत्र में अत्याधुनिक करने के लिए एक विशिष्ट सोच प्रदान की. यह भारत सरकार के 'मुख्य वैज्ञानिक सलाहकार' भी रहे.

फरवरी 1982 में डॉ. अब्दुल कलाम को डी.आर.डी.एल का निदेशक नियुक्त किया गया, संयोगवश लेखक के बड़े भाई डा अतुल सेन उन दिनों आई आई टी कानपुर से भौतिकी में पी.एच.डी कर रहे थे. उसी समय डा सेन का साक्षात्कार पत्र डी.आर.डी.एल से आया. ट्रेन लेट होने की वजह से डॉ सेन जब साक्षात्कार कक्ष में पहुंचे तो साक्षात्कार समाप्त हुए

दो घंटे हो चुके थे. घबराए डॉ सेन ने डॉ कलाम से मुलाकात की. तब डॉ कलाम ने पुनः सबको बुलाकर साक्षात्कार कराया और डॉ सेन का चयन डॉ कलाम के अधीन हो गया. डॉ अतुल सेन के शब्दों में 'पूजने योग्य शांत, गम्भीर, नेक दिल और ज्ञानी शायद ही दुबारा जन्म ले.'

डॉक्टर अब्दुल कलाम राजनीतिक क्षेत्र के व्यक्ति नहीं हैं लेकिन राष्ट्रवादी सोच और राष्ट्रपति बनने के बाद भारत की कल्याण संबंधी नीतियों के कारण इन्हें कुछ हद तक राजनीतिक दृष्टि से सम्पन्न माना जा सकता है. इन्होंने अपनी पुस्तक 'इण्डिया 2020' में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया है. यह भारत को अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में दुनिया का सिरमौर राष्ट्र बनते देखना चाहते हैं और इसके लिए इनके पास एक कार्य योजना भी है. परमाणु हथियारों के क्षेत्र में यह भारत को सुपर पॉवर बनाने की बात सोचते रहे हैं. वह विज्ञान के अन्य क्षेत्रों में भी तकनीकी विकास चाहते हैं. डॉक्टर कलाम का कहना है कि 'सॉफ्टवेयर' का क्षेत्र सभी वर्जनाओं से मुक्त होना चाहिए ताकि अधिकाधिक लोग इसकी उपयोगिता से लाभांवित हो सकें. ऐसे में सूचना तकनीक का तीव्र गति से विकास हो सकेगा. वैसे इनके विचार शांति और हथियारों को लेकर विवादास्पद हैं. इस

संबंध में इन्होंने कहा है- 2000 वर्षों के इतिहास में भारत पर 600 वर्षों तक अन्य लोगों ने शासन किया है. यदि आप विकास चाहते हैं तो देश में शांति की स्थिति होना आवश्यक है और शांति की स्थापना शक्ति से होती है. इसी कारण मिसाइलों को विकसित किया गया ताकि देश शक्ति सम्पन्न हो.

पूर्णतः शाकाहारी डॉक्टर अब्दुल कलाम भारत के ग्यारहवें राष्ट्रपति निर्वाचित हुए थे. वे मदिरापान से बिलकुल परहेज करते हैं.

इतने महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के बारे में कुछ भी कहना सरल नहीं है. वेशभूषा, बोलचाल के लहजे, अच्छे-खासे सरकारी आवास को छोड़कर हॉस्टल का सादगीपूर्ण जीवन, ये बातें उनके संपर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति पर एक सम्मोहक प्रभाव छोड़ती हैं. डॉ. कलाम एक बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी हैं. विज्ञान, प्रौद्योगिकी, देश के विकास और युवा मस्तिष्कों को प्रज्ज्वलित करने में अपनी तल्लीनता के साथ साथ वे पर्यावरण की चिंता भी खूब करते हैं, साहित्य में रुचि रखते हैं, कविता लिखते हैं, वीणा बजाते हैं, तथा अध्यात्म से बहुत गहरे जुड़े हुए हैं. डॉ. कलाम में अपने काम के प्रति जबर्दस्त दीवानगी है. उनके लिए कोई भी समय काम का समय होता है. वह अपना अधिकांश समय कार्यालय में बिताते हैं. देर शाम तक विभिन्न कार्यक्रमों में डॉ. कलाम की सक्रियता तथा स्फूर्ति काबिले तारीफ है. ऊर्जा का ऐसा प्रवाह केवल गहरी प्रतिबद्धता तथा समर्पण से ही हो सकता है. उनका निजी जीवन अनुकरणीय है.

दुखद समाचार

सोमवार 27 जुलाई, 2015

पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम का निधन

पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम का 83 वर्ष की अवस्था में 27 जुलाई, 2015 सोमवार को निधन हो गया. कलाम आईआईएम शिलांग में भाषण दे रहे थे. इसी वक्त उनकी तबीयत बिगड़ गई. कलाम का निधन अस्पताल ले जाते समय रास्ते में हुआ. कलाम के निधन का समाचार पाकर पूरे देश में शोक की लहर दौड़ गई. 'मिसाइल मैन' के नाम से मशहूर अब्दुल कलाम ने सोमवार सुबह 11.30 बजे आखिरी ट्वीट किया था, 'शिलॉन्ग जा रहा हूं, लिवेबल प्लेनेट अर्थ पर आईआईएम में एक कार्यक्रम में भाग लेने.' उनका भारत की मिसाइल टेक्नोलॉजी में अहम योगदान था और वे पोलर सैटेलाइट लॉन्च व्हीकल के जनक माने जाते हैं. एरोनॉटिकल इंजीनियरिंग करने के बाद उन्होंने 1969 में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन ज्वॉइन किया. उन्हें 1997 में भारत रत्न से नवाज़ा गया.

श्रद्धांजलि

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने ट्विटर पर अपने शोक संदेश में कहा कि भारत एक महान वैज्ञानिक, अद्भुत राष्ट्रपति और एक प्रेरणादायक व्यक्ति की मृत्यु पर शोक प्रकट करता है.

संगीतकार ए.आर.रहमान ने उनके निधन पर कहा, 'डॉक्टर कलाम, जब आप राष्ट्रपति बने तो आपने भारतीयों को 'उम्मीद' शब्द के नए मायने दिए.'

आरबीआई गवर्नर रघुराम राजन ने ट्वीट किया- 'महान लोगों के महान सपने हमेशा आगे पहुंचते हैं. एपीजे अब्दुल कलाम को श्रद्धांजलि.'

'नवाचार, अनुसंधान तथा चिकित्सकीय पेशे का समावेश'

'भूत को घोषित करो, वर्तमान का निदान करो एंव भविष्य की पूर्व घोषणा करो.'

30 जनवरी 2014 को 47 वें यूरोलॉजी सोसायटी ऑफ इंडिया के वार्षिक अधिवेशन में भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ.ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के उद्घाटन भाषण का हिंदी अनुवाद

मित्रों, मुझे भारतीय यूरोलॉजी सोसायटी के 47 वें वार्षिक सम्मेलन में भाग लेने में बहुत प्रसन्नता है. यह सोसायटी विभिन्न स्थूल एंव उप-विशेषज्ञताओं जिसमें वृक्क प्रत्यारोपण भी सम्मिलित हैं, का प्रतिनिधित्व करती है. मेरा उन सभी विशेषज्ञों को अभिवादन करता हूं जो इस वार्षिक बैठक में भाग ले रहे हैं. जैसा कि आप सभी जानते

है कि यूरोलॉजी शल्य कौशल में सूक्ष्मता तथा दक्षता का प्रतिनिधित्व करती है. आज यहां एकत्रित समूह शल्य चिकित्सा में सर्वोत्कृष्ट दिमाग तथा कौशल का प्रतिनिधित्व करता है.

कल रात को मैं अपने मित्र डॉ.सुहास देसाई जो कि कैन्टकी, संयुक्त राज्य अमरीका में यूरोलॉजी के पेशे में कार्यरत हैं, से बात कर रहा था. मैंने उनसे पूछा था कि मैं भारत के यूरोलॉजी विशेषज्ञों को आज क्या संदेश दूं? डॉ.देसाई ने मुझे न्यूनतम क्षति वाली प्रक्रियाएं जिनमें प्रतिरक्षा चिकित्सा का प्रयोग किया जाता है और वृद्धि गुणक संदमन के प्रयोग ने यूरोलॉजी रोगों के उपचार में नई क्रांति ला दी है, के बारे में बताया है, पोजीट्रॉन उत्सर्जन टोमोग्राफी (पी.ई.टी.) स्कैन और अर्बुद (ट्यूमर) को पहचानने वाली तकनीकें यूरोलॉजी विशेषज्ञों को पहले मरीजों हेतु उपलब्ध नहीं थीं.

मित्रो, हाल ही में मैं सोलहवीं सदी के फ्रांसीसी शल्य चिकित्सक एम्ब्रोइज पारे द्वारा लिखी गई पुस्तक 'आन मोनस्टर्स एण्ड मार्वेल' पढ़ रहा था. उन्होंने लिखा है कि शल्य कर्म करने का अर्थ है, उसको निकालना जो कि अतिरिक्त (अवांछनीय) है, उसको पुनः स्थापित करना जो कि विस्थापित है, उसको जोड़ना जो आपस में बंट गया है और प्रकृति द्वारा प्रदत्त विकृतियों को ठीक करना है. कितना उत्तम कार्य है जिसमें मानक उत्कृष्टता के सर्वोत्तम स्तर की आवश्यकता है. मैं भारतीय यूरोलॉजी सोसायटी के सभी सदस्यों को बधाई देता हूं जो कि चिकित्सा के क्षेत्र में सर्वोत्तम है तथा सर्वोत्तम दक्षता का प्रतिनिधित्व करते हैं.

मित्रो, चिकित्सा को सही ही पेशा कहा गया है. यह जीवन पर्यंत सीखने वाली प्रक्रिया है. हिपोक्रेटस ने कहा था जो कि बहुत प्रसिद्ध है, 'यह जानना आवश्यक है कि किस प्रकार के व्यक्ति को रोग है बजाय इसके कि किस व्यक्ति में क्या रोग है.' चिकित्सकीय पेशेवरों का चिकित्सकीय अनुभव यह बहुत हद तक सिद्ध करता है कि निदान में, पूर्व लक्षण एंव उपचार में व्यक्ति को जीवन-शैली एंव अनुवांशिकी भी रोग की जानकारी के समान जिम्मेवार है.

भारतीय यूरोलॉजी सोसायटी जैसी पेशेवर संस्थाओं की यह जिम्मेवारी है कि स्वास्थ और सामुदायिक सेवाओं की सहयोगी, नवाचार एंव दीर्घकालीन मॉडलों का विकास करें जो कि सेवा प्रदान करनेवाली संस्थाओं और व्यक्तियों, परिवारों एंव समुदाय के मध्य देखरेख हेतु एक ढांचा (फ्रेम वर्क) प्रदान करें. मैं विचार कर रहा था के आज मैं विशिष्ट चिकित्सा विशेषज्ञों को क्या संदेश दूं?

जब मैं यूरोलॉजी के विशेषज्ञों और विशिष्ट समूह के साथ हूं तो एक लेख से कुछ उद्धृत करना चाहूंगा जिसे डा.टी.ई.उडवाडिया ने लिखा है जिसे मैं सभी चिकित्सा विज्ञान के सम्मेलनों में उद्धृत करना चाहूंगा एक जो कि है एक विश्व एक मनुष्य और एक शल्य कर्म. लेख में लिखा है, गरीब से गरीब व्यक्ति को भी किसी अन्य व्यक्ति की तरह की शल्य कर्म के बाद कम वेदना, कम दवाइयों, कम विकृति, अस्पताल में कम दिन रहने, एंव अपने गृह, परिवार एंव कार्य पर शीघ्र लौटने का अधिकार है. ऐसी शल्य क्रिया जो कम अंगों को क्षति पहुंचाए एंव खर्चीली प्रौद्योगिकी जिसके बारे में कहा जाता है, नई प्रौद्योगिकी की प्रशंसा अथवा श्रद्धांजलि देने हेतु नहीं वरन जो कई प्रकार के लाभ हमारे रोगियों, एंव लोगों को नई प्रौद्योगिकी पहुंचाती है. यह विचार सभी शल्य चिकित्सकों को ध्यान में रखना चाहिए जो कि शल्य कर्म कर रहे हैं.

पिछले कुछ वर्षों में वर्तमान चिकित्सा के पहलुओं और स्वास्थ्य के संबंध में जनमानस की समझ में स्थिर और महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं. लोग नैदानिक परीक्षणों और जो दवाएं उन्हें दी जाती हैं उनके प्रतिकूल प्रभावों को संदेह की दृष्टि से देखने लगे हैं. चिकित्सा रोगियों के इलाज के लिए है और यह चिकित्सा कि संपूर्ण चिकित्सा व्यवसाय भेषजों से बिना क्षति पहुंचाए पद्धतियों एंव शल्य कर्म से आनुवांशिकी रोगी की सुरक्षा और स्थिर परिणामों की ओर घूमती है. सभी जो कि नया है अच्छा नहीं है. प्रत्येक नई औषधि जिसकी खोज की गई है एंव प्रौद्योगिकी जिसका आविष्कार किया गया है, की बुराईयां तथा अच्छाइयां दोनों होती हैं. अतः आज मैंने 'नवाचार, अनुसंधान तथा चिकित्सकीय पेशे का समावेश' पर बोलने हेतु सोचा है.

विशेषज्ञताओं का अनोखा संगम

नेफ्रोलॉजी और यूरोलॉजी परंपरा के तौर पर आपस में सहयोग करने वाले जैसे के हृदय रोग और हृदय रोग शल्य चिकित्सा जैसे क्षेत्र हैं. नेफ्रोलॉजी के विशेषज्ञ आंतरिक चिकित्सा के पहलुओं जैसे के गुर्दे का कार्य करना और रोग, इलेक्ट्रोलाइट में संतुलन का बिगड़ना, उच्च रक्त चाप, गुर्दे में पथरी और गुर्दे का कार्य न करना से संबंध रखते हैं. यूरोलॉजी के विशेषज्ञ शल्य कर्म के विशेषज्ञ होते हैं जो कि गुर्दे और यूरीनरी ट्रैक के संरचना के विकारों को शल्य कर्म द्वारा ठीक करते हैं. अतः यूरोलॉजी के विशेषज्ञों संबंध कम क्षति पहुंचाने वाली तकनीकें जो कि उसी समय में अल्ट्रासाउण्ड निर्देशित, तंतु-प्रकाश एंडोस्कोप उपकरण और विभिन्न लेजरों का कई बिना क्षति पहुंचाने वाली और कैंसर से ग्रसित

स्थितियों के इलाज में प्रयोग करते हैं. इसके अतिरिक्त उन्होंने दूरबीन के शल्य कर्म जिसमें रोबोट का प्रयोग होता है में महारत हासिल की होती है.

यूरोलॉजी के विशेषज्ञ अक्सर कैंसर रोग विशेषज्ञों, स्त्री रोग विशेषज्ञों, जठरांत्र विशेषज्ञों एवं अंतः स्त्रावी रोगों के विशेषज्ञों के साथ मिलकर कार्य करते हैं. यूरोलॉजी चिकित्सीय एवं शल्य क्रिया विशेषज्ञताओं का बेजोड़ संगम है. जैसे के पथरी का पहले प्रभाती तरंग लियोट्रिप्सी द्वारा उपचार किया जाता है.

वर्तमान में यूरोलॉजी सबसे अधिक विकास करने वाली शल्य कर्म की सुपरविशेषज्ञता है. इस क्षेत्र के द्रुतगति से आगे बढ़ने का कारण विशेषकर पिछले दशक में दोनों कारणों की वजह से जैसे कि वैज्ञानिक खोजें और निदान तथा उपचार हेतू सफलतापूर्वक अभियांत्रिकी और प्रौद्योगिकी का मिलन है.यूरोलॉजी की प्रत्येक उप विशेषज्ञता में न केवल द्रुत विकास हो रहा है वरन ऐसे विकास सतत विकसित हो रहे हैं.

भारतीय यूरोलॉजी सोसायटी अपने सदस्यों को इस बारे में मार्गदर्शी जारी करने हेतू विचार कर सकती है. मित्रों मैं चिकित्सा से संबंधित तीन मुख्य विकास क्षेत्रों पर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं. ये संकल्पनाएं पद्धतिबद्ध जैव विज्ञान जो कि भिन्न तरीके से स्वस्थ रहना, बीमारी और रोग को देखती है, पोषण-अनुवांशिकी एक्सिस जो कि बचाव पर जोर डालती है और नैनो चिकित्सा जो कि मानव शरीर के अंतर्गत प्रतिरोधक क्षमता पर आधारित है.

(1) पद्धतिबद्ध जीव विज्ञान में विकास - हाल ही में हुए इंफ्लुएंजा की महामारी में यह पाया गया है कि उचित परिस्थितियों में एक नया संक्रमण जो कि विश्व में कहीं भी पाया जाता है, कुछ दिनों अथवा सप्ताहों में कई महाद्वीपों की यात्रा करके फैल सकता है. कई ऐसे संक्रामक जो कि रोगजनक (पैथोजेन) पर्यावरण में गुमनामी का लाभ उठाते हुए पैदा होते हैं.

उच्च-मात्रा में शीघ्र संचलन केवल पर्यटन को ही इंगित नहीं करता है वरन वर्तमान सोसायटी में अन्य उद्योगों को भी दर्शाता है. संक्रियाएं जिनमें खाद्यान्न का उत्पादन होता है जिनमें जैविक मूल के उत्पादों का प्रयोग अथवा परिष्करण होता है, यद्यपि आधुनिक उत्पादन विधियां बढ़ी हुई दक्षता तथा लागत में कमी प्रदान करती हैं तथापि अकस्मात संदूषण की संभावनाओं को इसके प्रभावों को बढ़ाती हैं. इस समस्या में वैश्वीकरण के कारण और अधिक बढ़ोत्तरी होती है जिससे कि दूरस्थ स्थित एजेंटों को प्रवेश करने का अवसर मिलता है. एक रोगजनक (पैथोजन) जो कि किसी कच्चे माल में रहता है को अंतिम उत्पाद के बड़े बैच में प्रवेश करने का अवसर मिल सकता है, जैसा कि हैमबर्गर मांस को ई-कोली स्ट्रेन के द्वारा संदूषित होने का अवसर मिला था जिससे कि हीमोलायटिक यूरेमिक के लक्षण प्राप्त हुए थे. जीवविज्ञानियों ने आंकलन किया है कि जीवों की 50 से 1000 लाख प्रजातियां जो पृथ्वी पर रहती

है संरचना, जैव रसायन एवं जीन के क्रमों के आंकड़ों से स्पष्ट है कि पृथ्वी पर समस्त जीव आपस में जीन के द्वारा संबंधित हैं. कोशिका में जीन के उत्पाद जिस स्तर तक आते हैं और अपनी कार्यक्षमता को दर्शाते हैं कि नियमन अन्य जीनों के मध्य अन्योन्य क्रिया द्वारा होता है. यह आपस में अंतरसंबंध को इंगित करती है कि जीन नियमित नेटवर्कों की पहचान जीन के व्यक्तरूपी प्रभावों एवं उनसे संबंधित विकृतियों को समझने हेतु महत्वपूर्ण हैं.

(2) उच्च-संवेशप्रवाह प्रौद्योगिकियां - उच्च-संवेश प्रौद्योगिकियों जैसी कि जीनोम-के स्तर पर अनुक्रम और सूक्ष्म व्यवस्थित प्रयोगों ने प्रतिलिपिस्तर पर हमारी आणविक व्यवहार की समझने में बढ़ोत्तरी हुई है. यद्यपि ये वृहद स्तर पर आंकड़े आर.एन.ए.उपस्थिति एंव सापेक्षिक प्रचुरता के विषय में महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करते हैं. जीन में आणविक प्रक्रियाओं एंव नियमन से संबंधों को विभिन्न व्यक्तरूपी परिस्थितियों को सम्यक स्तर पर समझने की चुनौती प्रदान करते हैं.

कई रोगों जैसे कि हृदय रोग, तंत्रिका ह्रास रोग, आंतो एंव जोड़ो की बीमारियों हेतु कोशिकीय शोथ जिम्मेवार हैं. प्रत्येक शोथ की एक खास जीन के स्तर पर पहचान होती है.

पोषण-आनुवंशिकी धुरी (एक्सिस) - पिछले सप्ताह मैंने अहमदाबाद में 39वीं वार्षिक मानव आनुवंशिकी की भारतीय सोसायटी एंव अनुवांशिकी पर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन का उद्घाटन किया था. 300 से अधिक अनुवंशिक विशेषज्ञों ने विभिन्न विषयों के अतिरिक्त पोषण जैनोमिकी जो कि एक उभरती हुई शाखा है एंव मानव जेनोम, पोषण और स्वास्थ्य के संबंध पर अध्ययन करती है.

कुपोषण भारतीय जनसंख्या के लिए बहुत बड़ा मुद्दा है. यहां तक कि सोसायटी के संभ्रांत परिवारों में 30 से 50 प्रतिशत तक इलेक्ट्रोलाइट के विकारों से अस्पताल में भर्ती रहते हैं. शारीरिक जांच के कुपोषण के चिकित्सकीय प्रभाव देखने को मिल जाते हैं, परंतु गुर्दे की क्रिया में बदलाव प्रारंभिक जांच में नहीं दिखाई देते हैं.

कई रोगों जैसे कि हृदय रोग-तंत्रिका तंत्र ह्रास रोग, आंतों एंव जोड़ों की बीमारियों हेतु कोशिकीय शोथ जिम्मेवार हैं. प्रत्येक शोथ की एक खास जीन के स्तर पर पहचान होती है. जीन अभिव्यक्ति पैटर्नों में परिवर्तन जो कि शोथ की परिस्थितियों हेतु निहितार्थ हैं ने दीर्घकालीन शोथ की चिकित्सा में नए आयाम खोले हैं. मूत्राशय शोथ अथवा ब्लैडर में शोथ की कि तरुण एंव मध्यम आयु वर्ग की महिलाओं में होता है का पहले ही कारण स्पष्ट था.

भारतीय जनसंख्या में कुपोषण एक मुख्य समस्या है. सोसायटी के समृद्ध वर्गों में 30 से 50प्रतिशतता कम भी हो जाती है. ऐसे रोगी हैं जिन्हें इलैक्ट्रालाइट बीमारियों के कारण अस्पताल में भर्ती की आवश्यकता पड़ती है. कुपोषण के चिकित्सकीय लक्षण भौतिक परीक्षण के दौरान दिखाई देते हैं परंतु गुर्दे की कार्यप्रणाली में परिवर्तन शुरुआती परीक्षण के दौरान दिखाई नहीं पड़ते हैं. प्रोटीन-कैलोरी कुपोषण के चिकित्सकीय एंव प्रयोगात्मक मॉडलों में गुर्दे की हीमो-गतिकी, गुर्दे को सांद्र करने की क्षमता एंव गुर्दे से अम्ल के निष्कासन में महत्वपूर्ण परिवर्तनों की पुष्टि की है. बच्चों एंव अधेड़ में जो कि कुपोषण से ग्रस्त हैं, में वृक्क छननी दर, वृक्क प्लाज्मा बहाव है और मूत्र को सांद्र करने की तथा अम्ल के निष्कासन में कमी पाई गई है. कुपोषण के कारण वृक्क की कार्य प्रणाली में परिवर्तन को अब ठीक से समझा जा चुका है.

अभी हाल ही तक उन मरीजों पर और दिया जाता था जिन्हें कि डायलयसिस अथवा प्रत्यारोपण की आवश्यकता है. जो चिकित्सकीय विशेषज्ञ यहां उपस्थित हैं उन्हे मैं सलाह दूंगा कि वे कम गंभीरता वाली दीर्घकालीन गुर्दा बीमारी पर और अधिक ध्यान दें और ऐसे तरीकों की पहचान करें जिससे कि उन मरीजों की मॉनीटरिंग प्राथमिक चिकित्सा केंद्र में हो सके. इससे उन मरीजों की पहचान मिलेगी जो बीमारी के बाद में गंभीर हो जाती है. यह महत्वपूर्ण है चूंकि जितना जल्दी हस्तक्षेप होगा, उतना अधिक प्रभाव होगा.

(3) नैनो चिकित्सा : मित्रों, नैनों चिकित्सा एक नई अलग वैज्ञानिक विशेषज्ञता है जो के नैनो स्केल के पदार्थों का विभिन्न जैव चिकित्सा अनुप्रयोगों हेतु अनुसंधान करती है. मैंने भारत में और विदेशों में कई संस्थानों में नैनो चिकित्सा अनुसंधान तथा विकास में विशेषज्ञता प्राप्त है और उसने विस्तार में विचार-विमर्श भी किया है. स्थानान्तरीय नैनों चिकित्सा में तेजी से प्रयोगात्मक पशुओं के मूल्यांकन से चिकित्सकीय विधियां में तेजी से विकास हुआ है. भविष्य में यह आशा की जाती है के नैनो टैक्नोलॉजी यूरोलॉजी विशेषज्ञों को एक नई सोच प्रदान करेगी जिससे कि वे रोग के होने की प्रक्रिया, शीघ्र निदान हेतु विधियां,उपकरण और उपचार हेतु प्रभावी तरीके प्रदान करेगी. मैं आप लोगों के मध्य नैनो चिकित्सा के यूरोलॉजी में उभरते हुए अनुप्रयोगों की चर्चा करूंगा.

(क) कीमो-थेरा-प्यूटिक दवाइयां जिनमें नैनो कैरियर भी रखा होता है ब्लैडर कैंसर के उपचार हेतु उपयोग केवल

दवा से और दक्ष तथा विशिष्ठ तरीके प्रदान करते हैं.

(ख) अपनी उच्च गतिशीलता के कारण प्रोस्टेट कैंसर सदैव अनुसंधानकर्ताओं हेतू कौतूहल का विषय बना रहता है. ऐसे कई उदाहरण हैं जहां कैमोथेरप्यूटिक दवाइयों में नैनो कैरिअर भी रखे जाते हैं जिनका प्रोस्टेट कैंसर के उपचार में प्रयोग किया जाता है.

(ग) प्रोस्टेट कैंसर हेतू नैनो कैरिअर द्वारा तापीय चिकित्सा ऐसी संभावनाएं प्रदान करती हैं विशेषकर जहां पर की कैमोथेरेपी कारगर नहीं हैं.

(घ) एक कई संस्थानों का चरण-प्रोटीन ऊर्जा ग्लाइसेटिक प्रोटीन का चरण परीक्षण में मूत्रीय मार्ग के स्थानीय काफी बंद हुए कैंसर में चिकित्सकीय अनुक्रिया दर विषाक्तता प्रोफाइल प्रदान की है.

खतरे के कारणों की पहचान - आधुनिक चिकित्सा ने इलाज में कई चमत्कार प्रदान किए हैं. इक्कीसवीं सदी में हमें कई विकसित रोग पर विजय प्राप्त करनेवाली विधियां जैसे कि कार्यप्रणाली जेनोमिक्स, प्रोटीनमिक्स और स्टेम

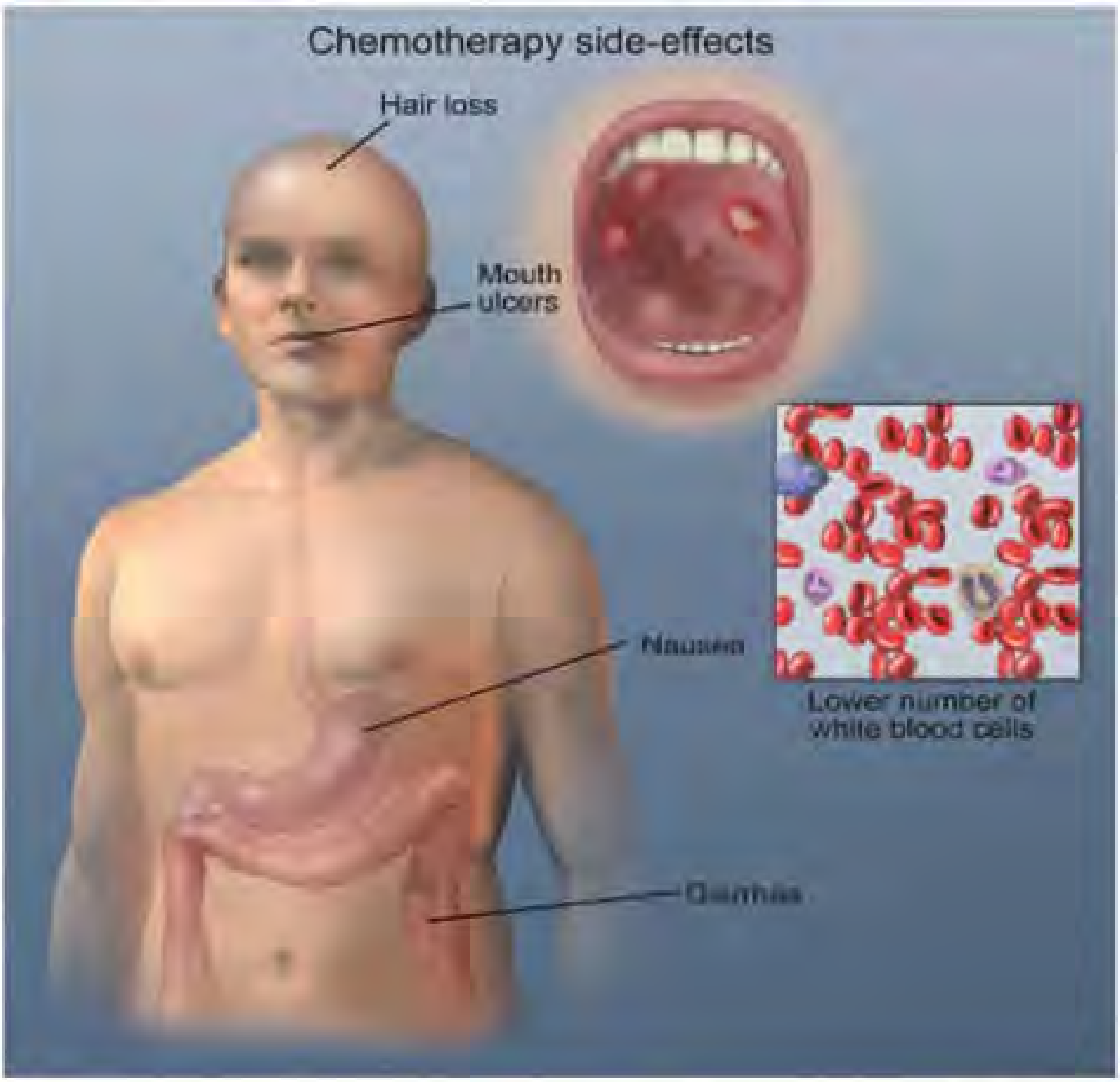

कोशिकाएं ग्रस्त हैं. चिकित्सकीय और औषधीय अनुसंधानों ने कई हजारों दवाइयां विकसित की है जिनसे कि हम पहले की अपेक्षा रोग का बेहतर इलाज कर सकते हैं और रोक सकते हैं. कई बड़े रोगों के लिए खतरे के कारणों की पहचान कर ली गई है. उदाहरण के लिए हम जानते हैं कि अधिक कोलेस्ट्रॉल और दीर्घकालीन शोथ दो मुख्य ऐसे कारण हैं जो कि हृदय रोगों के लिए जिम्मेवार है. हम यह भी जानते हैं कि टाइप-II मधुमेह के लिए मोटापा एक मुख्य कारण है. सिगरेट पीना और वायु प्रदूषण सांस के रोगों एवं फेफड़ों के कैंसर हेतु मुख्य पर्यावरणीय कारण हैं. यह दुर्भाग्य है कि कई यूरोलॉजी के रोगों हेतु विशेषिक खतरे के कारणों की पहचान की जाती है.

यूरोलॉजी के रोगों में विकासशील और कार्यप्रणाली की कमियां, फाइब्रोमिस, असाधारण कोशिकाओं का बढ़ना तथा कैंसर सम्मिलित है. इनमें से प्रत्येक प्रकार के रोगों हेतु विशेष अनुवांशिक तथा पर्यावरणीय कारण हो सकते हैं. मैं प्रस्तावित करता हूं कि यूरोलॉजी सोसायटी ऑफ इंडिया की वार्षिक बैठक ऐसे उभरते यूरोलॉजी के खतरे के कारणों पर हाल के अनुसंधान के नतीजों एवं हम आगे क्या कदम उठाएं पर विचार विमर्श करें. खतरे के कारणों को समझना आवश्यक है क्योंकि यह समय से पूर्व रोग के होने को रोकने में कामयाब होगी. खतरों का मूल्यांकन चिकित्सकीय पुर्वानुमान एवं रोग के बढ़ने की प्रक्रियाओं को समझने में सहायता प्रदान करता है.

3 जनवरी 2014 को मैं ग्लोबल हेल्थ समिट 2014 जो कि अहमदाबाद में हुई थी में 500 भारतीय मूल के चिकित्सकों से मिला था. वहां मुझे पता चला था कि गुर्दा, पौरुष, मोटा एवं मधुमेह अध्ययन (के.एन.ओ.डी.) जो कि नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ अमेरिका में रोग विज्ञान, आनुवांशिकी रोग विज्ञान की तकनीकों द्वारा मनुष्यों में गुर्दे तथा प्रोस्टेट की बीमारियों, प्रोस्टेट, जठर-आंत तथा जिगर की बीमारियों, मोटापा और उपापचयी रोगों एवं मधुमेह को रोकने हेतु एक अच्छा उदाहरण है. हमें अपनी जनसंख्या में उन बीमार व्यक्तियों की संख्या की पहचान करनी है एवं ऐसे हल ढूंढने हैं जो कि हमारे लोगों हेतु उपयुक्त हो. यह बहुत महत्वपूर्ण है कि हम उच्च उत्पादकता वाली कंप्यूटर विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के तरुण मानव संसाधनों को परामर्श दिया जाए एवं उन पर एक अच्छे परामर्श कार्यक्रम द्वारा उन पर ध्यान दिया जाए जिससे कि बाद में इन्हें जीवन शैली से संबंधित यूरोलॉजी के रोगों की समस्याएं न हों. उन कारणों को जो प्रगामी गुर्दे की क्षति पहुंचाते हैं, जैसे कि विषाक्त लिपिड के उच्च स्तरों, कैल्शियम और फॉस्फेट की गुर्दे में उपस्थिति पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए. मैं सुझाव देता हूं कि भारतीय यूरोलॉजी सोसायटी और उनके वृक्क रोग विशेषज्ञ संयुक्त रूप से इस पर सामान्य जनता हेतु लेख तैयार करें.

निष्कर्ष - मित्रों, संभावित नवाचार, अनुसंधान और चिकित्सकीय पेशा साथ चलने वाली प्रक्रियाएं हैं वे आपस में एक प्रक्रिया के बाद एक नहीं आती हैं बस साथ चलने वाली प्रक्रियाएं हैं और अक्सर एक दूसरे के रास्ते में मिलती हैं. एक नया विकास एक स्थापित प्रक्रिया को लुप्त कर देती है. एक नई अनुसंधान की उपलब्धि एक स्थापित प्रक्रिया पर प्रश्नवाचक चिन्ह लगाती है. नवाचार, अनुसंधान और चिकित्सकीय पेशे चिकित्सा के इतिहास में विकास के कारण होते हैं.

अब मैं तीन सुझाव दे कर अपना वक्तव्य समाप्त करूंगा. मैं भारतीय यूरोलॉजी सोसायटी का आवाहन करूंगा कि चिकित्सकीय परिणामों के मूल्यांकन, स्वास्थ्य से संबंधित जीवन की गुणवत्ता, यूरोलॉजी बीमारियों में संसाधनों का उपयोग और रोगी की तरजीहों का शोध करें. यह आवश्यकता है कि शीघ्र ऐसी प्रणाली के विकास की ओर ध्यान देने के स्थान पर निदान एवं उपचार मूत्र मार्ग संक्रमणों को चिकित्सकीय मूत्र नमूनों द्वारा करें. अन्त में यूरोलॉजी एक बहुत अधिक प्रौद्योगिकी तथा दक्षता पर आधारित है उन्नत शल्य और हस्तक्षेप प्रौद्योगिकी केंद्र यूरोलॉजी में स्थापित किया जा सकता है जिससे कि शल्य चिकित्सकों को जो सूदूर रहते हैं टेली-कान्फ्रेंसिंग और टेली-सर्जरी द्वारा प्रशिक्षण प्राप्त होगा.

मैं भारतीय यूरोलॉजी सोसायटी के 47वें वार्षिक सम्मेलन को शुभकामनाएं देता हूं और आशा करता हूं कि यह यूरोलॉजिकल बीमारियों तथा खतरे के कारणों पर लोगों को ज्ञान दे और उन्हें सावधानियां उनकी जीवन शैलियों में रखने के लिए प्रेरित करें जिससे कि ये बीमारियां कम हो.

अनुवादकर्ता : श्री घनश्याम तिवारी
वैज्ञानिक एफ, अपर निदेशक
राजभाषा निदेशालय
डी.आर.डी.ओ. मुख्यालय, रक्षा मंत्रालय
डी.आर.डी.ओ. भवन, राजाजी मार्ग,
नई दिल्ली-110011

रेडियो रासायनिक संयंत्र में रासायनिक/ज्वलनशील सामग्री के भंडारण में आकस्मिक निःस्सरण टैंक के फूटने का पर्यावरण पर प्रभाव

हृषीकेश मिश्रा,
सह निदेशक, ई.एस.जी.
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

परिचय : भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग ने अपने नाभिकीय कार्यक्रम की प्रारंभिक अवस्था में ही पूर्ण ईंधन चक्र अपनाने हेतु पुर्नसंसाधन और पुर्नचक्रण क्षमताओं का महत्वपूर्ण विकास किया है. विभाग में ही आज भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के अन्तर्गत ईंधन पुर्नसंसाधन संयंत्र ट्रांबे, तारापुर व कल्पक्कम में सुचारु रूप से कार्य कर रहे हैं. केंद्र पुर्नसंसाधन के अभिकल्पना, निर्माण, परीक्षण और प्रचलन इष्टतमीकरण, की विभिन्न अवस्थाओं में निपुणता हासिल कर चुका है. इसी दिशा में पुर्नसंसाधन एवं पुर्नचक्रण क्षमताओं में तीव्र विकास हेतु एक एकीकृत परमाणु रिसायकल संयंत्र की अभिकल्पना व इंजीनियरी संपूर्ण की जा चुकी है. व प्लांट का निर्माण तारापुर संस्थान में किया जा रहा है. परियोजना में ही डीजल ऑयल व कई प्रकार के अन्य रसायनों को विभिन्न प्रक्रियाओं में इस्तेमाल (उपयोग) किया जाता है व यहां सभी रसायनों को बहुमात्रा में संग्रहित किया जाएगा. इन रसायनों के आकस्मिक निःस्सरण अथवा टैंकों के फटने पर परिणामस्वरूप वातावरण पर / पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव का विश्लेषण इस लेख में प्रस्तुत है.

रासायनिक प्रभाव : LP-1 के प्रस्तावित परियोजना में, उपयोग के लिए कई प्रकार के रसायनों को संग्रहित किया जाना प्रस्तावित है. ये रसायन अधिक मात्रा में संग्रहित किए जाएंगे. इन रसायनों के आकस्मिक निःस्सरण के दौरान खतरे की संभावना को सीमित करने का भरपूर प्रयास किया है. पुर्नसंसाधन परियोजना में रसायनों के बहुमात्रा में संग्रहण की मात्राएं सामान्यतः निम्नवत होती हैं :-

नाइट्रिक एसिड	:	40 m^3
हायड्राजाइन नाइट्रेट	:	20 m^3
ट्राइ ब्यूटील फॉस्फेट	:	10 m^3
डोडेकेन	:	20 m^3
फॉर्मलडेहाइड	:	50 m^3
कॉस्टिक लाइ	:	20 m^3
डीजल ऑयल	:	50 m^3
फरनेस ऑयल	:	20 m^3

परियोजना में स्थित नाइट्रिक एसिड और डीजल ऑयल संग्रहण टैंकों के आकस्मिक रूप से फटने के परिणामस्वरूप, हेट नार्सके बैरीटास (डी एन बी) के फास्ट माइक्रो 6.53.1 सॉफ्टवेअर का प्रयोग करते हुए परिणामों का विश्लेषण किया गया है.

विश्लेषण के लिए प्रयुक्त सॉफ्टवेअर : नाइट्रिक एसिड और डीजल ऑयल संग्रहण के परिणामों का विश्लेषण करने के लिए DNV द्वारा विकसित फास्ट माइक्रो 6.53.1 का प्रयोग किया जाता रहा है. फास्ट माइक्रो सॉफ्टवेअर प्रारंभिक निःस्सरण से इसके दूरगामी प्रभावों तक संभावित घटना का परीक्षण करते हुए परिणामों का व्यापक विश्लेषण प्रदान करता है. प्रमुख खतरों की पहचान करने के बाद, फास्ट माइक्रो सॉफ्टवेअर, जोखिम वाली सामग्री के निःस्सरण से, सभी संभावित-जटिल परिणामों का पूर्वानुमान करता है. निस्सरण, परिक्षेपण ज्वलनशील, विस्फोटक और विषैले प्रभावों के लिए इसमें विभिन्न मॉडलों का व्यापक सीमाओं तक आंकलन शामिल है.

नाइट्रिक एसिड के परिणामों का विश्लेषण करने के लिए इनपुट डाटा

सामग्री	: नाइट्रिक एसिड
पात्र का प्रकार	: स्टेनलेस स्टील संवृत पात्र
निस्सरण दाब	: 2.03 bars
निस्सरण तापमान	: 103.93 C
निस्सरण के लिए सामग्री की मात्रा	: 160m³
चरण	
4 ppm (STDEL)	
टीएनओ मॉडल-फलेम तापमान	: 1727°C
वायु गति	: 2.0 m/sec
स्थायित्व श्रेणी	: B/C
पदार्थ	: तरल
event	: आकस्मिक फूट/फटन
पदार्थ-प्रकार	: जलन/विषैला
Harmful effects	: burns

मॉडल आउटपुट : फास्ट माइक्रो साफ्टवेअर के अनुसार इन इनपुट डाटा, मानक सामग्री और अन्य डाटा पर आधारित हो मॉडल चलाया गया है. नाइट्रिक एसिड संग्रहण टैंक के दुर्घटनात्मक फटन के परिणाम का विश्लेषण यह सूचित करता है कि नाइट्रिक एसिड के धुओं का घनत्व/सांद्रण 3545 सेकंड में 3.1ppm तक कम हो जाएगा और 6500 सेकंड में यह पूरी तरह से समाप्त हो जाएगा. चित्र 5.1 में अधिकतम सांद्रण फुटप्रिंट दिखाया गया है. चित्र से यह देखा जा सकता है, कि 1750 m दूरी तक 78 ppm (अधिकतम) होगा, 7.3 किलोमीटर तक 6ppm (अधिकतम) होगा, 9.2kms किलोमीटर तक 4ppm (अधिकतम) होगा. नाट्रिक एसिड का लघु अवधि उद्भासन सीमा (STEL) मूल्य 4 ppm है. अतः नाइट्रिक एसिड टैंकों के दुर्घटनात्मक फटन के दौरान हुए परिणामों को कम करने के लिए उपयुक्त संरक्षा सावधानियों की आवश्यकता होगी. नाइट्रिक एसिड टैंकों के दुर्घटनात्मक फटन के दौरान हुए परिणामों को कम करने के लिए निम्नलिखित सुरक्षा सावधानियां बरती जाएगी.

1. संयंत्र कार्मिक और लोगों द्वारा फेस मास्क का प्रयोग करना.

2. संयंत्र कार्मिक और लोगों के लिए आपातकाल के दौरान सुरक्षित स्थान पर एकत्रित व ठहरने की घोषणा करना.

अग्नि से क्षति : ज्वलनशील द्रव जैसे डीजल ऑयल-एक

चित्र 5.1

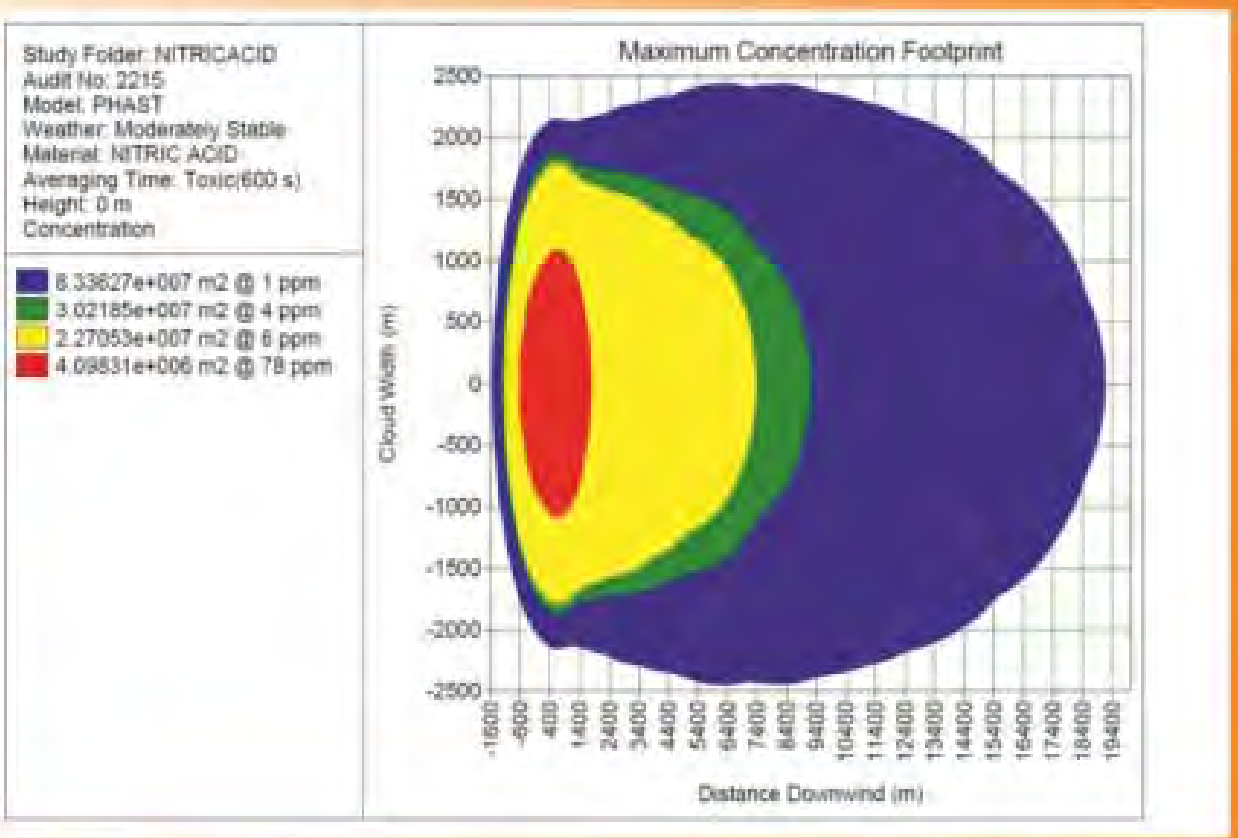

पात्र में अथवा तलाव में अधिक उग्र रूप से फैलनेवाले लौ सहित जलेगा. निस्सरित होने वाली यह उष्मा, दहन की उष्मा और डीजल ऑयल के दहन दर पर आधारित होती है. उष्मा का एक भाग किरणित होता है और शेष गर्म हवा और दाह उत्पादों के रूप में संवहनीय होता है. विकिरण ताप अपने प्रज्वलन तापमान से अधिक समीपवर्ती संग्रहण अथवा प्रोसेस यूनिट को गर्म / तप्त कर सकती है, और परिणामस्वरूप आग फैल सकती है. विकिरण ताप ऊर्जा से कुछ निश्चित दूरी तक स्थित या कार्यरत कुछ कामगारों/फायर फाइटरों के लिए गंभीर रूप से हानि फैलाने अथवा विनाश का कारण हो सकता है. अतः यह महत्वपूर्ण होगा, कि डीजल आयल संग्रहण अथवा संसाधित (प्रोसेस) पात्र के अकस्मात भंग होने अथवा रिसाव होने के कारण ज्वलनशील द्रव, पूल में संभावित क्षति को पहले ही जान लिया जाए. यह अन्य पदार्थों के संग्रहण का स्थान/कामगारों/ फायर-फाइटरों की सुरक्षा के लिए आवश्यकता के अनुसार सादा कपड़े निश्चित करने में व संसाधित पात्रों का स्थान, निर्धारण करने के लिए उपयोगी, व कपड़ों के प्रकार कितनी अवधि तक वे उस क्षेत्र में रह सकते हैं, आग बुझाने के आवश्यक उपाय और समीपस्त संग्रहण/संसाधित पात्रों के लिए आवश्यक संरक्षण प्रणालियों के बारे में निर्णय के लिए मदद करेगा. तालिका तापीय उपस्कर और लोगों पर क्षति का प्रभाव दर्शाता है.

इस परिसर में क्रमशः 50,50 और 20KL. क्षमता वाली तीन टंकियों को प्रस्तावित किया जाता है जो प्रस्तावित आई पी-1 परियोजना के डीज़ल ऑयल आवश्यकता की मांग को पूरा करेगा. यदि बांध के क्षेत्र में टंकी अथवा ईंधन का निस्सरण हो जाता है, जो आग पकड़ लेता है तो उस आग से आग के गोले के फैलने की संभावना हो जाती है. फायर बॉल के केस में चित्र 5.2 और 5.3 संग्रहण क्षेत्र के आसपास विकिरण के स्तर और तीव्रता को सूचित करते हैं.

उपरोक्त चित्र में यह देखा जा सकता है कि 4.5KW/M2 की विकिरण तीव्रता की अवधि यदि 20secसेकंड से अधिक हो, तो यह तकलीफदायक होता है. यद्यपि लगभग 460m की दूरी तक, छाले (जलने की पहली अवस्था) देखे जाएंगे. अधिक मात्रा में डीज़ल ऑयल भंडारण टैंक, समीपस्थ संसाधित ब्लॉक से दूर अवस्थापित किया जाना ही उचित होगा.

निष्कर्ष : परंतु परियोजना में ही प्रस्तावित डीज़ल ऑयल भण्डारण टैंक के समीप ही युटिलिटी ब्लाकस व विद्युत ब्लॉक स्थित किए जाएंगे. विद्युत ब्लाक के अंतर्गत विभिन्न ट्रांसफार्मर केबलस व अन्य संयंत्र स्थापित किया जाना है और इसी तरह से युटिलिटी ब्लाक के अंतर्गत महत्वपूर्ण मशीनस, बॉयलरस, कंप्रेसर, चिल्डवाटर प्लांट व कार्यशाला आदि स्थापित किए जाएंगे. इन सभी संयंत्र की सुरक्षा हेतु व डीज़ल ऑयल भंडारण के विपरीत प्रभाव से प्लांट की सुरक्षा करने हेतु, डीज़ल ऑयल भंडारण टैंकों को भूमिगत स्थापित करने का निर्णय लिया है. विभिन्न परमाणु बिजली घरों में भी डीज़ल भण्डारण टैंकों को भूमिगत स्थापित किया जाता है. ये प्रचलन पूर्ण तरह से सुरक्षित पाए गए है. इस तरह से

तालिका 5.2
विकिरण तीव्रताओं के कारण हुई क्षति

		तीव्र क्षति का प्रकार	
	विकिरण	उपस्कर की क्षति	लोगों को क्षति
1.	37.5	संसाधित उपस्कर की क्षति अनिश्चित रूप से	1 मिनट में 100% प्राणघातक,
2.	25.0	लकड़ी को प्रज्वलित करने के लिए न्यूनतम आवश्यक ऊर्जा बिना आग की ज्वाला के दीर्घ समय तक उद्भासन	1 मिनट में 50% प्राणघातक 10 सेकंड में बड़ी चोट
3.	4.5		यदि इसकी अवधि 20 सेकंड से अधिक है तो यह तकलीफदेह है. यद्यपि छालों की गुंजाइश नहीं है.
4.	1.6		अधिक उद्भासनों पर कोई तकलीफ नहीं

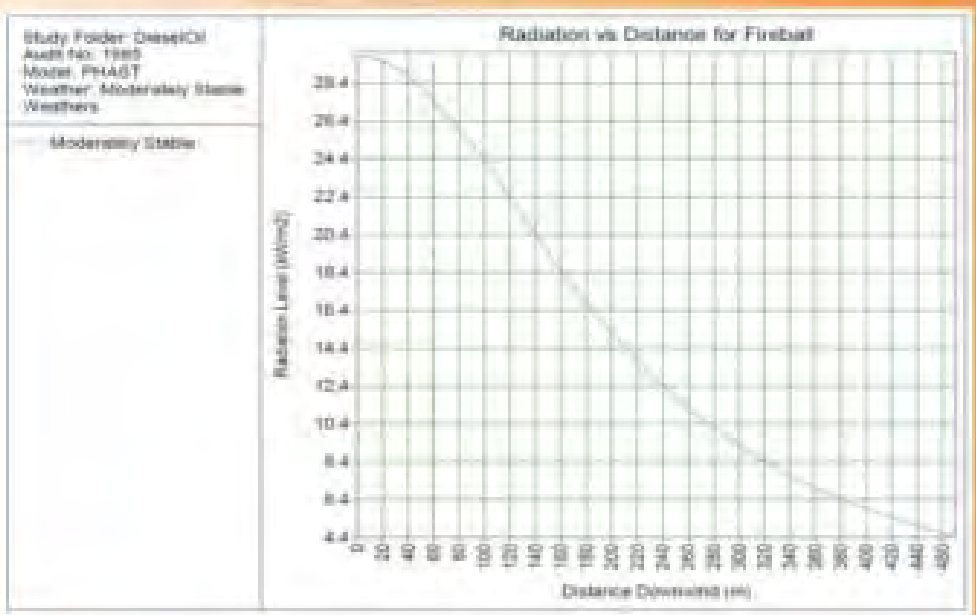

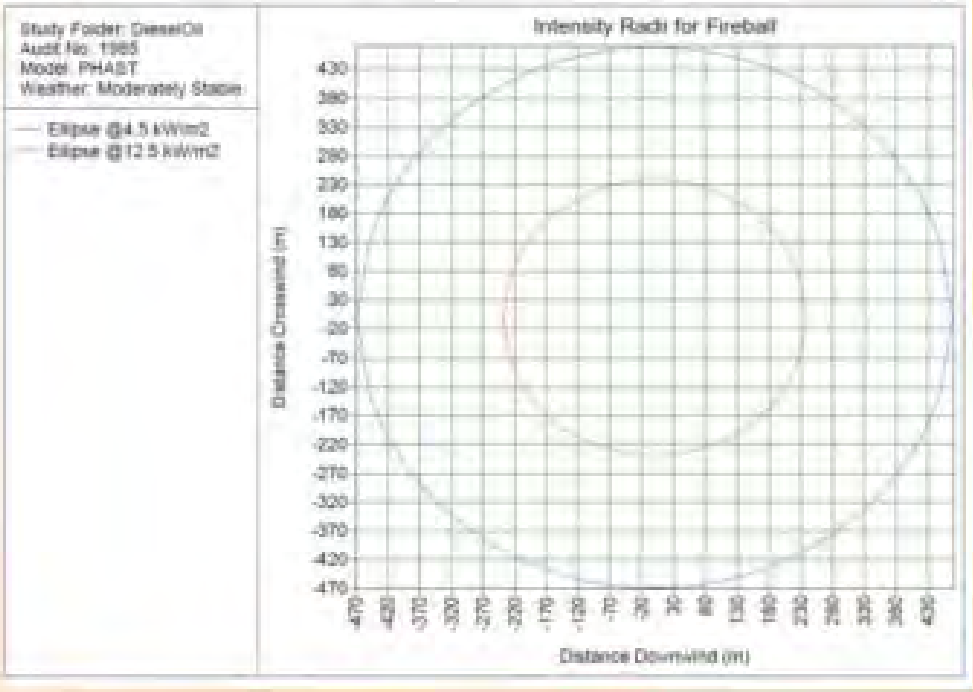

ये पाया जाता है, कि IP-1 प्रस्तावित परियोजना के हीजल ऑयल संकलण टैंक, आकस्मात रुप से विस्फोट के परिणाम संयंत्र व अन्य यंत्र का वातावरण पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा. इसके लिए संपूर्ण व्यवस्था की गई है.

आभार : इस आंकलन व विश्लेषण के सफलता पूर्वक निष्पादन हेतु मैं विशेष रुप भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र से डॉ.शेखर बसु अध्यक्ष, व एनआरबी के अपने सभी सहयोगियों व सहायकों एवं श्री.अजय शर्मा, महाप्रबंधक PCRI/BHEL के प्रति आभार व्यक्त करता हूं.

संदर्भ : 1. डी जलत 6.53.1 सॉफ्टवेयर
2. आय.एन.आर.पी.ई.आई.ए.रिपोर्ट
3. Manufacture, storage & import of hazard ous chemicals Rules 1989-MOEF
4. Rules 2000-MoEF
5. Schedule-1 chemicals with acute toxicity part-1MOEF

होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2014 में प्रथम पुरस्कार प्राप्त लेख

आभामण्डल का विज्ञान

अनुज श्रीवास्तव
एम.बी.ए, एन.एम.आई.एम.एस
बी. टेक (ऑनर्स), आई.आई.टी ख़डगपुर

परामनोविज्ञान और साधना के कई रूपों में, प्रभामंडल (धार्मिक कला में प्रभामंडल या किरणों का पुंज की तरह) किसी व्यक्ति या वस्तु के आसपास के सूक्ष्म, चमकदार विकिरण का एक क्षेत्र है. इस तरह के एक आभा का चित्रण अक्सर विशेष शक्ति या पवित्रता के निर्वाह करनेवाले के दिखाया जाता है. हम में से ज्यादातर के लिए, आभा सोने की चमक लिये कैलेंडर में किसी महान व्यक्ति के सर के चारो ओर निकलती दिखलाई जाती है.

वैसे यह ऊर्जा क्षेत्र दिव्य प्राणियों की ही संपत्ति नहीं हैं. हम सब जीवों यहां तक कुत्तों, बिल्लियों, लक़डी के एक ब्लॉक या कागज का एक टुकडे के चारो ओर भी यह हो सकती है. हर मामले में, यह व्यक्तित्व, स्वास्थ्य और सामग्री के आधे के आध्यात्मिक विकास को दर्शाता है. आभा का महत्व अभी भी बड़े पैमाने पर अज्ञात है. लेकिन, आधुनिक तकनीकों के द्वारा विज्ञान और अध्यात्म को थोड़ा और करीब लाने में महत्वपूर्ण कदम उठा लिये हैं. औरस पर प्रकाश डालने से इसकी शुरुआत की गई है. यह आभा शरीर से तीव्रता और दूरी के अनुसार, (एक चमकदार कास्टिंग के रूप में) बदल सकता है.

प्रभामंडल के लिए कोई वैज्ञानिक परिभाषा नहीं है. कई वैज्ञानिकों इसे मानते ही नहीं हैं, वहीं कई वैज्ञानिक इसके प्रमाण जुटाकर इसको सिद्व कर रहे हैं. कुछ लोगों को औरस के सबूत के रूप में उपस्थित तस्वीरें तक दिखाई देती हैं लेकिन कई नास्तिक इन्हें नकली मानते हैं. हालांकि, मानसिक क्षमताओं के साथ लोगों को देखने के लिए और औरस पढ़ सकने तक के दावे भी किये जाते हैं. वास्तव में पारंपरिक धार्मिक कला में औरस देखना संभव है. इस लेख के लिए, हम इस तथ्य के रूप में औरस की वास्तविकता स्वीकार करते हैं.

एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि यह आभा अपनी खुद की छोटी सी शक्ति है. यह किसी व्यक्ति की आंतरिक स्थिति से निकला - शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक चक्र है. यह मानसिक चिकित्सकों के लिये किसी एक व्यक्ति के समग्र स्वास्थ्य और भलाई का मूल्यांकन करने का उपकरण है. इसका मतलब है एक

मजबूत सकारात्मक आभा के लिए हमें एक मजबूत, स्वस्थ शरीर, अच्छी तरह से संतुलित मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक स्वास्थ्य, और एक आध्यात्मिक परिपक्वता की आवश्यकता पडती है. एक कमजोर या नकारात्मक आभा शारीरिक बीमारी या रोग अथवा संकुचित भावनाओं, अनसुलझे मनोवैज्ञानिक मुद्दों, और / या सीमित आध्यात्मिक विकास को दर्शाता है. इसलिए, हम वास्तव में एक मजबूत आध्यात्मिक आधार के साथ स्वस्थ, अधिक अच्छी तरह से संतुलित व्यक्ति बनने में प्रगति कर सकते हैं.

आभा शरीर में केन्द्र के साथ (एक गेंद के रूप में) समाहित होती है। इसका मतलब है कि एक पूर्ण आकार का व्यक्ति उनके आसपास के वातावरण के साथ समाहित है । विभिन्न वैज्ञानिक लेखकों ने आभा की विभिन्न परतों के रंग

के साथ विभिन्न व्यक्तित्व के लक्षण बताये हैं. जैसे कि एक बीमार, शारीरिक और / या मानसिक रूप से विकलांग व्यक्ति के आभा की आकृति विषम होती है (एक गेंद जैसी नहीं बल्कि कटी फटी होती है)

रॉबर्ट टोड कैरोल के अनुसार सिरदर्द, मिर्गी, मानसिक संघर्ष, एलएसडी के रूप में साइकेडेलिक दवाओं के प्रभाव एवं अन्य प्रभाव के कारण नकारात्मक आभा उत्पन्न होती है. कभी कभी आँख की थकान के कारण भी नकारात्मक आभा उत्पन्न होती है. मजबूत सकारात्मक औरस के लोग स्वाभाविक रूप से करिश्माई हैं दूसरों को आकर्षित करते हैं. साथ ही अन्य अन्य लोगों से समर्थन प्राप्त करने में अधिक सफल हो जाते हैं. नकारात्मक और सवाले लोगों से दूर हो जाते हैं और मजबूत नकारात्मक और सवाले लोगों के लिये बुरे हो सकते हैं. नकारात्मक औरस परजीवी बन जाता है और यह भी संभव है सकारात्मक औरस से ऊर्जा चोरी कर सकते हैं. यह याद रखना महत्वपूर्ण है यह आभा अपनी खुद की छोटी सी शक्ति है.

नकारात्मक लोग सकारात्मक लोगों को प्रभावित भी कर सकते हैं. नकारात्मक आभावाले व्यक्ति को अपनी ऊर्जा और प्रकाश की सकारात्मक व्यक्ति की आभा के निकास के लिए लगाना पडता है, यह सब मनोविज्ञान वास्तव में औरस की बातचीत में यह देख सकते हैं. सकारात्मक आभावाले कुछ अपनी चमक खो सकते हैं और अधिक थक सकते हैं या कमजोर महसूस कर सकते हैं. वे बेचैनी या चिंता भी महसूस कर कर सकते है. दूसरी ओर, सकारात्मक आभावाले भी अच्छी तरह से नकारात्मक लोगों को प्रभावित कर सकते है. अपनी ऊर्जा और जीवन शक्ति एक नकारात्मक या कमजोर आभा के साथ एक व्यक्ति में प्रवाह कर सकते हैं. मानसिक चिकित्सक यही करते हैं. वे नकारात्मक व्यक्ति को अपनी आभा के माध्यम से सकारात्मक ऊर्जा भेजते हैं. मजबूत आभावाले सकारात्मक व्यक्ति के लिये कम संभावना है कि एक नकारात्मक व्यक्ति उनकी ऊर्जा चोरी कर पायेगा.

एक प्रश्न है कि क्या नकारात्मक औरस के साथ रहनेवाले लोग अक्सर गंभीर रूप से बीमार हैं ड्रग्स लेने, धूम्रपान पीने, और हमारी आभा को कमजोर कर सकते हैं. बहुत तनाव, संघर्ष और हिंसा कर सकते हैं. बहुत कम व्यायाम, मानसिक उत्तेजना, नकारात्मक सामाजिक संपर्क, या आध्यात्मिक संबंध एक कमजोर आभा उत्पन्न कर सकते हैं.

औरस की जांच : आज उपकरणों के माध्यम से हम् आभा देख सकते हैं. हम एक प्रभामंडल की सीमाओं या बाहर के किनारों को देख सकते हैं. एक आभा को मापने के लिए, हम (दाएं से बाएं और) पक्षों के बाहरी किनारे को चिह्नित कर सकते हैं, साथ हम आभा 90 डिग्री घूर्णन द्वारा ऊपर और नीचे और पक्षों के रूप में एक ही तरीके से मापकर कर सकते हैं.

एक व्यक्ति के स्वस्थ होने पर (मानसिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक और शारीरिक रूप से), आभा प्रकाश बैंगनी रंग का होता है. किसी बीमारी या एक आंतरिक या शारीरिक टूटन का अनुभव है कि 'सफेद आभा' उस क्षेत्र के आसपास दिखाई देता है. बीमारी या आंतरिक टूटने की 'सफेद आभा' बनाम 'प्रकाश बैंगनी आभा' की तीव्रता, अलग अलग होती है. व्यक्ति के मरने पर आभा गायब हो जाती है. अन्य सभी जीवित प्राणियों जैसे कीड़े, जानवरों, सरीसृप, के लिए औरस रंग अलग अलग होते हैं.

कुछ लोग स्पर्श के माध्यम से आभा को पढ़ सकते हैं। अभी तक देखी गई आभा के रंग के निम्न मूल अर्थ होते हैंः

लाल : शारीरिक जीवनबल / जोश गुस्सा / लाल मैला तंत्रिका (बातें करने में निडर, असामान्य तरीके से, आनन्द, संगठित, भौतिकवादी)

पीलाः महत्वपूर्ण सिद्धांतवादी (समस्याओं के नए समाधान ढूँढता है, एक बहुत बातूनी, हँसते हैं प्रतिस्पर्धी, स्मार्ट)

नीला : शांत / ईमानदारी, (परिवार उन्मुख, सहायक, परेशानी, भावनात्मक,)

हरा : आरोग्य / विश्वसनीय, कृपण / जुनूनी / आत्महत्या (ऑब्जर्वर, आरोग्य, सहज ज्ञान युक्त, कुशल, स्थितियों के पैटर्न वाला, आध्यात्मिक, कई प्रतिभाओं को प्यार करता है इन्हे स्नेह की जरूरत है)

जामुनीः अराजकतावादी / कट्टर / आध्यात्मिक साधक (प्राचीन सिद्दांतों के प्रति गहरा, प्रतिबद्ध नियमों, गहरी विचारकों से स्वतंत्र महसूस निहित, भीड़ में अभिभूत महसूस करता है और अनुमान लगाना मुश्किल है कि क्या करेगा)

बैंगनी, हल्का नीला - परमात्मा सहज ज्ञान युक्त / प्राकृतिक नेता

हलका बैंगनी : दबंग / कंजूस (भेदक, सतह पर अलग लेकिन भीतर गहरे, तीव्र बातूनी, नेता, दूरदर्शी, जादुई, न्याय, मजबूत इरादे के साथ कार्य करता है आनन्दित, जिम्मेदार)

इन्ही के आधार पर रंग चिकित्सा की जाती है.

रंग चिकित्सा : अल्ट्रा वायलेट, सफेद, सोना, पन्ना, हरा रंगो के प्रकाश द्वारा.

आभा मापन के उपयोग : 1. चिकित्सा क्षेत्र में : रोगी व्यक्ति की आभा पूरी तरह से संतुलित नहीं होती है. चिकित्सा कर्मियों की नियुक्ति इसी को ध्यान में रखकर की जा सकती है. क्योकि हम मनुष्य की पृवत्ति पहले से जान सकते हैं (मुम्बई की नर्स शानबाग जैसे हादसे टाले जा सकते हैं)

2. व्यक्तित्व की परख : असाधारण के क्षेत्र में कार्यरत, प्रतिभाशाली व्यक्ति की आभा अलग ही होती है.

3. आभा मापन द्वारा के बौद्धिक प्रगति के लिए नजर रखी जा सकती है.

आभा उपचार : उज्जवल रंग बेहतर - हम कई उपचारों के साथ आभा उपचार की पूरी तरह से मदद ले सकते हैं आभा चिकित्सा के माध्यम से ऋणात्मक ऊर्जा बाहर खींचकर रोगी की मदद कर सकते हैं. एक नियमित आधार पर हमारे पूरे आभा से रंग चिकित्सा में डालने का कार्य भी अत्यंत उपयोगी है.

हमारे आभा उपचार के कई तरीके हैं। रेकी और ग्राउंडिंग भी सफल साबित हुई है. इस प्रकार उपचार में आभा एक प्रमुख भूमिका निभा सकता है. औरस ध्यान में सुधार लाने का सबसे अच्छा संभव तरीका है.

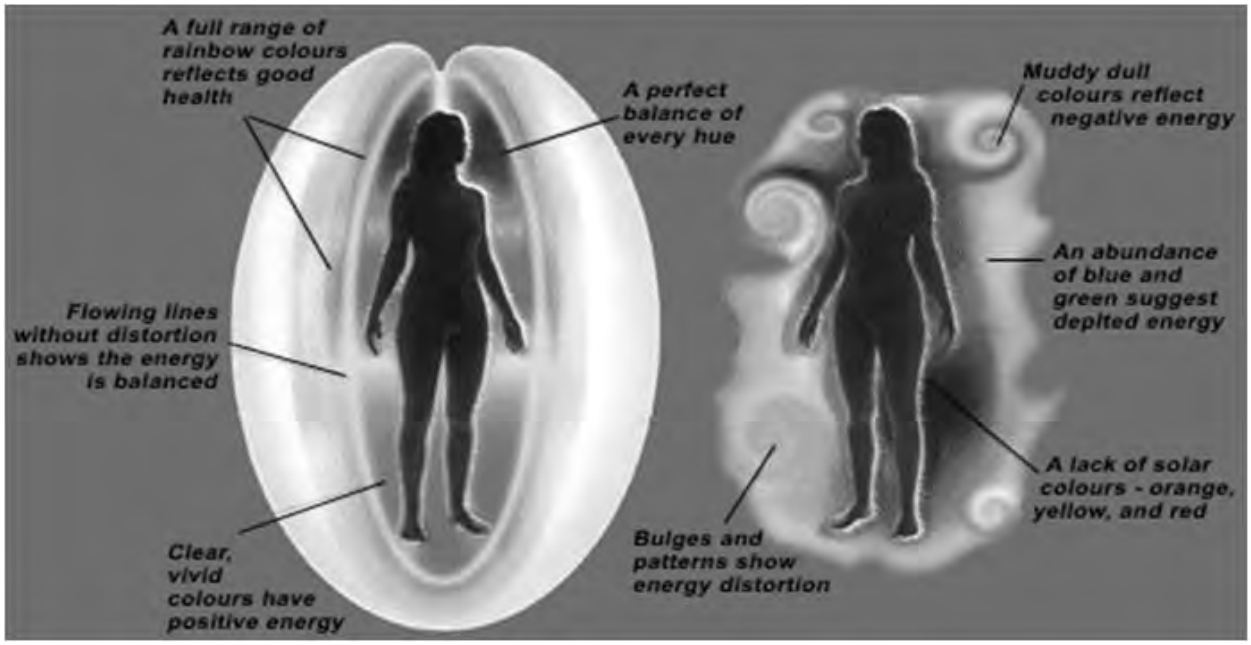

क्या भूकंप की भविष्यवाणी संभव है ?

राजेश कुमार मिश्रा
वैज्ञानिक अधिकारी 'जी',
परमाणु ऊर्जा विभाग

भूकंप जैसी किसी भी विनाशकारी घटना के बाद अक्सर जनसामान्य के मन में उठने वाला अहम सवाल यह होता है कि 'क्या यह संभव है कि भूकंप की भविष्यवाणी की जा सके ? इस सवाल का वास्तविक और काल्पनिक समाधान के साथ जवाब देना बेहद जटिल है. स्वभावतः भूकंपीय दृष्टि से सक्रिय क्षेत्रों में रहने वाले लोग भूकंप के

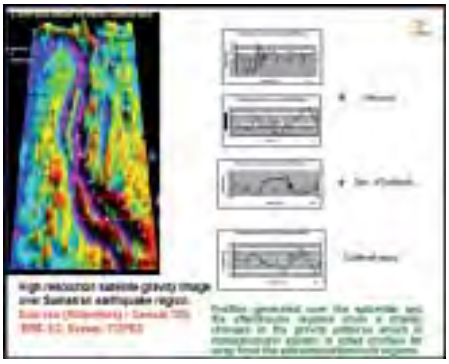

चित्र 1 : 26 दिसंबर, 2004 के भयावह भूकंप के संदर्भ में सुमात्रा क्षेत्र में उच्च विभेदन (स्पष्टता) गुरुत्वाकर्षण में परिवर्तन का उपग्रह की मदद से अध्ययन

बारे में भविष्यवाणी जानना चाहते हैं लेकिन उनमें से ज्यादातर को लगता है कि भूकंप छोटे अंतराल के संकेतों के अन्तर्गत होता है. हालांकि, यह धारणा गलत है जिसे हटाने की जरूरत है. शोधकर्ताओं का यह कर्तव्य है कि भूकंप के अग्र-संकेतकों के बारे में आम आदमी को शिक्षित किया जाए. जहां एक ओर वर्तमान वैज्ञानिक जगत 'भूकंप की भविष्यवाणी' के विषय पर किसी भी पूर्णता तक पहुँच पाने में सफल नहीं हो पाया है वही दूसरी ओर संबंधित मानकों के साथ किए गए शोधकार्यों के परिणाम यह निर्दिशत बताते हैं कि भूकंप की भविष्यवाणी निकट भविष्य में कर पाना असंभव भी नहीं है.

यह एक यथार्थ है कि कोई भी प्रशासन भूकंप जैसी विपदा से मानव जीवन को बचाने के लिए उत्सुक रहेगा। पर इस कार्य हेतु उन्हें शोधकर्ताओं से कुछ वैज्ञानिक सूचनाओं (इनपुट) की जरूरत होगी. दुर्भाग्य से, आपदा प्रबंधन गतिविधियों के लिए अनेक योजनाएं तो बनाई गई हैं पर अधिकांशतः ये वर्तमान में भूकंप के होने के बाद की अवधि मात्र तक के लिए सीमित रही हैं. बहुमत का मानना है कि भूकंप की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती. परिणामस्वरूप आपदा प्रबंधन परिदृश्य अत्यधिक जटिल हो जाता है और उनकी उपयोगिता भूकंप-पश्चात गतिविधियों तक ही सीमित रह गयी हैं. अतीत में उत्तरकाशी 1991, लातूर 1993., भुज 2001 अंडमान 2004, और कश्मीर 2005. के अनुभव इस तथ्य के द्योतक हैं.

भूकंप की भविष्यवाणी से सम्बन्धित विषय में 1990 के बाद से अच्छी प्रगति हुई है जिसमें चीन के वैज्ञानिकों का अग्रणी प्रयास रहा है (1) इसके बावजूद भूकंप की सही भविष्यवाणी सभी संबंधित मानकों, समय, स्थान और तीव्रता; के साथ संभव नहीं हो पायी है। अनेक शोधकर्ताओं द्वारा पारंपरिक मानकों का प्रयोग प्रस्तावित पैरामीटर के रूप में करने की कोशिश की गयी पर ये सारे प्रयोग बहुत कारगर साबित नहीं हो पाये (2) हाल ही के दशक में, उपग्रहों से प्राप्त वैज्ञानिक आंक़डे भी काफी उपयोगी साबित हुए हैं. एक उदाहरण के तौर पर चित्र 1 को देखिये जिसमें यह दिखाया गया है कि कैसे उपग्रहों से प्राप्त, एक थ्री-डी उच्च स्पष्टता वाली गुरुत्वाकर्षण छवि को उत्पन्न कर, पूर्व-दिशा में स्थित नब्बे पर्वत पृष्ठ (रिज) तथा सुमात्रा के भूकंप प्रभावित क्षेत्र पर प्रत्यारोपित किया गया है. यह अध्ययन दर्शाता है कि कैसे गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में रूपांतर को किसी क्षेत्र के भूकंपी व्यवहार के एक भविष्यवक्ता के रूप में उपयोग किया जा सकता है.

एक और अध्ययन के परिणामों से यह पता चलता है कि एक भूकंप की घटना के कुछ दिनों पहले, क्षेत्र के औसत

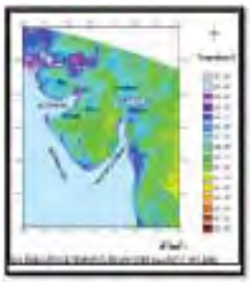

चित्र 2: भूकंप के पहले, दिन का सतह तापमान चित्र

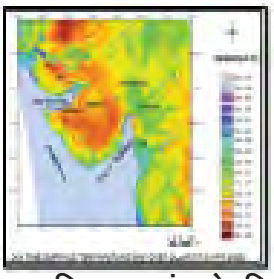

चित्र 3: भूकंप के दिन का सतह तापमान चित्र

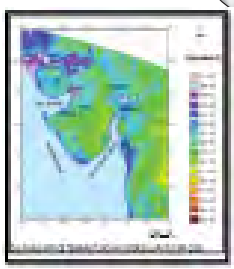

चित्र 4: भूकंप के बाद, दिन का सतह तापमान चित्र

तापमान में लगातार वृद्धि होती है (3) भुज क्षेत्र में सतह पर तापमान विसंगति पैटर्न, एन.ओ.ए.ए. के थर्मल आई.आर. का उपयोग करते हुए मार्च- अप्रैल 2006 के दौरान उत्पन्न किया गया है. तीन प्रतिच्छाया चित्रों इएक भूकंप के पहले - चित्र 2/ भूकंप कंपन की तारीख पर -चित्र 3 और एक भूकंप कंपन के बाद - चित्र 4 .को संसाधित कर उनका विश्लेषण किया गया. इस पूरे क्षेत्र में सतह के तापमान पैटर्न में तेज बदलाव और खासतौर पर भुज क्षेत्र के निकट भूकंप के झटकों के पहले (6 अप्रैल, 2006) के परिवर्तन को स्पष्ट देखा जा सकता है. साथ ही घटना के तुरंत बाद सतह के तापमान में तेजी से आई कमी भी इन चित्रों से स्पष्ट दिखाई देती है.

सन 2008 में फ्रेउण्ड नामक एक वैज्ञानिक ने पाया कि भूकंप की भविष्यवाणी गैर-भूगर्भिक, गैर-भूकंप तरीकों से ही संभव होगी और उन्होंने वातावरण में होने वाले परिवर्तन पर नजर रखने की सलाह दी (4) चीनी शोधकर्ताओं ने भूकंप के बाद के विश्लेषण के आधार पर सटीक भविष्यवाणी का दावा तो किया पर वे सिर्फ एक ही भूकंप की सही भविष्यवाणी कर पाये (3)

यह एक तथ्य है कि जानवरों के असामान्य व्यवहार को सदियों से भूकंप के अग्र-संकेतक के रूप में मान्यता प्राप्त है। स्पिटक (आर्मिनया) में आए दिसम्बर 1988 के भूकंप के बाद से यह भी पाया गया कि मानव भी असामान्य व्यवहार से ग्रसित होते हैं (5) जानवरों की तरह मानव भी भूकंप के 10-12 घंटे पहले तरह तरह की परेशानियों के शिकार होते हैं और इसका असर मानव स्वास्थ्य पर और मनोदैहिक विकारों में अचानक वृद्धि के रूप में देखा जा सकता है. लातूर में भूकंप के पश्चात के अध्ययन के दौरान यह तथ्य भी सत्यापित किया गया था. लेकिन यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि पशु तथा मानव के व्यवहार में असामान्यता, घटना से केवल कुछ घंटों पहले ही दिखाई देती है.

इन सभी अग्रिम-संकेतों के बावजूद, यह तो स्पष्ट है कि वर्तमान में भूकंप के समय, स्थान तथा तीव्रता के बारे में भविष्यवाणी करना सम्भव नहीं है. पर अध्ययन से प्राप्त आंकड़े इस बात का संकेत देते हैं कि भूकंप का पूर्वानुमान जरूर संभव है. यदि आम लोगों को इस जानकारी से शिक्षित किया जाए तो वे इस तरह का आभास कर पाने में सक्षम हो सकेंगे. इस तरह का एक प्रयास असम राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण द्वारा फरवरी 2011 में किया गया था. यह ध्यान देने योग्य है कि वर्तमान में आपदा प्रबंधन अधिनियम, राज्य और भारत सरकार, लोगों को भूकंप की भविष्यवाणी करने के लिए अनुमति नहीं देता और नियम का पालन न करने पर इसके अंतर्गत सजा का भी प्रावधान है.

आज जरूरत है कि भूकंप अनुसंधान पर ज़ोर दिया जाए. जरूरत इस बात की भी है कि अनुसंधानकर्ता बिना किसी पूर्वाग्रह के हर अग्र-संकेतक प्राचल (पैरामीटर) का गहन अध्ययन कर, उन्हें इस स्तर तक स्थापित करें कि भविष्य में आने वाले भूकंप से होने वाली मौतों की संख्या कम की जा सके. आज, आम जनता की वैज्ञानिकों से यही अपेक्षा है और आज का वैज्ञानिक जगत इस उम्मीद में खरा उतरने में पूर्णतया सक्षम है. जरूरत है इस दिशा में एक सबके सम्मिलित प्रयास की ताकि इसकी सफलता मानव जीवन को बचाने में मददगार साबित हो सके.

संदर्भ

1. चेन, वाय. एफ. और वैंग, के. एच., बुलेटिन ऑफ सेस्मोलॉजिकल सोसाइटी, अमेरिका 2010, 100, 2840-2857

2. बापट, ए, करेंट साइन्स., 2008, 95, 318.

3. टी जे मजूमदार, 'भूकंप संभावित क्षेत्रों में सतह के तापमान विसंगतियाँ का भूकंप अग्र-संकेतक के रूप में उपयोग', भू-कंपन - आई.एस.ई.एस. न्यूज़लैटर, अंक 2

4. फ्रेउण्ड, एफ, करेंट साइन्स, 2008, 94,311.

5. बापट, ए, विश्वसनीय भूकंपी अग्र संकेतक, असम राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण, गुवाहाटी, 2011.

- ऊर्जायन से साभार

बौने वृक्षों का दिलचस्प सफरनामा

त्रिलोक सिंह वर्मा
अध्यक्ष (सेवा निवृत्त), पुष्पकृषि एवं भूदर्शनीकरण अनुभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र

हम युगों से प्रकृति की गोद में पलते रहे हैं, यही प्रकृति एक तरफ भांति-भांति के फल - फूलों से हमारी गोद भरती आ रही है, वहीं दूसरी तरफ पेड़ पौधों की ज़डों और छालों ने तरह-तरह की औषधियां प्रदान कर हमें रोगों से मुक्त रखा है. बोनसाई यानी नन्हें-नन्हें वामन आकार के वृक्षों को पालना एक प्राचीन कला है. हमारे देश में वैद्यों, ऋषि-मुनियों ने इस कला को पनपाया. प्राचीन भारत में इसे 'वामन वृक्ष संवर्द्धन विद्या' के नाम से जाना जाता था जिसका अर्थ है बौनी देह वाले पेड़ उगाने की कला. चूंकि उस समय अंग्रेजी दवाइयां थीं ही नहीं, जडी-बूटियों से तैयार की गई औषधियां ही चलती थीं, इसलिए इन सबकी जरूरत पड़ती थी.

वे जंगलों में इन्हें इकट्ठा करने जाते, मगर बार-बार जंगल जाना मुसीबत का काम था, इसलिए वे औषधियुक्त् पेड़ों को जंगलों से ले आते और अपने घरों में लगाते थे. घरों में इतने बड़े-बड़े पेड़ों के लिए अधिक जगह चाहिए. कभी-कभी इनकी वृद्धि रोकने के लिए वे इनकी ज़डों को समय समय पर काटते रहते और कम जगह में तरह-तरह के पेड़ उगाते और औषधि के लिए ताजा ज़डी-बूटियों को इन बौने वृक्षों से प्राप्त करते थे.

लेकिन हर बौना पेड़ बोनसाई नहीं होता. असली बोनसाई तो वही है जिनमें अपने छोटे आकार में होने पर भी वही शान, वही मुद्रा, वही बड़ापन और वैसे ही मीठे फल पाए जाएं. बोनसाई पेड़ को देखकर यह अहसास होना चाहिए कि जैसे हम जंगल में किसी बडे पेड़ को देख रहे हों. यह शौक मेहनत भी चाहता है. अगर दो दिन पानी नहीं दें तो आपकी सालों की मेहनत मिट्टी में मिल जाएगी. बोनसाई एक जापानी शब्द है, जो दो शब्दों से मिलकर बना है, जिसमें बोन का अर्थ है-तश्तरी या उथला पात्र, साई का अर्थ है- वृक्ष या पेड़ अर्थात उथले पात्र में लगा हुआ पौधा. इस कला में पेड़ पौधों को एक विशेष तकनीक से छोटे आकारों में रखा जाता है. बाद में इन्हें छोटे आकार के कंटेनर में लगा दिया जाता है. इस कला से तैयार पौधे अपने मूल पौधे से केवल आकार में ही छोटे होते हैं, बाकी पौधे की बनावट, उसके स्वभाव तथा आकृति में किसी भी प्रकार का बदलाव नहीं होता है. इस तरह के पौधों में मूल पौधों की तरह ही समय पर फूल तथा फल आते हैं. इनमें भी पतझड़ के समय सभी पत्तियां गिरती हैं और वापस नई कोंपलें निकलती हैं.

प्राचीन भारत में इस कला का विकास बौध्द धर्म प्रचारकों द्वारा हुआ जो इस कला को चीन, कोरिया तथा जापान ले गए. बोनसाई का इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्राचीन बेबीलोन, चीन, ईरान, भारत, ग्रीक तथा रोम में भी छोटे पात्र में पेड़ लगाए जाते थे. जापान में इस कला का प्रचलन बहुत पुराने समय से चला आ रहा है. वहां पुरानी पेंटिंगों में भी बोनसाई पौधों को दिखाया गया था. इस कला का विकास चीनी अधिकारी चू सूहम सूहाई के प्रयत्नों से तब हुआ, जब चीन से वह अपने साथ कुछ पौधे जापान ले गए.

चीन तथा जापान का इस कला पर पूरा दबदबा रहा है. आज भी इन देशों में करीब 400-500 वर्ष पुराने बोनसाई पौधे मौजूद हैं जिनकी ऊंचाई मात्र 30" के आसपास है. दूसरे देशों में भी इस कला का विकास तेजी से बढ़ रहा है। भारत में मुंबई, पुणे, नागपुर, बेंगलूरू, दिल्ली, कोलकाता, चंडीगढ़, जयपुर उन शहरों में गिने जाते हैं जहां पर इस कला को समर्पित लोग इसके विकास में जुटे हुए हैं.

कैसे प्राप्त करें सामान्य रूप में, छोटी पत्तियों और सघन टहनियों वाला कोई भी वृक्ष इस कला के संवर्द्धन के

लिए ठीक होगा. फिर भी बोनसाई पौधों को 3 मूल स्रोतों से प्राप्त किया जा सकता है, प्राकृतिक रूप में, बीज, कटिंग अथवा लेयरिंग के माध्यम से या सीधे पौधशाला से. प्राकृतिक रूप में पौधे सामान्यतया पहाड़ों, चट्टानों की दरारों, पुरानी दीवारों, खंडहरों जैसी जगहों पर मिल जाते हैं जो स्वा भाविक रूप से बौने रह जाते हैं. इस प्रकार के पौधों से बहुत कम समय में अच्छे बोनसाई पौधे तैयार किए जा सकते हैं. दूसरी तरह के स्त्रोत से पौधों को शुरू से प्रूनिंग अर्थात कटाई-छंटाई, वायरिंग करके तथा मिट्टी के साथ पत्तियों की सही खाद मिलाकर कुछ वर्ष की मेहनत से एक पूरा विकसित बोनसाई पौधा तैयार किया जा सकता है.

वर्गीकरण : बोनसाई पौधों को मोटे तौर पर 3 श्रेणियों मे बांटा जा सकता है. 1) मेम बोनसाई - छोटे साइज के बोनसाई पौधे, इसमें पौधों की लम्बाई मात्र 2 से 6 तक होती है तथा इन्हेंट आसानी से उठाया जा सकता है. 2) मध्यहम बोनसाई - इस तरह के बोनसाई पौधों की लम्बाई 6 से 12 तक की होती है तथा इन्हें एक हाथ से उठाया जा सकता है. 3) बडी साइज के बोनसाई - इस श्रेणी के पौधों की लम्बोई 12 से 24 तक की होती है तथा इन्हें दोनों हाथों से उठाया जा सकता है. इसके अलावा कुछ पौधे और बडे आकार के होते हैं, बोनसाई कला, त्याग, तपस्या तथा धैर्य का प्रतीक है इस कला में कलाकार अपनी इच्छानुसार वृक्ष के स्वंभाव के अनुरूप विभिन्न प्राकृतिक भावों का निर्माण करता है. बोनसाई कला को तथा पौधों की बनावट को ध्यान में रखकर इन्हें 5 प्रमुख प्रजातियों में विभक्त किया जा सकता है-

1) **सीधा पौधा (अपराइट)** - इस प्रकार के बोनसाई प्रकार में पौधा सीधा ख़डा रहता है. बरगद, पीपल, सीताफल, पाइनस इत्याद इस श्रेणी के प्रमुख पौधे होते हैं.

2) **झुके हुए पौधे (स्लान्टिंग)** - इस प्रकार के बोनसाई पौधे एक तरफ झुके रहते हैं तथा मुख्य तना भी टेढ़ा होता है, जूनीपर, पाइनस, कामिनी, बोगनविलिया गूलर इत्यादि पौधे इसके लिए ठीक रहते हैं.

3) **केसकेड और सेमीकेसकेड** - इस तरह के बोनसाई पौधे नीचे की तरफ लटकते रहते हैं, अगर पौधा कन्टेनर के पेंदे को छू लेता है या उस तक पहुंच जाता है तो इसे सेमी केसकेड कहते हैं तथा पेंदे से भी बहुत नीचे तक लटकता रहता है तो इन्हेंत केसकेड किस्मा कहते हैं, जूनीपर, पोरचूलेकेरिया, पाइनस, फाइकस बेनजेमिना, फाइकस ट्राइग्रोना, फाइकस केरिका, फाइकस प्लूमीला, बोगनविलिया इत्यादि पौधे इस श्रेणी में बनाए जा सकते हैं.

4) **फोरेस्ट् या ग्रुप स्टाइल** - इस तरह के बोनसाई पौधों को बड़ी ट्रे तथा बड़े आकार की तश्तरी में पास-पास लगाया जाता है जिससे कि पौधों का एक समूह बन जाता है. इनमें जूनीपर, पाइनस, पोमग्रेनेट (नाना), मेलफीमिया, कामिनी मेलफीमिया इत्यादि पौधे काफी प्रचलित हैं.

5) **ब्रूम स्टापइल** - इस प्रकार के बोनसाई पौधों में मिट्टी की सतह के उपर से एक साथ कई तने निकलते हैं तथा इनका कोई खास निश्चित आकार नहीं होता है, ये एक झुंड सा बनाते हैं तथा ऊपर के भाग में भी पत्तियां काफी पास-पास रहती हैं : गुड़हल, अनार, अमरूद, आंवला, इरेन्थीकम, एकेलिफा, फाइकस बेनजेमीना, लेजर स्टोहमिया, शिफरेला इत्यादि इस स्टाइल के प्रमुख पौधे हैं.

पेड़-पौधों को बोनसाई रूप में लाने की सफलता निम्न बातों पर निर्भर करती है. अगर इनका सावधानीपूर्वक पालन किया जाए तो इसके परिणाम बहुत ही अच्छे प्राप्त होंगे. 1) पौधों का उचित चुनाव 2) कंटेनर का चुनाव 3) मिट्टी का सही मिश्रण 4) पात्र या मिट्टी का बदलना 5)सिंचाई का उचित प्रबंध 6) खाद का उपयोग 7)पौधों की काट-छांट 8) पौधों को रखने की जगह 9) पौधों को हानिकारक कीडे-मकोडों तथा बीमारियों से बचाना.

बोनसाई कला के समुचित विकास के लिए ये बातें एक दूसरे की पूरक हैं.

बोनसाई हेतु उपयुक्त पौधे : इस कला के द्वारा पौधों को छोटे, मध्यम एवं बडे आकार का बोनसाई का रूप दिया जा सकता है. इसके लिए पौधों का चुनाव बहुत ही जरूरी

है, अगर पौधों का चयन उचित रूप से नहीं किया गया तो बोनसाई पौधा भी ठीक नहीं होगा.

1) फूल वाले पौधे - सामान्यतः उन्हीं फूल वाले पौधों का चयन बोनसाई बनाने के लिए किया जाता है, जिनके फूल छोटे और ज्यादा समय तक पेड़ पर टिकते हों साथ ही पत्तियों का आकार भी छोटा हो. इस तरह के पौधों में

एडिनियम, एलेमंडा, बोगनविलिया, मिनीएचर गुलाब, केमेलिया, अजेलिया, बाहूनियां ब्रूनफेलसिया, गेलिएंड्रा, कामिनी इत्यादि प्रमुख पौधे हैं.

2) सुंदर पत्तियों वाले पौधे - कुछ पौधों की पत्तियां बहुत ही सुंदर आकृति लिए होती हैं. इस प्रकार के पौधों की सुन्दौरता पत्तियों की बनावट, रंग तथा रूप पर निर्भर करती हैं. बेम्बूसा, केजूराइना, फाइकस रिलिजीयोसा, फाइकस बेनजेमीना, फाइकस नूडा, फाइकस प्यूबमीला, क्रिप्टोमीरिया, जूनीपर, अरेलिया, शिफरेला इत्यादि पौधे प्रमुख हैं.

3) फल वाले पौधे - फल वाले वृक्षों का भी बोनसाई में काफी महत्व है. छोटे पौधों पर फल बहुत आकर्षक एवं सुन्दलर लगते हैं इनके कारण पौधा सभी का ध्यान अनायास ही अपनी ओर आकर्षित करता रहता है. फल वाले पौधों में सीताफल, अमरूद, चाइनीस अमरूद, नारंगी, आंवला, करोंदा, चीकू, आम, अनार, जामुन, इमली, अंजीर तथा शहतूत इत्यांदि को बोनसाई बनाने के लिए काम में लाया जा सकता है.

गमलों का चुनाव : गमलों के चुनाव का सीधा संबंध पौधों के प्रकार से है. गमलों के आकार के अनुसार ही उनमें पौधों के स्थान का चुनाव किया जाता है. फिर भी इनके आकार, रूप-रंग तथा टिकाऊपन का ध्यान रखा जाना जरूरी है.

मिट्टी का चुनाव : बोनसाई की सफलता सही प्रकार की मिट्टी के चुनाव पर ही निर्भर करती है. मिट्टी में नमी सोखने और वायुसंचार की क्षमता होनी चाहिए. बलुअर कणदार मिट्टी इसके लिए उपयुक्त है. भारतीय जलवायु में बलुअर कणदार मिट्टी के अलावा लक़डी के कोयले का चूरा तथा पत्तियों की सड़ी हुई खाद मिलाना, मिट्टी में आर्द्रता बनाये रखने में सहायक होती है. इसके साथ ही समय समय पर बोनमिल का उपयोग भी बोनसाई पौधों की वृद्धि के लिए वरदान माना जाता है.

गमले में पौधे बदलना : बोनसाई पौधे थोड़ी सी ही मिट्टी में अपना जीवन बिताता है, इसके लिए मिट्टी में खाद्य तत्व तथा पोषणतत्व का उपलब्ध होना बहुत ही आवश्यक है. इसके लिए पौधों के अनुसार गमलों या कन्टोनरों का बदलना तथा समय समय पर मिट्टी का बदलना भी अति आवश्यीक है. इस क्रिया को रिपॉटिंग कहते हैं. साल में एक बार मिट्टी बदलना पौधों में नए जीवन का संचार करते हैं. सामान्यतया बसंत ऋतु या वर्षा-ऋतु बहुत ही उपयुक्त है. पौधों की नई कोपलों के निकलने से पहले गमले का बदल लेना उचित रहता है.

गमले के छेद पर फिल्टर रखना अति आवश्यैक है क्योंकि इसके रखने से गमले के छेद से अतिरिक्त पानी निकलने में किसी भी प्रकार की कठिनाई नहीं होगी. इससे पौधा स्वस्थ रहेगा. अगर पानी रुक गया तो पौधे की जडें सड़कर मरने की संभावना बनी रहती है. जब पौधों में उनकी ज़ड की प्रूनिंग कर दी जाए तब उन्हें ठीक जगह का चुनाव करके गमले में लगा देना चाहिए तथा मिट्टी भरते समय इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि उनमें कोई रंध्र न रहने पाए. इसके लिए हाथ की अंगुलियों की सहायता से धीरे धीरे मिट्टी को पात्र में दबाना चाहिए, फिर धीरे धीरे पानी देना चाहिये तथा तब तक देना चाहिए जब तक कि पानी पात्र के छेद से बाहर न निकल जाए. अब इस पौधे को छाया वाले स्थान पर लाकर रखना चाहिए जब तक कि उनमें नई कोपलें न निकल जाएं.

सिंचाई का प्रबंध : बोनसाई पौधों को पानी निश्चित मात्रा में ही मिलना चाहिए अधिक सिंचाई से पौधों की बढ़त तेज हो जाएगी या पौधा गल जाएगा. उसी तरह से यदि पानी कम दिया गया तो वह मुरझा जाएगा. अधिक बादलों के मौसम में कम पानी देना चाहिए कभी-कभी पत्तों को भी

सींचना या स्प्रे करना चाहिए. सूर्यास्त के समय यह क्रिया ठीक है. पत्तों पर सिंचाई या स्प्रे धूप के समय कभी नहीं करना चाहिए.

खाद तथा उर्वरक - बोनसाई पौधे अपना सारा जीवन यापन न्यूनतम मिट्टी में करते हैं इसलिए इनका पोषण भी समय समय पर आवश्यक है. इसके लिए धीरे धीरे असर करनेवाली खाद जैसे, रवली, हड्डी का चूरा, लक़डी की राख, बोनमील, फिशमील तथा स्टीखरामील का उपयोग लाभदायक रहता है. कभी कभी तरल खाद भी देना चाहिए पर इसके लिए किसी अनुभवी बोनसाईविज्ञ से सलाह करके ही देना उपयुक्त रहता है क्योंकि ज्यादा खाद की मात्रा जहर का काम भी कर सकती है.

काट छांट - बोनसाई कला का एक बहुत महत्वापूर्ण अंग उसकी काट छांट (प्रूनिंग) करना है. इस काम में कुशलता बहुत अभ्यासू और अनुभव से ही प्राप्त की जा सकती है. वैसे काट छांट के चार मुख्य ध्येय हैं : 1) अधिक वानस्पतिक बढ़त को रोकना 2) शाखाओं तथा उपशाखाओं की बढ़त को प्रोत्साहित करना 3) फल और फूल प्राप्ती करना 4) निश्चित आकार तथा रूप देना.

बोनसाई कला एक साधना है, कलात्मक अभिरुचि की साधना. इसमें धैर्य रखना बहुत ही जरूरी है. अगर सावधानीपूर्वक सभी बातों का समय पर ध्यांन रखा जाए तो बहुत अच्छे परिणाम की आशा की जा सकती है. बोनसाई पौधों को रखने की जगह - बोनसाई पौधों को धूप, वायु स्वाभाविक रूप से मिलनी चाहिए. इसलिए पौधों को खुले स्थाबन पर रखा जाए.

बीमारियों और कीटों से बचाव - सामान्य पौधों की तरह बोनसाई को भी इनके दुश्मन कीड़ों और बीमारियों से बचाना चाहिए. फफूंदी, माहू (एफीड्स) तथा दीमक पौधों के बड़े शत्रु हैं. नजर आते ही इन्हें खत्म कर देना चाहिए. पत्तों के ऊपर छोटे कीडे-मकोडे आदि होने से वे पीले, भद्दे, टेढे-मेढे हो जाते हैं. अतः इन सबसे बचने के लिए यह जरूरी है कि समय समय पर कीटनाशक दवाएं छिड़कते रहें. अक्सर ये समस्यायएं धूप और पानी की कमी से भी उत्पन्न हो जाती है.

आज के आधुनिक युग में जहां आवासीय समस्या की कठिनाइयां शहरों में दिन प्रतिदिन बढ़ रही हैं. गगन-चुम्बी इमारतों का प्रचलन बढ़ रहा है. उद्यानों के लिए पर्याप्त जगह न मिलने के कारण प्रकृति तथा वनस्पति प्रेमी अपने निवास स्थल, कार्यालय, होटल तथा अन्य स्थानों पर ऐसे पौधों को लगाने की कोशिश करते हैं जो कि जगह कम घेरे, बहुत सालों तक चलता रहे तथा उनकी वृद्धि बहुत कम हो. साथ ही समय पर उनमें भी फल तथा फूल आएं या वर्ष भर उनकी पत्तियों की छटा बनी रहे. इन सभी समस्याओं का हल बोनसाई पौधों से हो जाता है. ये पौधे इस प्रकार की जरूरतों को पूरा करते हैं. साथ ही खाली समय के सदुपयोग तथा वृक्षों के प्रति अपनी चाहत को पूरा करने का सबसे उपयुक्त माध्यम है. आज तैयार बोनसाई पौधों की कीमत सैक़डों से हजारों में आंकी जाती है. सामान्य वनस्पति प्रेमी के लिए इन्हें खरीदना कठिन है. फिर क्यों नहीं अपनी गृहवाटिका पर ही उपयुक्त पौधों का चुनाव करके तथा सरल विधि का उपयोग करके बहुत सुन्दर बोनसाई पौधों को तैयार किया जाए.

आप खुद प्रयत्न तो कर देखिए. एक निराले किस्म की आनन्दानुभूति आप महसूस करेंगे.

दिव्य मशरूम - गेनोडर्मा

डा.सविता गुप्ता
डी-2/78, विनीत खण्ड-2, गोमती नगर लखनऊ, उ.प्र.226010

गेनाडर्मा उच्चतर फफूंद है जो पोलीपोर (मशरूम) जाति की है. यह अधिकतर मृतोपजीवी होती है. कुछ प्रजातियां वृक्षों में रोग भी उत्पन्न करती हैं. इसकी 80 प्रजातियां हैं, जो प्रत्येक स्थान पर उगती हैं. अनेक प्रजातियां उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में भी पायी जाती हैं. यह दूसरे पोलीपोर से भिन्न होती हैं क्योंकि इसके बेसिडोस्पोर (बीजाणु) में दोहरी भित्ती पायी जाती है, इन्हें 'शेल्फ मशरूम' या 'ब्रेकट फंजाई' कहते हैं. इनका प्रयोग पारंपारिक एशियाई औषधियों में आदिकाल से होता रहा है और यह सशक्त जैव औषधि है. यह आर्थिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण जाति हैं.

गेनोडर्मा नाम ग्रीक शब्द 'गेनोस' (Ganos) अर्थात 'चमकीली' तथा डर्मल 'त्वचा' से मिलकर बना है अतः 'चमकीली त्वचा'. 'ल्यूसिडम' शब्द लेटिन है जिसका अर्थ 'चमकीली' होता है.

गेनोडर्मा के बेसिडोकार्प (फलदेह या फ्रूटबोडीज) बड़े, बहुऋतुजीवी, लकड़ी की तरह सख्त होते हैं और 'कोर्क' भी कहलाते हैं. यह लिग्निनभक्षी, सख्त, कठोर तथा तने के साथ या तना रहित, गुर्दे के आकार के होते हैं. बेसिडोकार्प पंखे या हुक के आकार में उगती हैं. प्रारंभ में यह स्पंज के समान होती हैं परंतु बाद में चमकदार, चिकनी, कड़ी और लकड़ी के समान हो जाती हैं. इनका रंग भूरे से पीले तक तथा सामान्यतः लाल भूरा होता है. गेनोडर्मा जाति के कुछ स्ट्रेन्स के बेसिडोकार्प चौड़े, चपटे, शेल्फ की तरह मृत लकड़ी पर निकले होते हैं जबकि अन्य में तना छोटा, किडनी के आकार की छतरी तथा कुछ में अत्यधिक शाखा युक्त, मुद्गाकार, हिरन के सींग की तरह शाखाओं से युक्त मशरूम बनती है. बेसिडोकार्प या छतरी की निचली सतह पर गिल के स्थान पर अनगिनत छिद्र पाये जाते हैं, जो कि नलिकायें होती हैं, जिसमें बेसिडोबीजाणु बनते हैं. छिद्र की सतह क्रीम या हल्के रंग की होती हैं और बीजाणु भूरे रंग के होते हैं.

ग्रीष्म एवं पतझड़ ऋतु में गेनोडर्मा के बेसिडोकार्प परिपक्व हो जाते हैं एवं बीजाणु उत्पन्न करते हैं जो महीन चूर्ण के रूप में निकलते हैं, यह फफूंद का बीज है. इसमें पुष्पों के परागकणों की भांति जीवन के तथा औषधीय गुण होते हैं. वैज्ञानिक परीक्षणों से सिद्ध हुआ है कि बेसिडोकार्प की तुलना में बीजाणु 75 गुना अधिक प्रभावशाली होते हैं. 1000 कि.ग्रा. गेनोडर्मा से केवल एक कि.ग्रा.बीजाणु चूर्ण मिलता है. यह रोगों से बचने एवं उन्हें उपचारित करने में अत्यन्त मूल्यवान एवं दुर्लभ है. बीजाणु दोहरी पर्त वाले, ट्रंकेट, पीले से भूरे रंग के, अलंकृत आंतरिक पर्तो वाले होते हैं.

वर्गीकरण

गेनोडर्मा जाति का नामकरण पेट्टर एडोल्फ करस्टेन ने

1881 में किया गेनोडर्मेटेसी परिवार के सदस्यों का वर्गीकरण पारंपारिक रूप से करना कठिन माना जाता है क्योंकि इनकी शारीरिक संरचना की सशक्त जानकारी उपलब्ध नहीं है, पर्यायवाची की बहुतायत है तथा जाति के नामों का अनेक स्थानों पर गलत प्रयोग होता आया है. अभी तक जाति गेनोडर्मा को दो भागों में बांटा जाता है. 1. गेनोडर्मा - जिसकी ऊपरी सतह चमकदार हो जैसे - गे.ल्यूसिडम, 2. ऐल्फविनजिआ - जिसकी ऊपरी सतह निष्प्रभ हो जैसे - गे.एप्पलेन्टम.

जाति इतिहास संबंधी गणना (फाइलोजेनेटिक एनालिसिस) जो कि माइटोकोन्ड्रिया SSUr DNA के DNA सिक्वेन्स जानकारी पर आधारित है उससे गेनोडर्मा की विभिन्न प्रजातियों के बीच के संबंध को समझने में सहायता मिलती है. गेनोडर्मा जाति को 6 मोनोफाइलेटिक ग्रुप में विभक्त किया गया है -

1. गे. कोलोसस ग्रुप
2. गे. एप्पलेन्टम ग्रुप
3. गे. टस्यूगे ग्रुप
4. एशियन गे.ल्यूसिडम ग्रुप
5. गे. मेरीडीथीई ग्रुप
6. गे. रेसीनासियम ग्रुप

गे. ल्यूसिडम ग्रुप के अर्न्तगत अनेक प्रजाति हैं तथा फफूंद वैज्ञानिक उनके अंदर अंतर खोजने में लगे हैं.

गेनोडर्मा की मुख्य प्रजातियां -

गे.एप्पलेन्टम - इसे 'आर्टिस्ट कोंच' भी कहते हैं.

गे.ल्यूसिडम - रेशी या लिन्जझी, लाल रंग

गे.मल्टीपीलियम - उष्ण कटिबंधीय एशिया में गे.ल्यूसिडम के लिए वास्तविक नाम

गे.फिलिप्पी - पौधों में रोगकारक

गे.स्यूडोफेरियम - कोको, कॉफी, रबर तथा चाय में जड, सड़नरोग कारक

गे.टस्यूगे - कोनीफर विशेषतः 'हैमलोक' पर उगने वाली पोलिपोर इसीलिए आम नाम 'हैमलोक वार्निश शेल्फ' देखने में गे.ल्यूसिडम के समान है.

प्रसिद्ध चीनी फार्माकोलोजिस्ट डा.लीशिन - चेन ने 'दि आउटलाइन ऑफ हर्बल मेडिसिन' में गेनोडर्मा को रंग के आधार पर 6 श्रेणियों में विभक्त किया है - काली, बैगनी, नीली, सफेद, पीली तथा लाल गेनोडर्मा.

गेनोडर्मा का जादुई प्रभाव :-

गेनोडर्मा ल्यूसिडम का प्रयोग आदिकाल से चीनियों द्वारा उच्चकोटि की हर्बल औषधि के रूप में होता रहा है. इसको सभी औषधियों में सर्वोच्च तथा 'मिराकुलस किंग ऑफ हर्ब' कहा गया है क्योंकि लगातार लंबे समय तक इसका सेवन करने से कोई दुषपरिणाम या विपरीत प्रभाव नहीं देखा गया है. प्रथम लिखित दस्तावेज (कम्पेनडियम ऑफ मेटीरिआ मेडिका) जिसमें पोलीपोर मशरूम के औषधि गुण दिए गए हैं, पूर्वी हेन डाइनेस्टी (25-220AD) चीन का है. 2000 वर्ष पुरानी चीनी मेडिकल टेक्स्ट 'एन ओथेटिंक टेक्स्ट बुक ऑफ ओरिन्टल मेडिकल साईंस' में गे.ल्यूसिडम के औषधीय गुणों का वर्णन दिया गया है. आदि काल से ही इस मशरूम का वर्णन लोक औषधि के इतिहास में कैंसर के उपचार तथा शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को सुधारने में किया गया है. चीन और जापान के राजा युवा, स्वस्थ एवं लम्बे जीवन के लिए इसको अपनी विशिष्ट चाय के साथ मिलाकर प्रयोग करते थे. 4000 वर्षों से अधिक समय से चीन में रोग दूर करने में इसको अपनी विशिष्ट चाय के साथ मिलाकर प्रयोग करते थे. 4000 वर्षों से अधिक समय से चीन में रोग दूर करने में इसको प्रयोग किया जाता रहा है और इसे 'स्प्रिट मेडिसिन' (आध्यात्मिक औषधि) कहते हैं. आदि काल से ही यह मशरूम रहस्य की पर्तों से घिरी रही है क्योंकि इसके लंबे समय तक प्रयोग करने से मनुष्य जवान एवं दीर्घायु होता है परन्तु वैज्ञानिक रूप से इसको सिद्ध करने की कोशिश नहीं की गई.

जिस प्रकार प्राचीन चीन में इसे 'समृद्धि, वैभव तथा शांति का प्रतीक' तथा 'उपहार का सामान' आदि माना जाता था उसी प्रकार आज के आधुनिक युग में लोगों द्वारा यह 'चमत्कारी जड़ी-बूटी' अमरत्व प्रदान करने वाली समझी जाती है. चीनी, जापानी, वियतनामी तथा अन्य विदेशी विद्वानों तथा वैज्ञानिकों ने आधुनिक खोजों, सहयोगी विश्लेषण और अस्पतालों, कालेजों एवं औषधि निर्माणकारी संस्थाओं द्वारा किए गए क्लिनिकल परीक्षणों से इसका प्रभाव खोजा. पोलीपोर के पोलीसेकराइड पर आधुनिक खोज 1969 में जापान में शुरू हुई जहां इकेगाव ने 'सरकोमा-180 संक्रमित' स्विस एलबीनो माइस पर अनेक खाने योग्य पोलीपोर के गर्म पानी के आसव के प्रयोग से ट्यूमर विरोधी गतिविधियां देखी.

गे.ल्यूसिडम यकृत को सुरक्षा प्रदान करने वाला, रक्तचाप नियामक, आंत नियामक, कार्डियोटोनिक, मूत्रवर्धक, हेमाकेथार्सिस, शरीर से अशुद्धि दूर करने वाला, कोल्ड टॉनिक, कासरोधी, कफोत्सारक, ट्यूमर विरोधी, ट्रेन्कुलाइजर है.

इसके प्रयोग से तुरंत यकृत, फेफड़े की डिसआर्डर, एलर्जी रिएक्शन, हृदय की बीमारियों, एड्स आदि में राहत मिलती है. यह गहरे धब्बों, मुहांसों में भी सुधार लाता है.

औषधि के रूप में प्रयोग

गेनोडर्मा की अनेक प्रजातियों को पारंपारिक एशियन औषधियों में हजारों वर्षों से प्रयोग किया जा रहा है. इनका सामूहिक रूप से विश्लेषण अनेक बीमारियों के लिए किया गया एवं इनके कैंसर विरोधी प्रभाव, फफूंद, शाकाणु एवं जीवाणु विरोधी, रक्त कोलेस्टरोल को कम करने वाला, इम्यूनोरेगुलेटरी प्रभाव, यकृत की सुरक्षा, हाइपोग्लाइसिमिक प्रभाव आदि पाया गया. आज बाजार में उपलब्ध शरीर का वजन कम करने की औषधियों में गेनोडर्मा सर्वाधिक मूल्यवान हैं. यह शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाती है एवं कैंसर रोगियों पर कीमोथिरेपी से होने वाले दुष्परिणामों को दूर करती है. कैंसर रोगियों के लिए यह पीड़ाहारी (पैलिएटिक) है. इससे पसीना एवं अनिद्रा कम हो जाती है और रोगी को आराम मिलता है.

गेनोडर्मा ल्यूसिडम

यह औषधि के रूप में प्रयुक्त होने वाली समस्त मशरूम में सर्वाधिक पुरानी है. 'लिन्जझी' का नाम 'अमेरिकन फार्माकोपोइआ एवं थिराप्युटिक कमपेनडियम' में दिया हुआ है. लिन्जझी फफूंद का 2000 वर्ष पुराना इतिहास है. इसके सबसे पहले प्रमाण पूर्वी हेन डाइनेस्टि (25-220 ए.डी.) में मिलते हैं. चीनी भाषा में लिन्जझी (Lingzhi) दो शब्दों 'लिग्न' अर्थात पवित्र, रहस्यमयी, पवित्र आत्मा तथा 'झी' अर्थात फफूंद, बीज, मशरूम, शाखा, उम्र को बड़ाने वाला पौधा आदि से बना है.

लिन्जझी के अनेक पर्यायवाची हैं रूईकाओ (Ruicao) अर्थात पवित्र पेड़, अत्यधिक प्राचीन है. यह नाम तीसरी शताब्दी बी.सी.ई. का है. यहां 'रूई' का अर्थ पवित्र तथा 'काओ' का अर्थ पौधा या औषधि है. इसका अन्य चीनी नाम रूईझी (Ruizhi) (मंगलसूचक मशरूम), शेमझी (Shemzhi) (दिव्य मशरूम) है. वियतनाम में इसको 'लिन्ह ची' कहते हैं अर्थात 'अलौकिक मशरूम'. जापान में इसे रेईशी (Reishi) या मैन्नटेक कहते हैं.

यह संसार की सबसे सुंदर मशरूम है. यह ओक पर परजीवी है तथा कड़ी लकड़ी की श्रेणी के मृत वृक्षों पर मृतोपजीवी है. यह विश्व भर में उष्ण कटिबंधीय तथा शीतोष्ण क्षेत्रों में उगती है. यह लकड़ी को सड़ानेवाली फफूंद है जो सफेद सड़न पैदा करती है. इसमें लिग्निन तथा सेल्युलोज को तोड़ने वाले एंजाइम पाये जाते हैं. यह अधिकतर वृक्षों के तने व भूमि के मिलन वाले स्थान पर अकेले ही उगती है तथा एक वर्षीय होती है. यह मुख्यतः दो आकार में मिलती है - (1) उत्तरी अमेरिका में बड़ी और तना रहित (2) मुख्यतः उष्ण प्रदेश मे छोटी और एक पतली डंडी (तने) के साथ. (चित्र-1) इसके अतिरिक्त दोनों प्रकार के बीच के अनेक आकार मिलते हैं जो भिन्न-भिन्न प्रजाति प्रतीत होती हैं (चित्र-1). बेसिडोकार्प का आकार वातावरण के ऊपर भी निर्भर करता है. उदाहरण के लिए जब CO_2 अधिक होती है तो तना लम्बा होता है, इसकी कमी से सींग जैसी आकृति बनती है और छतरी नहीं बनती है. रंग से भी प्रजातियां पहचानी जाती हैं. लाल रेशी पर अब तक सबसे अधिक खोज की गयी है.

मशरूम की संरचना

छतरी - मशरूम की छतरी 2-30 से.मी. व्यास की होती है. यह प्रारंभिक अवश्था में मुद्गाकार या लंबी बाद में वयस्क होने पर पंखे के आकार की, चमकदार, वार्निश चढ़ी रंगत लिए लगती है. युवा अवस्था में छतरी चमकीली पीली बीच में और किनारों पर सफेद होती है. परिपक्व होने पर इसका रंग लाल से लाल भूरा हो जाता है. छतरी को तोड़ने पर अंदर से गूदा मुलायम और भूरे रंग का दिखता है जो परिपक्व होने पर कड़ा हो जाता है.

छिद्र - छतरी की निचली सतह पर गिल के स्थान पर छिद्र पाये जाते है. (चित्र-1-1घ). इनकी सतह पहले सफेद परंतु बाद में भूरी हो जाती है. छिद्रों की संख्या 4-7 प्रति मि.मी.होती है, जो नग्न आंखों से दिखायी नहीं पड़ते हैं. यह छिद्र नलिकाओं के गोल सिरे होते हैं और नली छतरी में 2 से.मी. तक गहरी हो सकती है. नली की सतह पर बेसिडिया पायी जाती हैं जहां जीवन की तीन महत्वपूर्ण घटनाएं घटती हैं.

तना - यह अधिकतर मशरूम में पाया जाता है. इसकी लम्बाई 3-14 से.मी. मोटाई 3 से.मी. तक, ऐंठा हुआ छतरी की तरह वार्निश चढ़ा हुआ लगता है. कभी-कभी तना छतरी के एक किनारे से लगा होता है. यह भूमि में फैले हुए कवक जाल में जुड़ा रहता है और मशरूम वहीं से अपना भोजन लेता है.

बीजाणु - बेसिडो बीजाणु छतरी की निचली सतह पर बेसिडिया में बनते हैं. यह 9-15X5.5-8 μ , अण्डाकार, एक किनारा ट्रंकेट, सतह चिकनी, दोहरी भित्ती, जिसमें दो

चित्र-1
गेनोडर्मा मशरूम के विभिन्न आकार

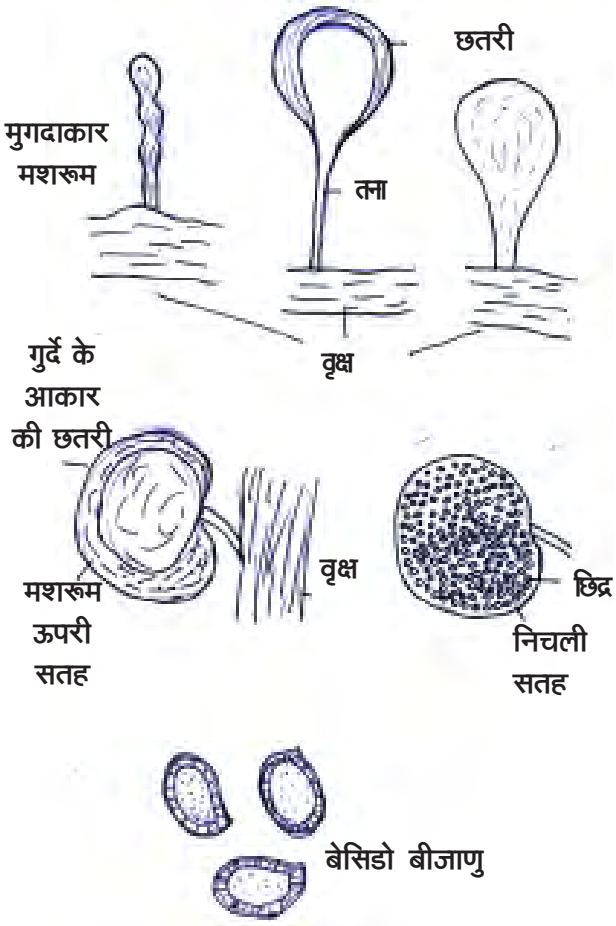

चित्र - 1-1
गेनोडर्मा मशरुम के विभिन्न आकार

दीवारों के मध्य खंभे दिखायी देते हैं, सीटी एवं सिस्टिडिया नहीं पाए जाते हैं. कवक तंतु डाइमिटिक होता है. (चित्र-1)

जीवन चक्र - इस फफूंद का जीवन चक्र बीजाणु से प्रारंभ होता है जो अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरण के बाद कवक जाल बनाते हैं (चित्र-2 ख). यह कवक जाल प्रारंभ में सफेद होता है और मृत पत्तियों, तने आदि पर फैला रहता है तथा दृष्टिगोचर नहीं होता है. प्राथमिक कवक जाल की कोशिकाएं एक केंद्रक, अगुणित (n) तथा पट्ट युक्त (सेप्टा) होती हैं और बीजाणु से भोजन लेती हैं. दो भिन्न स्ट्रेन्स की कोशिका के मध्य प्लाजमोगैमी होती है (चित्र-2 घ) और नया कवक जाल बनता है जिसकी कोशिका में दो केन्द्रक (विभिन्न स्ट्रेन्स) होते हैं. यह द्वितीय कवक जाल फफूंद की बढ़वार के लिए नहीं बनता है वरन् इसमें लकड़ी को गलाने वाले सशक्त एन्जाइम जैसे हाइड्रोलेज उत्पन्न होते हैं. यह द्वितीय कवक जाल वर्षों तक बढ़ सकता है तथा शाखायुक्त कवक जाल बनाकर लकड़ी को चारों तरफ से घेरकर अपना भोजन लेता रहता है. अब फफूंद की बढ़वार के लिए वातावरण अनुकूल नहीं होता है तब द्वितीय कवक जाल आपस में मिलकर और ऐंठकर एक घनी आकृति जिसे प्राइमॉर्डियम कहते हैं, बनाते हैं. यह तृतीय कवक जाल है जो फल देह या बेसिडोकार्प बनाते हैं और वृक्ष की सतह पर दिखाई देते हैं. इनका निर्माण लैंगिक जनन के लिए होता है (चित्र 2 छ). बेसिडोकार्प की निचली सतह पर हाइमिनियम पर्त में बेसिडिया का निर्माण होता है जहां विभिन्न स्ट्रेन्स के केंद्रक का समेकन होता है और अल्पकालीन द्विगीणित बेसिडिया बनती हैं जिसमें अर्धसूत्रण के पश्चात चार अगुणित केंद्रक बनते हैं, जो चार बीजाणु में प्रवेश कर जाते हैं (चित्र 2 झ). यह दबाव से बाहर निकलते हैं और वायु द्वारा फैल कर उचित माध्यम पर अंकुरित होकर पुनः नये कवक जाल का निर्माण करते हैं.

गेनोडर्मा का रासायनिक विश्लेषण -

गेनोडर्मा गूढ़ कार्बोहाइड्रेट जैसे प्रोटीन, ट्राईटरपीनायड, पानी में घुलनशील पॉलीसेकराइड्स से बना होता है. यह

चित्र - 2
गेनोडर्मा ल्यूसिडम का जीवन चक्र

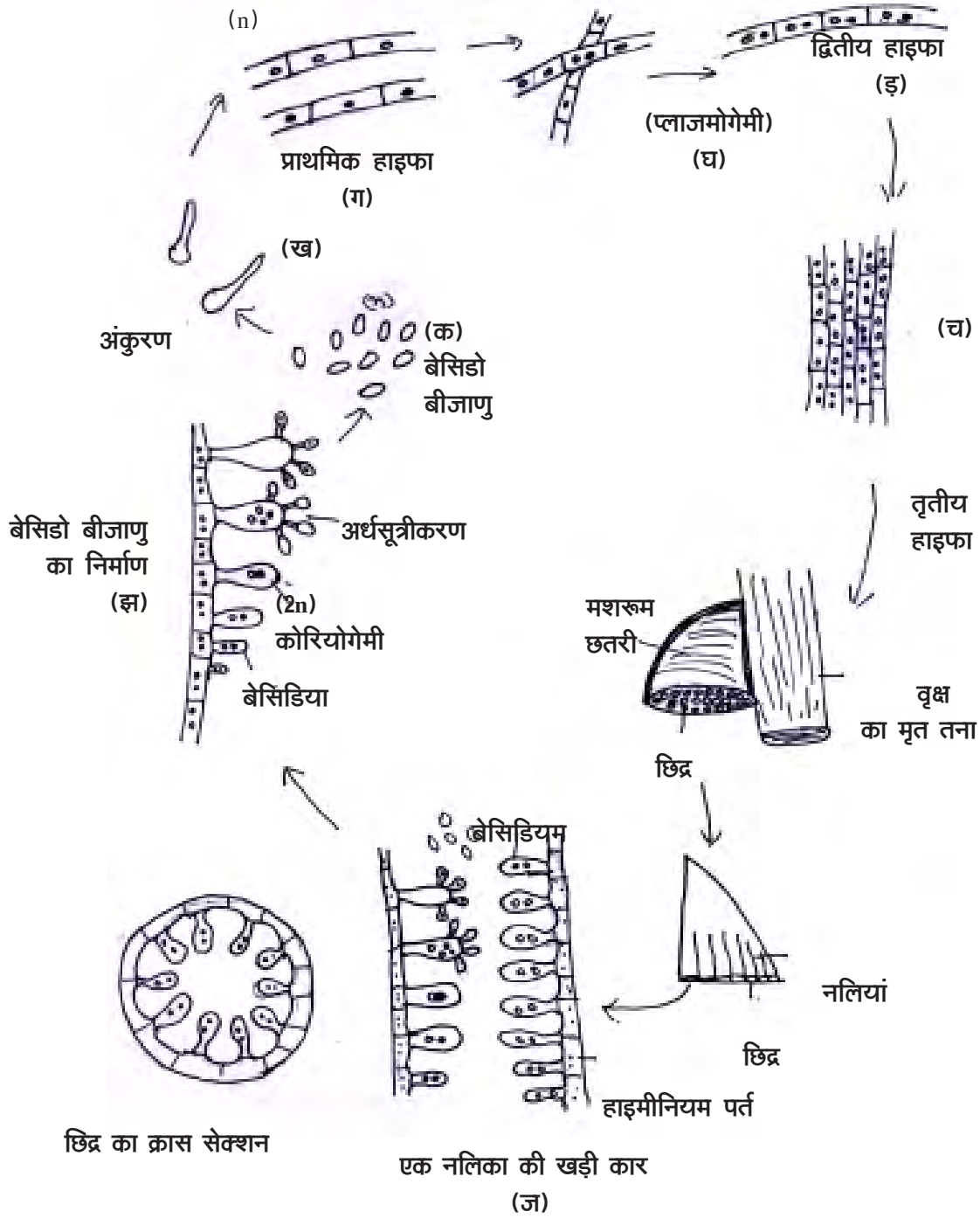

गूढ़ कार्बोहाइड्रेट रक्त दबाव को कम करने, शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक होती है.
(तालिका-1)

ट्राईटरपीन्स - इन्हें गेनोडेरिक रसायन भी कहते हैं. इसमें एन्टीहिस्टामीन की तरह गुण होते हैं अतः एलर्जी को दूर करता है. ट्राईटरपीन्स स्वाद में कड़वे होते हैं और मशरूम

का स्वाद जितना अधिक कड़वा होगा उसमें ट्राइटरपीन्स उतना अधिक होगा. गे.ल्यूसिडम

तालिका - 1
वर्ष 2004 तक उपलब्ध शोध के अनुसार गैनोडर्मा के साधारण यौगिक एवं उनका प्रभाग

यौगिक	प्रभाव
एडीनोसीन	एन्टीप्लेटलेट्स एग्रीगेशन
लेक्टिन्स	माइटोजेनिक
पोलीसेकराइड्स	एन्टी फाइब्रिओटिक एन्टी हरपेटिक एन्टी इनफ्लेम्मेटरी हीपेटो प्रोटेक्टिव हाइपो ग्लाइसेमिक इम्यूनो मोड्यूलेटरी - एन्टीट्यूमर रेडिएशन प्रोटेक्टर, डी.एन.ए.डेमेज एन्टीऑक्सीडेन्ट
प्रोटीन ("LZ-8")	इम्यूनोड्यूलेटरी इम्यूनोसप्रेसिव
टरपीनोइड्स एवं संबंधित यौगिक	एन्टीबेक्टिरियल एन्टीकोम्पलीमेंट एन्टी इन्फलेम्मेटरी एन्टी ऑक्सीडेन्ट एन्टी प्लेटलेट एग्रीगेशन एन्टी वाइरल साइटोटॉक्सीसिटी एन्ज़ाइम इनहिबिटर हीपेटो प्रोटेक्टिव कोलेस्टरॉल इनहिबिटर हाइपोटेन्सिव एन्टी एच.आई.वी.

ट्राइटरपीन्स ग्रुप के रसायन उत्पन्न करता है जिसे गेनोडेरिक अम्ल कहते हैं. (चित्र-3). यह एक भिन्न कार्बनिक यौगिक 'टरपीन्स' के सदस्य होते हैं जो कि असंतृप्त हाइड्रोकार्बन है और साधारणतः पौधों के सगंध तेल तथा रेसिन्स में पाये जाते हैं. इसकी आणविक संरचना स्टेरॉयड हारमोन जैसी होती है इसमें पोली सेकराइड (जैसे कि बीटा ग्लूकन) काऊमेरिन, मेन्निटॉल एवं अल्कलायड होते हैं.

ट्राईटरपीनायड्स एवं स्टिरोल्स - टरपीनायड्स 4 वर्ग

चित्र - 3
गेनोडेरिक अम्लों की रासायनिक संरचना

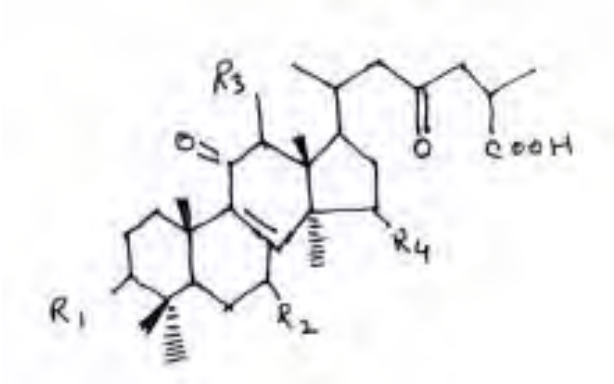

Ganoderic acid
C_2 (1) : $R_1 = R_2 = \beta$-O H, R_3 = H, $R_4 = \alpha$ - OH
Ganoderic acid β (2) : $R_1 = R_2 = \beta$-O H, R_3 = H, R_4 = O
Ganoderic acid AM_1 (3) : $R_1 = \beta$ -O H, $R_2 = R_4 = R_3$ = H

गेनोमेस्टिनॉल की रासायनिक संरचना

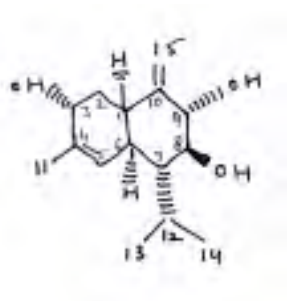

Ganomastenol A

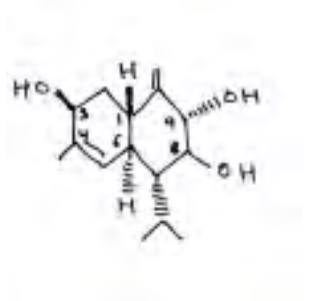

Ganomastenol B

के बने होते हैं -

1. वाष्पशील मोनो एवं सेसक्विटरपीन्स (एसेन्शियल ऑयल) (C_{10} एवं C_{15})
2. कम वाष्पित डाईटरपीन्स (C_{20})
3. अवाष्पित ट्राईटरपीनायड्स एवं स्टिरोल्स (C_{30})
4. कैरोटिनॉयड पिगमेन्ट (C_{40})

गेनोडर्मा पर अधिकतर कार्य कम वाष्पित ट्राईटरपीनॉयड (ट्राईटरपीन्स) एवं स्टिरोल पर किया गया है. ट्राइटरपीन की रासायनिक संरचना 'लेनोस्टिरोल' पर आधारित है जो

चित्र-4
गेनोडर्मा के रासायनिक तत्वों की संरचना

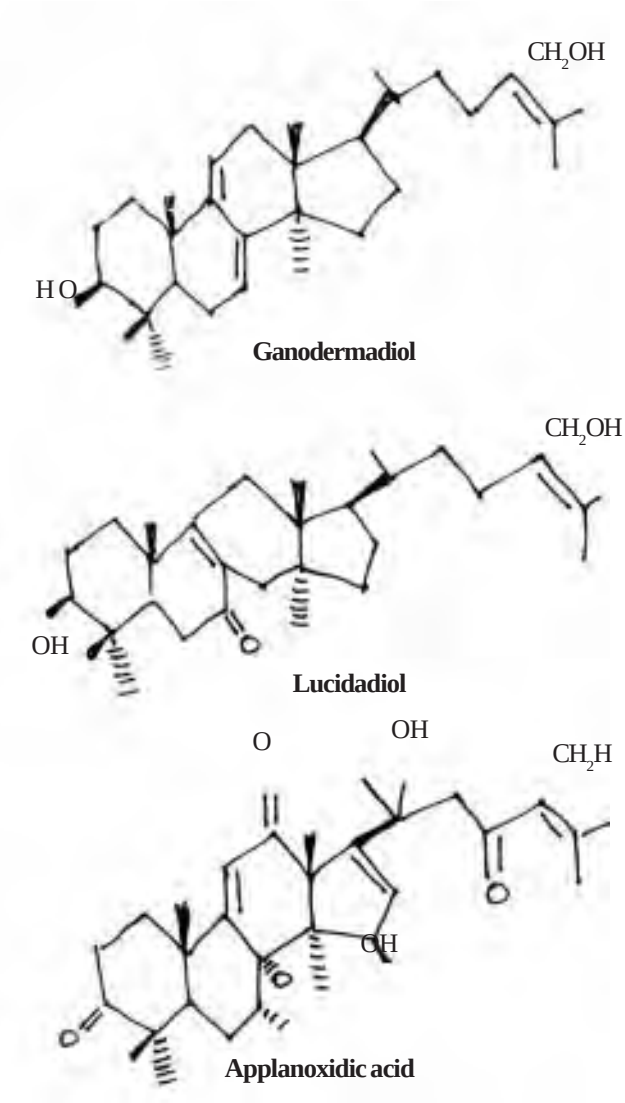

कि एक महत्वपूर्ण रसायन है और क्रिया के मध्य में बनता है.

ताइवान में हुए शोध से (2001) दो नए ट्राईटरपीनायडस नाम - ल्यूसिडेनिक अम्ल N एवं मिथाइल ल्यूसीडीनेट F, इसके अतिरिक्त 4 ज्ञात यौगिक ल्यूसीडेनिक अम्ल A, ल्यूसीडीनोलेक्टोन, ल्यूसीडेनिक-अम्ल C, गेनोडेरिक अम्ल E, गे.ल्यूसिडम की सूखी बेसिडोकार्प से निकाले गए और इनकी संरचना स्पेक्ट्रल एवं रासायनिक ट्रांसफारमेशन विधि से ज्ञात की गई. इनमें से ल्यूसिडेनिक अम्ल N, ल्यूसिडेनिक अम्ल A तथा गेनोडेरिक अम्ल E में हेप जी 2, हेप जी जेड, जेड, 15 एवं पी.-388 ट्यूमर कोशिकाओं के लिए उल्लेखनीय या विशेष साइटोटॉक्सिक प्रतिक्रिया पायी गई है.

गे.ल्यूसिडम के बीजाणुओं से निकाले गए गेनोडेरिओल F, गेनोडरमेननट्रिओल, गैनोडेरिक अम्ल β में उल्लेखनीय एच.वाई.वी.-1 के विरूद्ध प्रोटिएज प्रतिक्रिया पायी जाती है. आस्ट्रेलिक अम्ल ट्यूमर विरोधी है. गेनोडेरिक अम्ल C एवं D चूहों में हिस्टामीन निकलने से रोकता है, अतः यह एलर्जी को रोकने में सहायक हो सकता है. वर्ष 2004 में छपे शोध पत्र के अनुसार यूरोपियन पोलीपोर गे.फेइफेररी से वाइरस विरोधी ट्राइटरपीन्स निकाली गयी हैं. गेनोडरमेडिओल, ल्यूसीडाडिओल एवं अप्लानोक्सिडिक अम्ल इन्फ्लुएन्जा वाइरस टाईप ए तथा एचएसवी-1 वाइरस विरोधि प्रतिक्रिया दिखाते हैं. (चित्र-4). गे.ल्यूसिडम से 3 नए लेनोस्टेन टाईप ट्राइटरपीन अल्डीहाइडस 'ल्यूसिअल्डीहाइड A-C" निकाले गए. इनमें से सबसे सक्रिय यौगिक 'ल्यूसिअल्डीहाइड A" निकाले गये. इनमें से सबसे सक्रिय यौगिक 'ल्यूसिअल्डीहाइड C", म्यूरीन सारकोमा मेथ A" सारकोमा S-180, मनुष्य का ब्रेस्ट कैंसर T--47Dएवं लीविस (Lewis) लंग कारसीनोमा LLC कोशिकाओं के विरूद्ध साइटोटाक्सिक है. इसकी ED_{50} मूल्य 3,8,7,1,4.7, 10.7 μg/मि.ली.क्रमशः है.

गे.ल्यूसिडम के बीजाणु एवं प्रयोगशाला में उत्पन्न माइसीलियम के रासायनिक तत्व पता करने पर ज्ञात हुआ है कि इसमें स्टेराल, मुख्यतः अरगोस्टराल (0.3-0.4प्रतिशत) एवं अरगोस्टराय परआक्साइड, β सीटोस्टेराल, 2 4-मिथाइल कोलेस्टा-7, 22 डिएन-3-β-ol, तथा दूसरे स्टेरोल ऐस्टरस फंगल लाइसोजाइम्स, एसिड प्रोटिएज, तथा अन्य एन्जाइम्स (लेक्केज, सेल्यूलेज, एमाइलेज, एन्डोपोलीगेलेक्टयूरोनेज आदि.) पानी में घुलनशील प्रोटीन, पोलीपेप्टाइड, अमीनो एसिड, ट्रेहलोज एवं अन्य शर्करा बीटेन, एडिनोसीन, अलकेन्स (टेट्राकोसेन, हेनट्राईएकनटेन) एवं पैट्टी एसिडस (टेट्रकोसेनोइक, स्टिएरिक, पाल्मिटिक, नॉनएण्डीकेनोइक एवं बेनिक एसिड) पाये जाते हैं. ट्राइटरपीन्स (मुख्यतः लेनोस्टेन टाइप) जिसमें गेनोडेरिक अम्ल, ल्यूसिडेरिक अम्ल, ल्यूसिडोन्स, और ल्यूसिअल्डिहाइडस, गेनोल्युसिडिक अम्ल, ल्युसिड्युमोल A, गेनोडेराल A आदि शामिल हैं.

पोलीसेकराइड - चीन जापान एवं कोरिया में हुए अध्ययनों से पता चलता है कि इसमें कैंसर रोधी प्रभाव हैं. इसमें क्रियाशील कैंसर रोधी तत्व बीटा-डी-ग्लूकन है. यह एक पालीसेकेराइड है, मूलरूप से यह एक विशाल शर्करा अणु है जो अनेक छोटी-छोटी शर्करा अणुओं से बना होता

है, जो आपस में तथा अमीनों एसिड से बंधी होती है. यह जटिल शर्करा प्रतिरोधक क्षमता को उत्तेजित या ठीक करती है. यह प्रतिरोधक कोशिकाओं का जमकर विरोध करती हैं.

गे.ल्यूसिडम के बीजाणु से पोलीसेकराइड LZpS-1 को प्रथम बार अलग किया गया. इसका आणविक भार HPGPC तकनीक से 8000 था एवं इसका आकार 'ग्लूकन' था. LZpSका प्रयोग चूहों पर 'सरकोमा 180' तथा 'लीविस लंग कैंसर' पर करने पर NK कोशिका कार्यशीलता बढ़ी हुई पायी गई तथा इसमें ट्यूमर को रोकने की क्षमता पायी गई.

सक्रिय अभिकर्मक - गे.ल्यूसिडम में 200 से अधिक सक्रिय तत्व पाए जाते हैं. जिसमें प्रमुख हैं - पोलीसेकराइड, कार्बनिक जरमेनियम, एडीनोसीन, ट्राईटरपीनॉयड तथा गेनोडेरिक तत्व.

यह क्रियाशील यौगिक मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं. यह लिम्फोसाइट्स एवं मेक्रोफेजेस जो कि मुख्य रोग प्रतिरोधी कोशिकाएं हैं, तो शक्ति प्रदान करते हैं. कार्बनिक जरमेनियम के अतिरिक्त ट्राईटरपीन्स एवं पोलीसेकराइड स्वतः भी लिम्फोसाइट्स एवं मेक्रोफेज कोशिकाओं के संयोजन को बढ़ाकर ट्यूमर नेक्रोसिस फेक्टर (TNA) एवं इन्टरफेरान को मुक्त करते हैं जो कैंसर कोशिकाओं को नष्ट कर देते हैं. शोध से ज्ञात हुआ है कि गे.ल्यूसिडम औषधि द्वारा एल्फा एवं गामा इन्टरफेरान का स्तर प्रभावी ढंग से मनुष्य के शरीर में बढ़ जाता है जो उसके प्रतिरोधक तंत्र को और अधिक शक्ति प्रदान करने के साथ ही नियंत्रित करता है.

गेनोडर्मा से लाभ -

1. रक्तचाप - यह प्लेटलेट्स के एकत्रीकरण को रोकता है, जिससे रक्त का थक्का बनना रूकता है और रक्त चाप कम हो जाता है. शोधों से ज्ञात हुआ है कि रेशी को 2 सप्ताह तक लेने से रक्त चाप में उल्लेखनीय कमी आती है. यह प्लैक (Plauqe) बनने का विरोध करती है और रोग निवारण तथा रोग को ठीक करती है. प्लैक फैटी पदार्थ है जो कि ऑक्सीकृत कोलेस्ट्रॉल, कैल्शियम एवं खराब सफेद रक्त कोशिकाओं से बना होता है. यह धमनियों की दीवार पर जमा हो जाता है जिससे उनका रस्ता पतला हो जाता है और रक्त का प्रवाह रूकता है. गेनोडेरिक अम्ल तथा अन्य ट्राटिरपीन्स कोलेस्ट्रॉल बनने की प्रक्रिया को रोकते हैं, एथेरोस्क्लेरोसिस से बचाता है, रक्त थक्का बनने की क्रिया को कम करता है.

2. प्रतिरोधक तंत्र - शोधों से ज्ञात हुआ कि 30 दिन तक इसका प्रयोग करने से ट्यूमर के गंभीर रोगियों में प्रतिरोध क्षमता में सुधार देखा जाता है. 'लिम्फोसाइट्स' में बढ़ोत्तरी एवं 'सीडी 8 काउंट' घटे हुए पाये जाते हैं. इसके अतिरिक्त रेडिएशन एवं कीमोथिरेपी के दुष्प्रभाव में कमी तथा आपरेशन के पश्चात शीघ्र स्वास्थ्य लाभ होता है.

3. रक्त शर्करा - यह रक्त शर्करा को कम करता है. यह क्रिया मशरूम में उपस्थित पोलीसेकराइड्स के कारण होती है.

इसके तीन मुख्य तंत्र है.

i. गे.ल्यूसिडम में प्लाज्मा इन्सुलिन की मात्रा को बढ़ाने की क्षमता है.

ii. यह परिधीय ऊतकों द्वारा ग्लूकोज के उपयोग को बढ़ाता है.

iii. यकृत के ग्लूकोज मेटाबोल्जिम को बढ़ाता है.

4. सूजन विरोधी प्रभाव :- दिसंबर 2009 की शोध जो 'करेन्ट फार्मास्युटिकल बायोटेकनोलोजी' में छपी है, गेनोडर्मा में सूजन विरोधी तथा इम्यूनोमोड्यूलेटिंग गुण पाए जाते हैं. अतः यह पुरानी सूजन एवं आटो इम्यून डिसआर्डर जैसे - आर्थराइटिस (गठिया) के उपचार में लाभदायक है. एक अन्य शोध से पता चला है कि 50 मि.ग्रा.रेशी चूर्ण का प्रभाव 5 मि.ग्रा. हाड्रोकोरटीसोन जो कि एक कोर्टीकोस्टीरायड है, के (बराबर) तुलनात्मक है, जो आर्थराइटिस की सूजन एवं दर्द के उपचार में प्रयुक्त होता है.

5. आक्सीजीनेशन :- यह रक्त में आक्सीजन की मात्रा बढ़ाकर ऊंचाई से उत्पन्न अस्वस्थता को कम करता है. पहली बार एशियन पर्वतारोही, जो 17000 फीट की ऊंचाई तक चढ़े थे, उन्होंने अनुभव किया कि उन्हें ऊंचाई से उत्पन्न अस्वस्थता बहुत कम हुई. एनसाइक्लोपीडिया के अनुसार गेनोडर्मा में एन्टीआक्सीडेन्ट की मात्रा सभी खाने योग्य पदार्थों से अधिक होती है.

6. नर्वसपर (नसों को सुधारने वाला) :- जापान में रेशी के सूखे माइसीलियम 'न्यूरोसिस' जो कि 'वातावरण के दबाव' से होता है, के उपचार में अत्यंत प्रभावी पाए गए हैं. अल्जाइमर रोग के उपर 8 माह तक हुए अध्ययन में देखा गया कि रेशी माइसिलियम के उत्पाद का सेवन करने में मरीजों में उल्लेखनीय सुधार हुआ है. गे.ल्यूसिडम को चीन एवं जापान के हर्बल चिकित्सकों द्वारा इनसोम्निया की पारंपारिक चिकित्सा में अनुमोदित किया गया है क्योंकि

इसमें 'नींद बढ़ाने वाला प्रभाव' पाया जाता है. लम्बे समय तक प्रयोग करने से 'जल्दी टूटने वाली नींद' में उल्लेखनीय सुधार पाया गया है. चीन में मानसिक तथा नर्व संबंधी रोगों के लिए तथा मांसपेशियों, एनोरक्सिआ एवं लंबे समय से अस्वस्थ रहने से उत्पन्न अक्षमता में इसको प्रयोग करने की सलाह दी जाती है. चीन में इसका प्रयोग मांसपेशियों की विश्रांति तथा दर्द निवारक के रूप में किया जाता है. एक अध्ययन में 20 में से 18 रोगियों में 4 महीनें के प्रयोग के बाद व्यग्रता या उत्कण्ठा बढ़ी हुयी पायी गई.

7. एन्टीएलर्जिक/एन्टीइन्फ्लमेटरी एक्शन - 1970-1980 के दशक में चीन एवं जापान में गे.ल्यूसिडम के एलर्जी विरोधी गुण पर अध्ययन किया गया. परिणामों से ज्ञात हुआ है कि इसका रस विभिन्न प्रकार की एलर्जी को दूर करता है तथा अस्थमा एवं संपर्क या स्पर्श त्वचा का प्रगह (डर्मेटिसिस) पर भी प्रभाव हैं. 1990 में यूनिवर्सिटी ऑफ टेकसास हेल्थ साईंस सेन्टर, सेन एन्टोरिओ में हुए शोध से ज्ञात हुआ है कि गे.ल्युसिडम अकड़ी गर्दन, अकड़े कंधे, कंजक्टीवाइटिस, ब्रोन्काइटिस, रियुमेटिस्म आदि के उपचार में प्रभावी है तथा प्रतिरोधक क्षमता को बिना किसी विशेष दुष्प्रभाव के बढ़ाती है.

8. कैंसर रोधी :- पहले समझा जाता था कि गे.ल्यूसिडम की कैंसर रोधी क्रिया केवल शरीर के रोग रोधी क्षमता को बढ़ाने से होती है परन्तु वर्ष 2005 में ल्यि और झेंग द्वारा सिद्ध किया गया कि उपरोक्त कारण के अतिरिक्त कोशिकाओं के विभिन्नीकरण में बढ़ोत्तरी, फेज-।।- मेटाबोलाइज एन्जाइम्स में बढ़ोत्तरी, एन्जियोजेनसिस में रूकावट तथा यूरोकाइनेज - टाइप प्लाजमिनोजेन एक्टिवेटर (uPA) और कैंसर कोशिका में uPA रिसेप्टर को अभिव्यक्ति के रूकावट आदि मुख्य कारण हैं. कैंसर विरोधी प्रबाव DNAपोलीमरेज के निषेध के कारण, साइटोकीन उत्पादन के उत्तेजित होने या रासओनको प्रोटीन के पोस्टट्रांस्लेशनल माडीफिकेशन के अवरोध के कारण होता है.

गेनोथिरेपी :-

यह गेनोडर्मा आधारित पदार्थों का सेवन करने की प्रक्रिया है, विशेषतः आर.जी.(रेशीगेनो) एवं जी.एल. (गेनोसीलियम). गेनोथिरेपी के अनुसार अस्वस्थ होने के दो कारण हैं - 1. शरीर में विषैले पदार्थों का जमाव. 2. शरीर का अनियंत्रित संचालन अर्थात शरीर के कार्य कलापों के मध्य संतुलन न होना.

क्या गेनोडर्मा ईलाज हैं :- गेनोथिरेपी का मत है कि गेनोडर्मा किसी बीमारी, अस्वस्थता या रोग का इलाज नहीं है वरन् यह शरीर को संतुलित होने में सहायता देता है, विषैले पदार्थों को शरीर से निकालता है तथा शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर इसके सुरक्षा तंत्र को सुधारता है.

गेनोडर्मा के लिए शरीर में उत्पन्न प्रतिक्रिया :- हमारे शरीर में गेनोडर्मा के विरुद्ध जो भी प्रतिक्रिया होती है, वह हमारे शरीर के तंत्र के कारण है. हमारा शरीर स्वयं इसके विरुद्ध प्रतिक्रिया देता है. गेनोडर्मा स्वयं प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं करती है. यह रोग की औषिध नहीं है वरन् भोजन में सम्मिलित स्वास्थ्य वर्धक पदार्थ है जो शरीर को स्वस्थ्य रखने में सहायता करता है.

गेनोथिरेपी की विधि :- इसका प्रारंभ खाली पेट 1 भाग रा.जी. और जी.एल.को लेकर किया जाता है. यदि किसी को अल्सर या पेट की कोई अन्य बीमारी है तो कुछ खाकर प्रयोग करना चाहिए. 7-10 दिनों के पश्चात जब शरीर इसके प्रयोग का आदि हो जाए तब 1 भाग सुबह एवं 1 भाग शाम को प्रयोग किया जा सकता है, गेनोथिरेपी के दौरान पानी ज्यादा लेना चाहिए तथा 'विटामिन सी' लेना चाहिए, यह शरीर से विषैले पदार्थों को निकालने तथा शरीर को विषमुक्त करने में सहायता करेगा.

विपरीत प्रभाव :- गेनोडर्मा प्रयोग करने पर कुछ व्यक्तियों में इसके विपरीत प्रभाव भी देखे जाते हैं -

अप्राकृतिक रक्तस्राव - यह घाव भरने की क्षमता को प्रभावित करता है.

रक्तदाब में कमी - यह रक्त दाब की दवाओं से प्रतिक्रिया कर सकता है.

पेट की गड़बड़ी - इसके साधारण लक्षण दर्द, उल्टी, डायरिया, उबकाई आदि हैं.

यकृत का प्रभाव - यकृत के रोग होने पर इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए.

जिस प्रकार से किसी भी औषधि का सेवन चिकित्सक से परामर्श के उपरांत ही करना चाहिए उसी प्रकार से गेनोडर्मा का भी सेवन चिकित्सक की देखरेख में शरीर की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर करना चाहिए. जिससे इसका कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़े.

गेनोडर्मा ल्युसिडम की खेती :- प्रकृति में पाये जाने वाली मशरूम बहुत दुर्लभ है और इसे एकत्र करना भी कठिन होता है. यदि यह किसी को प्राकृतिक रूप से उगती मिल भी जाती है तो वातावरण के प्रभाव तथा परिपक्वता के कारण इसके समुचित गुण नष्ट हो जाते हैं. परिपक्व

होने पर बेसिडोकार्प कड़े चमड़े की तरह हो जाते हैं, यह विषाक्त भी हो सकती है. प्राकृतिक रूप से एकत्र करने पर इसकी गुणवत्ता पर कोई नियंत्रण नहीं रहता है.

वर्ष 1970 में श्री युकिओनाओई, जो कि एक टेक्नीशियन थे (क्योटो यूनिवर्सिटी फूड स्टफ साइन्टिफिक रिसर्च इन्स्टीट्यूट), ने 'स्पोर सेपरेशन कल्टीवेशन मेथड' द्वारा गेनोडर्मा को प्रयोगशाला में सफलतापूर्वक उगाया. इस विधि को चीन में 1975 में प्रयोग किया गया. नियंत्रित वातावरण तथा भूमि के प्रयोग से मशरूम उत्पादन करना सरल हो गया और यह तकनीक व्यापक रूप से अपनायी गयी.

कड़ी लकड़ी (ओक, एल्डर, मेपल) के लट्ठों को मशरूम के स्पॉन से टीकाकरण करते हैं जैसा कि 'शीटाके' मशरूम को उगाने के लिए किया जाता है. इन पहले से फफूंद द्वारा उपचारित लट्ठों को भूमि में रखा जाता है या मिट्टी के अंदर थोड़ा दबा दिया जाता है जहां 1-2 वर्ष के उपरान्त यह मशरूम पैदा करने लगते हैं.

इसके अतिरिक्त कम समय में मशरूम उत्पन्न करने के लिए प्लास्टिक बैग या बोतलों में लकड़ी के बुरादे तथा लकड़ी के छिलके के मिश्रण पर इसे उगाया जा सकता है. यह विधि नियंत्रित वातावरण में कृत्रिम परिस्थितियों में मशरूम उत्पन्न करती है. कमरे में प्रकाश की मात्रा या तीव्रता तथा CO_2 की मात्रा को नियंत्रित करके मशरूम के आकार को नियंत्रित किया जा सकता है. मशरूम की तना रहित, तनायुक्त या सींग जैसी बढ़वार पायी जा सकती है. मशरूम के उगने के संपूर्ण काल में आर्द्रता अधिक रखने पर मशरूम की बढ़वार व पैदावार अच्छी होती है. CO_2 की मात्रा में अचानक परिवर्तन (गिरावट) आने पर फफूंद मशरूम पैदा करने लगती है.

भारत में रेशी मशरूम की खेती :- सोलन स्थित आई.सी.ए.आर. के 'राष्ट्रीय मशरूम अनुसंधान केंद्र' में कृषकों को मशरूम की खेती सिखायी जाती है. विश्व में इसका व्यापार लगभग 2 बिलियन डालर का है जबकि भारत में इसका व्यापार 100 करोड़ प्रतिवर्ष से अधिक का है. इस मशरूम को चीन एवं मलेशिया से आयात किया जाता है. कोरिया, थाई एवं अमेरिकन मशरूम कल्चर उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं और इनको खेती में प्रयोग किया जाता है.

खेती की विधि :- किसान मशरूम उगाने के लिए कम लागत वाले छोटे पालीथीन थैले का प्रयोग करते हैं जबकि उद्योगपति बड़े वातानुकूरित कमरों का प्रयोग करते हैं. यह बड़ी पत्तियों वाले वृक्षों (आम, पोपलर, शीशम, नारियल आदि) के बुरादे पर उगायी जाती है. इस लकड़ी के बुरादे में 20 प्रतिशत गेहूं का चोकर मिलाते हैं और 65 प्रतिशत नमी रखते हैं. कैल्सियम सल्फेट (जिप्सम) एवं कैल्सियम कार्बोनेट (चाक पाउडर) मिलाकर PH 5.5 रखते हैं. इस मिश्रण को (700 ग्रा.सूखा, 2.1 कि.ग्रा.भीगा) पोलीप्रोपीलाइन थैले में भरकर उसमें एक प्लास्टिक का छल्ला लगाकर रूई के प्लग से मुंह बंद कर देते हैं.

इन थैलों का आटोक्लेव में 22 पोण्ड दबाव पर 2 घंटे के लिए निर्जीवीकरण करते हैं. इसके पश्चात, थैलों के ठंडा होने पर, इस मिश्रण को गेहूं के दाने या बुरादे के स्पान (बीज) @ 3% (सूखे भार के अनुसार) से मिलाते हैं, क्योंकि यह एक धीमी गति से उगने वाली फंफूद है. स्पान मिलाकर थैलों को 28-35^{0}C पर बंद कमरे में (CO_2 मात्रा ज्यादा हो), अंधेरे में रखते हैं. जब सफेद धागे पूरे में फैल जाए (लगभग 25 दिन) तब पालीथीन को ऊपर से काटकर मिश्रण को खोल देना चाहिए तथा मशरूम की फलन के लिए आवश्यक परिस्थितियों (28^{0}C तापमान, 1500 पी.पी.एम. CO_2, 800 लक्स प्रकाश, 95 प्रतिशत आर्द्रता) उपलब्ध करानी चाहिए. जब मशरूम के छोटे-छोटे उभार दिखने शुरू हो जाएं तब आर्द्रता को 80 प्रतिशत करना चाहिए और कमरे में स्वच्छ हवा का प्रवेश करवाकर CO_2 1000 ppm कर देना चाहिए. जब मशरूम की छतरी पूर्ण विकसित हो जाए, जो कि छतरी के किनारों के पीले पड़ने से ज्ञात होती है (अन्यथा किनारे सफेद होते हैं), तापमान 25^{0}C एवं आर्द्रता 60 प्रतिशत रखनी चाहिए जिससे छतरी मोटी, लाल एवं पूर्णरूप से परिपक्व हो जाये. पूर्ण विकसित मशरूम की पहचान उसके लाल-भूरे रंग से होती है और बीजाणु छतरी पर झड़ जाते हैं. तुड़ाई करने के लिए मशरूम को कसकर पकड़कर खींचना चाहिए. मशरूम की एक फसल आने में बैग खुलने के बाद 10-15 दिन लग जाते हैं. इस प्रकार एक थैले से 2-3 फसलें मिलती हैं. सूखे 1 किग्रो. मिश्रण से ताजे 250 ग्राम मशरूम मिलते हैं. एक फसल लगभग 4 महीने चलती है.

तुड़ाई उपरान्त मशरूम को पानी से धोकर सुखाकर रखते हैं. फ्रीज ड्राइंग सबसे अच्छी विधि है. इस मशरूम में सूखा तत्व (45 प्रतिशत, 450 ग्रा. सूखा तत्व प्रति 1कि.ग्रा.ताजा मशरूम) अधिक होता है.

यह मशरूम सीधे भोजन के काम नहीं आती है वरन् हर्बल औषधि निर्माण तथा पूरक आहार निर्माण के उद्योग में काम आती है. इसके कैप्सूल, टेबलेट, आस्रव, द्रव आदि बनते हैं.

लुपस से लड़ने में लाईफ की मदद

मनिषा पटवर्धन
राष्ट्रीय रूधिर प्रतिरक्षा विज्ञान संस्थान,
13वीं मंजिल, नई बहुमंजिल इमारत, के.ई.एम.अस्पताल परिसर,
परेल, मुंबई-400 012

रोगों का सामान्य रूप से वर्गीकरण करें तो साधारण और असाधारण रोगों में उन्हें बांटा जा सकता है. भारत में मलेरिया टी बी आदि बीमारियां बड़े पैमाने पर पाई जाती है. लोगों को भी इनके बारे में खासी जानकारियां हैं. कई बिमारियां असाधारण रूप में पाई जाती है. 'लुपस' की गिनती इस वर्ग में होती है. 15-55 के आयु में लुपस का प्रभाव अधिक होता है. 90 प्रतिशत रोगी महिलाए होती है. 15 के नीचे भी लुपस होने की संभावनाएं हो सकती है, किंतु कम मात्रा में लुपस की उत्पत्ति लैटिनी भाषा से हुई. चेहरे पर नाक के दोनों तरफ लाल रंग का तितली जैसा रॅश लुपस के कई मरीजों में पाया जाता है. इसे बटरफ्लाय रॅश कहते हैं. इसकी वजह से मरीज की सूरत (चेहरा) भेड़िये के काटने से पैदा घाव मलार से मिलने के कारण (लैटिन में भेडिये का काटे घाव को लुपस कहते हैं). इसलिए रोग का नाम लुपस रखा गया. जोड़ों में दर्द, मुंह में छाले, बालों का गिरना, ऊंगलियों में नीलापन और थंड हवा में उनमें दर्द होना आदि लक्षण लुपस में पाए जाते हैं. जल्द इलाज शुरू न होने पर गुरदे, मस्तिष्क, फेफडे जैसे महत्वपूर्ण अवयवों

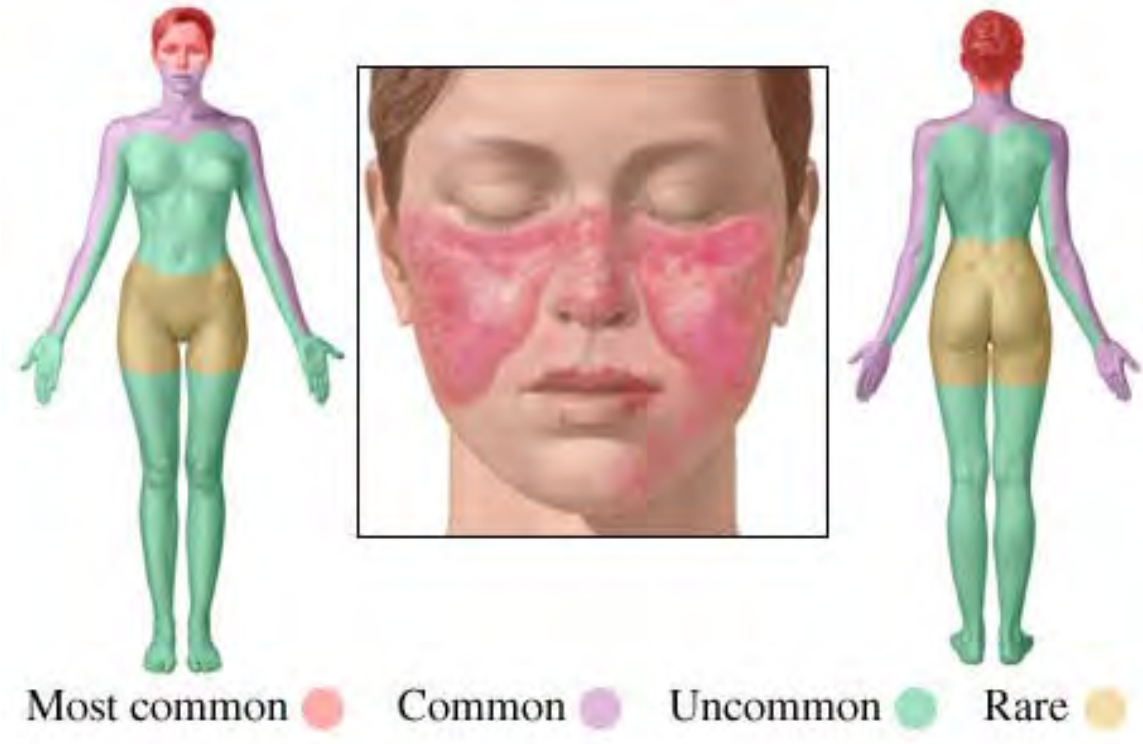

में ये फैल सकते हैं.

रोगी को लुपस है यह पहचानने में उसके बाहरी लक्षणों के साथ साथ उसके खून की प्रयोगशाला में जांच सहायक होती है. लुपस के खून में प्रतिजैविक ऑटोॲन्टीबॉडीज का बड़ी मात्रा में अस्तित्व लुपस को सिद्ध करने में मदद देता है. इलाज को काफी समय तक जारी रखना पडता है. डॉक्टरों से इस बीमारी के बारे में विस्तृत जानकारी मिले तो मरीज इसका लाभ उठा सकते हैं.

केईएम अस्पताल मुंबई शहर की एक प्रमुख चिकित्सा केंद्र है. पूरे भारत में यहां मरीज आते हैं. अस्पताल में विविध ओ.पी.डी.में रूग्णसेवा दी जाती है. लुपस के मरीजों की जांच रूमाटोलोजी ओ.पी.डी. में होती है. पूरे भारत से आए हुए मरीज लुपस के प्रभाव से होनेवाली बीमारियों के इलाज के लिए केईएम के इस विभाग का रूख करते है. रूमाटोलॉजी के अलावा अलग-अलग ओ.पी.डी. से भी लुपस को प्रस्थापित (established) किया जाता है. लेकिन इलाज की व्यवस्था इसी ओ.पी.डी.के डॉक्टर्स करते हैं. लुपस का इलाज लंबा चलता है. दवाए लंबे समय तक लेनी पडती है. मरीजों के साथ साथ उनके परिजनों को भी कठिनाईयां होती हैं. दवांइयां महंगी हो तो मुश्किलें और बढ़ जाती हैं. आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग में लुपस का ज्यादा प्रभाव होता है. हमारी प्रयोगशाला में अब तक 500 से ज्यादा लुपस पेशंट संलग्न हो चुके हैं. उनकी कठिनाईयां मुश्किलें सुनते सुनाते हम इनके परिजनों में से एक हो गए हैं. हमने एडवोकेट सुजाता कॉलेज में प्राध्यापिका रही मृदुला आदि विदुषियों को भी लुपस के प्रभाव में आते देखा. औरतों को भारतीय समाज में सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक असमानता का सामना करना पड़ता है. लुपस जैसी असाधारण बीमारी का शिकार बनने पर उनकी इन सबसे जूझने की कुवत कम हो जाती है और ये प्रशंसनीय कार्य भी कर रही है. लुपस का प्रभाव ज्यादा मात्रा में नहीं है. 1000 में 1 इसके रोगी मिलते हैं. इस तरह 120 करोड़ की आबादी में 12 लाख लूपर रोगी तो जरुर हैं. पर यह संख्या लक्षणीय हैं इन्हें अनदेखा नहीं किया जा सकता. आज की तारीख में लुपस के मरीजों के लिए काम करनेवाली एनजीओ का निर्माण भारत में नहीं हुआ. जबकि हमारे देश में कैंसर, एड्स, थैलेसेमिया आदि बीमारियों में मदद देने के लिए समाजोपयोगी संस्थाएं (एनजीओ) बनायी गयी है विदेशों में लुपस के मरीजों की तादाद बहुत ज्यादा है. उनके लिए काम करनेवाली संस्थाएं भी बड़ी संख्या में मौजूद हैं. केईएम में काम करनेवाले डॉक्टरों ने भी इन रोगियों के लिए काम करने की इच्छा जताई है. लुपस के लिए एनजीओ बनाने का विचार जोर पकड़ा है.

किसी भी एनजीओ संस्था के दो पहलू होते हैं. मान लीजिए हम संस्था को शरीर की उपमा दें तो उसकी दो बाहे होती हैं. लुपस संस्था के भी दो अंग हैं. पहला जिनके लिए यह संस्था चलेगी वे पेशंटस और उनके परिजन और दूसरा जो इसे चलाएगा वह समुदाय. डॉक्टर, शुभचिंतक धन को अर्पित करनेवाले दानी इस दूसरे अंग का हिस्सा हैं. संगठन के कई फायदे हैं. संगठित क्षेत्र में चलनेवाली गतिविधियां आसानी से नजर आती है. दोनों में इनके बारे में दिलचस्पी जल्दी बढ़ जाती है. अपने लक्ष्य को हासिल करने के लिए 'जनता की आवाज' का काम संगठनाएं अच्छी तरह उठाती है. एनजीओ चलाने के लिए सरकार आर्थिक मदद देती हैं.

हमने लुपस के लिए एनजीओ बनाने के इरादे को, 16 दिसंबर 2011 को साकार किया. कानूनी दिक्कतों को लांघकर संस्थाएं बनाना और चलाना आसान नहीं. एडवोकेट सुजाता की मदद से हमारी एनजीओ बिना संकट तो नही लेकिन कम दिक्कतों का सामना करते बन गई. संगठन का नामकरण किया गया. - लुपस इंडिया फोरम एनसेंबल (Life) 'लुपस के मरीजो का 'जीवन' आसान बनाने में मदद देनेवाली 'लाइफ'. इस संगठन को बनाते समय हमने कई उद्दिष्टों को सामना रखा था.

1. बिखरे हुए मरीजों को आपस में मिलाना - हमारा मरीजों से संपर्क समय-समय पर बना रहता था, किंतु उनका आपस में मेलजोल और बातचीत नहीं होती थी. एनजीओ के माध्यम से लुपस के मरीजों को आपस में मिलाना हमारा प्रमुख उद्देश्य था. अपने अनुभवों को और दूसरों के अनुभवों को सुनना 'लुपस प्रभावितों को मददगार साबित हो सकता है. मै अकेला नहीं हूं, मेरे जैसे कई लोग इस बीमारी से लड़ाई लड़ रहे हैं.' इस भावना के साथ मरीज एक दूसरे से मिल सकते हैं.

2. मरीजों के परिजनों को निमंत्रित करना - मनुष्य समाजप्रिय होता है. समाज और घरवालों से कटकर जीना नामुमकीन है. बीमार व्यक्ति को तो घर के सदस्यों का सहयोग और भी आवश्यक होता है. 'लुपस' के कई मरीज शारीरिक व्याधियों के साथ साथ मानसिक बीमारियों में फंस जाते हैं. सिरदर्द, मूड में अचानक बदलाव, (कभी बहुत बातें करना, कभी अचानक बाते बंद करना), चिड़चिड़ापन आदि कई मरीजों में पाएं जाते हैं. इनके चलते घर में तनाव पैदा हो जाता है. बीमारी लंबी चलने के कारण स्थिति बिगड़

भी सकती है. परिजनों को इन संभावनाओं से सावधान करने से तनाव को कम करने में मदद कर सकती है.

3. संगठन की शक्ति का उपयोग करवाना - सरकार तक पहुंचने के लिए कई लोगों का एक आवाज में बोलना उपयोगी साबित होता है. लोकशाही में 'आवाज की अहमियत होती है. अकेले-अकेले लड़कर समाज में बदलाव लाने में कई साल लगते हैं, जो काम संगठित होने के बाद कई दिनों में हो सकता है. कैंसर, थैलेसेमिया के कई संगठन समाज में बनने के बाद सरकारें भी हरकत में आ गईं. इनके अनुभवों से संगठन की ताकतों का अंदाजा होता है. आर्थिक मदद मांगने के लिए भी ताकतवर संगठन की आवश्यकता होती है.

4. किफायती दरों में दवाइयां उपलब्ध करवाना - एनजीओ द्वारा बड़ी मात्रा में दवाईयों की मांग होने पर दामों में रियायत देने की व्यवस्था दवाई कंपनियों के मैनिफेस्टों में मुमकीन है. इससे मरीजों के पैसों की बचत करना आसान होता है.

5. अनुसंधानकार्य में योगदान - एक साथ कई सारे मरीजों का मौजूद होना कई मायनों में फायदा पहुंचाता है. हमारी संस्था अनुसंधान क्षेत्र में काम करती है. 'लुपस' विषय पर अनुसंधान का काम पहले से जारी है. 'लुपस' के मरीजोंसे मिलनेवाले खून से डी.एन.ए. अलग करके उन्हें अनुसंधान के कार्यों में इस्तेमाल किया जाता है. प्रयोगशाला में खून की जांच के लिए कम पैसे लिए जाते हैं, जिससे मरीजों में खून की जांच को टालने का चलन कम किया जा सके.

6. डाक्टरों को 'लुपस' के मरीजों से वाकिफ करवाना - 'लुपस' का मरीज लक्षण के अनुसार अलग अलग ओ.पी.डी. में ईलाज पाता है. 'लुपस' की विविध स्थितियों में लक्षण बदलते रहते हैं. डाक्टरों को सभी लक्षणों को जांचने परखने का मौका कम मिलता है. एनजीओ के आयोजित कार्यक्रमों में डॉक्टरों को अलग-अलग अवस्थाओं के मरीज बड़ी संख्या में देखने का मौका मिलेगा.

7. दवा कंपनियों से सहायता - बड़ी दवा-कंपनियां अनेक स्तरों पर काम करती हैं. दवा बाजार में लाने से पहले उनकी प्रायोगिक जांच (क्लिनिकल ट्रायल) की जाती है. ये जांच मुफ्त होती हैं. जांच के दौरान मरीज की पूरी देखभाल कंपनी के जिम्मे होती है. इस पॉलिसी का फायदा मरीजों को पहुंचाने में एनजीओ काम कर सकती है. सामाजिक उत्तरदायित्व निभाने के लिए कार्यक्रमों का आयोजन करवाने की योजनाएं कंपनियों के जरिए चलाई जाती है, जो 'लुपस' मरीजो को भी फायदा पहुंचा सकती है.

8. मरीज परिजन और समाज में लुपस के बारे में जन जागरण - यह मुद्दा सबसे अहम होगा. मरीज और परिजनों के लिए लेक्चर्स आयोजित करने का सिलसिला चलता रहे. स्कूल, कालेज महिलाओं के लिए काम करनेवाली संस्थाएं आदि जगहों पर 'लुपस' अवेअरनेस कार्यक्रम कराना 'लाइफ' का संकल्प है. 16 दिसंबर 2011 में 'लाइफ' ने सांस लेना शुरू किया. पिछले साल 3 बार मरीज और उनके रिश्तेदारों के लिए 'लुपस' अवेयरनेस' के तहत लेक्चरों का आयोजन हुआ. लुपस के मरीजों को खाने-पीने में क्या सावधानी बरतनी जरूरी है? इसकी भी जानकारी इन लेक्चर्स में थी. मानसिक संतुलन में मानसिक शांति पाने के लिए

'मेडिटेशन/प्राणायम' का आयोजन किया गया. शारीरिक तौर पर तंदुरूस्ती बढ़ाने के लिए फिजियोथेरपी में व्यायाम का महत्व समझाया गया.

अब दूसरे साल में दवाईयों का कम दाम में उपलब्ध करवाना, दवा-कंपनियों से लुपस के मरीजों के लिए योजनाएं मंजूर करवाने का उद्देश्य 'लाइफ' के सामने है. समय के साथ-साथ समाज के सभी स्तरों से सहायता बढ़ रही है. इस बढ़ती ताकत से 'लाइफ' के इरादे बुलंद हो रहे हैं और मंजिलें पाने की रफ्तार बढ़ रही है.

महानगरों की पर्यावरण समस्याएं और निदान

श्री विपुल सेन
वैज्ञानिक अधिकारी 'जी, प्रौद्योगिकी विकास प्रभाग, नाभिकीय पुनश्चक्रण वर्ग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई

प्रस्तावना : महानगरों की घरेलू सीवर लाइन पर्यावरण प्रदूषण हेतु ड्रेगन की भांति हैं. वे कई अन्य नुकसान के साथ नदियों और जल संसाधनों को भी नुकसान पहुंचाती हैं इनको नदियों या आसपास के जल संसाधनों के साथ मिश्रण करने के लिए अनुमति कभी नहीं दी जानी चाहिए. जाग्रत विधि द्वारा इसको अपने मूल के साथ ही उपचारित करना चाहिए इस पत्र में हम पर्यावरण को कम से कम नुकसान के साथ ऊर्जा, उर्वरक और पानी उत्पन्न कचरे का पुनः उपयोग तकनीक का अध्ययन करेंगे.

पर्यावरण के मुद्दे : महानगरों के लिए आम बुनियादी सुविधाओं के अलावा निम्नलिखित सामान्य मुद्दे हैं

(अ) मानव अपशिष्ट प्रबंधन और उपचार.

(ब) नगर निगम के कचरे से निपटने के लिए प्रबंधन.

(स) तूफान पानी का (प्रहस्तन) और प्रबंधन.

(द) हवा, पानी और जमीन से संबंधित पर्यावरण के मुद्दों के लिए अन्य आयाम.

(अ) मानव अपशिष्ट प्रबंधन एवं उपचार

मानव अपशिष्ट से पर्यावरण प्रदूषण निम्न माध्यमों से हो सकता है.

क : ठोस अपशिष्ट

ख. तरल अपशिष्ट और

ग. गैस (उत्सर्जित)

घ. मानव द्वारा परिवेश को नुकसान

क. ठोस अपशिष्ट के बारे में कुछ वाक्य : अवायवीय जैविक उपचार प्रक्रिया (प्रौद्योगिकियों आसानी से उपलब्ध हैं) का उपयोग किया जाना चाहिए

'सेप्टिक टैंक' के लिए अवधारणा दशकों पुरानी है. - इन टैंकों से उत्पन्न निष्क्रिय कीचड़ खनिज और जैव उर्वरक के लिए एक समृद्ध स्रोत है. - यह निष्क्रिय **कीचड़ स्वर्ण तथ्य** है. एक उचित योजना आसानी से सेप्टिक टैंक की सफाई और किया जा सका.

निष्क्रिय कीचड़ को सीधे तरह से या सूखाकर फ्लैक्स बनाकर बनाने या उर्वरक के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है. (निष्क्रिय कीचड़ उर्वरक के रूप में बाहर बेचा जा सकता है.)

समुदाय सेप्टिक टैंक से बायोगैस प्राप्त कर ऊर्जा के एक स्रोत के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता है,

चेतावनी : शौचालय उपयोगकर्ता को सफाई के लिए उच्च अम्लीय या क्षारीय एंटीसेप्टिक क्लीनर का प्रयोग नहीं करना चाहिए. इसके अतिरिक्त स्नानागार और रसोईघर के पानी के साथ भी मिश्रण नहीं किया जाना चाहिए.

(ख) तरल अपशिष्ट

एक प्राकृतिक उर्वरक है.

महानगरों में तरल अपशिष्ट का भारी मात्रा में उत्पन्न होता है जहां पर्याप्त सार्वजनिक शौचालय, के माध्यम से माध्यम से उचित प्रबंधन आवश्यक है.

इस परिपेक्ष में कई शोध पत्र इंटरनेट पर उपलब्ध हैं.

- शुद्ध और सामान्य तरक अपशिष्ट कोई गंध नहीं देता है परंतु जब यह जल के साथ मिश्रित होता है तब गंध पैदा होती है.

तरल अपशिष्ट एक प्राकृतिक उर्वरक (इसे बर्बाद न

करें). तरल अपशिष्ट उर्वरक और खनिजों का एक बहुत अच्छा स्रोत है, परंतु इसे सीधे उर्वरक के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है. इसे उपयोग में लाने से पूर्व नौ दिनों के लिए भंडारित किया जाना चाहिए. कई फसलों की वृद्धि हेतु उपज. ताजा तरल अपशिष्ट उर्वरक के रूप में उपयोग करने से पहले 10 गुणा पतला होना चाहिए.

रोगाणु सामान्य रूप से ताजा तरल अपशिष्ट में मौजूद नहीं होते हैं लेकिन नाइट्रोजन रोगाणुओं हेतु यदि ड्राइंग रूम संयंत्रों में इस्तेमाल किया जाना हो तो एक गामा किरण से उपचारित किया जा सकता है. बाहर बगीचों या खेतों के लिए उपचार आवश्यक नहीं है.

तरल अपशिष्ट का उपयोग रासायनिक खाद की तुलना में ज्यादा बेहतर है. उर्वरक के रूप में तरल अपशिष्ट का उपयोग करने का आधार यह है कि रासायनिक उर्वरक पर्यावरण प्रदूषण अधिक पैदा करते हैं. जबकि यह एक प्राकृतिक पदार्थ है जो निश्चित रूप से रसायनिक उर्वरक से बेहतर है.

उदाहरण के लिए, कई क्षेत्रों, खेतों,पीने के पानी में (क्योंकि यूरिया नाइट्रोजन प्रदूषण एक अलग मुद्दा है)

नाइट्रोजन का खतरनाक स्तर ऊंचा होने की समस्या का सामना करना पड़ता है. अत्यधिक नाइट्रोजन मनुष्यों और पशुओं दोनों में एक संभावित के स्वास्थ्य जोखिम है. इसका अधिक कैंसर के लिए संभावना, साथ ही थायराइड और प्रजनन समस्याओं का एक कारण हो सकता है. आधुनिक उर्वरक या धीमा जहर

आधुनिक उर्वरक में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम की मात्रा होती है जिसे पौधों को विकसित करने के लिए आवश्यक माना जाता है.

परंतु यह निश्चित रूप से खेत के लिए आदर्श और स्थायी रास्ता नहीं है, लेकिन यह बड़े पैमाने पर खेतों के लिए सबसे कारगर माना जाता है.

एक अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त विशेषज्ञ डॉ एलेनी ईंघम के अनुसार इन तीन घटकों, स्थायी मृदा विज्ञान के लाभ के अनुसार, हमें लगता है कि इन्हें उर्वरक के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता.

आप अपने उद्यान में खाद के लिए मूत्र का उपयोग करना चाहते हैं तो अवश्य करें. सबसे पहले पौधों के लिए और उन्हें संक्रमण से बचने के लिए ठोस अपशिष्ट को अलग किया जाना चाहिए.

लेकिन याद रखें ताजा मूत्र पानी के साथ कम से कम 10 गुणा पतला होना चाहिए.

आप को भी इस स्थायी संसाधन से फायदा हो सकता है कि न केवल कृषि के लिये बल्कि दिलचस्प बात है कि पौधों में अपने पोषण सामग्री को बढ़ाने के लिए खाद के रूप में तरल अपशिष्ट का प्रयोग कर सकते हैं.

तरल अपशिष्ट को एक सेल फोन को चार्ज करने में सक्षम ईंधन की कोशिकाओं को विकसित करने के लिए इस्तेमाल किया गया है. और वह दिन दूर नहीं जब एक दिन इसे एक कार बिजली के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है!

(ग) मानव द्वारा पर्यावरण को नुकसान

यह एक सामाजिक समस्या है. बच्चों को पर्यावरण को बचाने के लिए निर्दिशत किया जाना चाहिए. बेकार कागज को नहीं जलाना चाहिये.

प्रकाश और पानी की बचत पवन और सौर ऊर्जा का उपयोग करना, वाहन और सार्वजनिक परिवहन आदि के

उपयोग को साझा करने हेतु जागरूकता आवश्यक है

2. नगर निगम के जल कचरे का प्रबंधन और उपचार

सीवेज सिस्टम में मौलिक रूप में ठोस से तरल अपशिष्ट अलग किया जा सकता है. पानी पुनश्चक्रण के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है. पानी को खेती के लिए पुनर्नवीनीकरण किया जा सकता है. ठोस को भूमि भरने के लिए या ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता है.

3. बरसाती पानी का प्रबंधन और उपचार

तूफान पानी बारिश का पानी है. इसका प्राकृतिक प्रवाह बंद नहीं किया जाना चाहिए. पानी को केन्द्र प्रसारक बल द्वारा ठोस से अलग किया जाना चाहिए और इसे भूमि पूरक के रूप में या क्षेत्रभरन के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए. जल को नदी को स्थानांतरित करने के लिए अनुमति दी जानी चाहिए या जल संचयन के लिए इस्तेमाल किया जाना चाहिए.

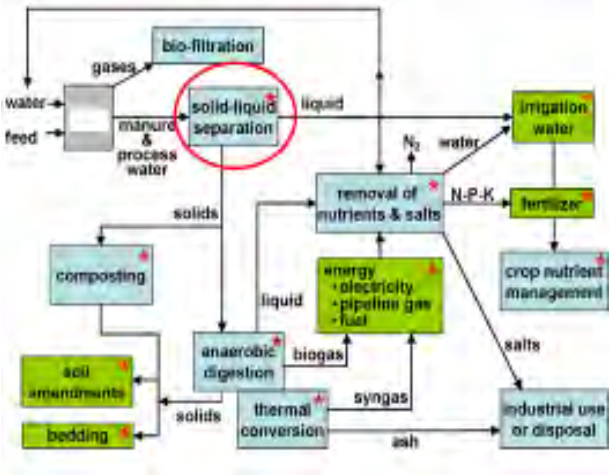

हवा, पानी और जमीन से संबंधित पर्यावरण के मुद्दों के लिए अन्य आयाम. यहाँ कुछ सुझाव उल्लेख कर रहे हैंः

नगर निगम के पानी को सफाई, बागवानी या मल मूत्र स्वच्छता हेतु उपयोग नहीं किया जाना चाहिए.

शौचालय के हेतु पुनरावृत्ति या भूमिगत जल का उपयोग करना चाहिए. रसोई खाद्य और बर्तन सफाई के लिए पुर्ननवीनीकरण पानी का उपयोग करना चाहिए. नगर निगम का पानी से पीने हेतु प्रयोग करना चाहिए.

जल संचयन के लिए एक उचित डिजाइन किसी भी निर्माण के लिए जरूरी होना चाहिए, यह निर्माण उद्योग या घर में हो सकता है.

अन्य : तटीय और पर्वतीय क्षेत्रों में पवन ऊर्जा का दोहन करना चाहिए. सादा और गर्म स्थानों पर सौर ऊर्जा का दोहन करना चाहिए.
- स्पीड ब्रेकर से विद्युत उत्पादन संभव है और इसका उत्पादन किया जाना चाहिए.

(लेखक ने एक डिजाइन विकसित की है)

'पर्यावरण बचाओ' एक अभियान होना चाहिए और बच्चों को शामिल किया जाना चाहिए. हालांकि अभिभावकों को भी पर्यावरण संरक्षण के साथ बारे में पता होना चाहिए.

अन्य कॉलेज, कैंटीन, मॉल आदि कार्यालयों, की तरह कार्यस्थलों पर ही स्थानों इन मुद्दों में शामिल किया जाना चाहिए और इनके जागरण के लिए व्यापक प्रचार देना चाहिए.

प्रस्तुत आलेख : राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी, वैष्णोदेवी की पत्रिका से साभार

सभी चित्र गुगल से साभार

मरूयुद्ध कौशल और वानस्पतिक छद्मावरण का विज्ञान

प्रोफेसर (डॉ.) सुशीला राय
सीनियर फेकल्टी, इंडियन रिसर्च इन्सटीट्यूट फॉर इंटिग्रेटेड मेडीसिन, हावड़ा -711302,
पूर्व प्रोफेसर फार्मास्यूटिकल केमिस्ट्री एवं वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी तथा
राजभाषा अधिकारी , रक्षा प्रयोगशाला, डी.आरडी.ओ., जोधपुर - 342005

मरूयुद्धों में छद्मावरण की अहम् भूमिका है. प्रकृति में छद्मावरण चतुर्दिक व्याप्त है. पशु जगत हो या कीट पतंगों की दुनिया या महासमुद्रों के विशाल जलचर, सभी प्राणियों को जीवनयापन के अंतर्गत शिकार से बचने के लिए छद्मावरण का सहारा लेना पड़ता है. हम यदि अपने पर्यावरण पर दृष्टिपात करें तो ऐसे अनेक प्राणी हैं , जिनके रंग, रूप, आकृति, वेष और प्रकार विशेष आकर्षण का केन्द्र होते हैं जैसे जंगली पशु जेब्रा, चीता, विभिन्न प्रकार के पक्षी, गिरगिट, मेंढक और सर्प आदि. आदिकाल से गुरिल्ला व छापामार सैनिक युद्ध में दुश्मन को धोखा देने के लिए छद्मावरण का प्रयोग करते आए हैं. प्राचीन ट्रोजन युद्ध में प्रयुक्त लकड़ी का ट्रॉय घोड़ा दस वर्षों तक एक ही जगह स्थित लकड़ी के घोड़े की छद्म आकृति के द्वारा ही अपने को सुरक्षित बचाए रख सकें (चित्र -1). चंगेज खां के मंगोल सैनिक अपनी टोपियों पर पेड़ों की पत्तियों और डालियों केा रख कर एक स्थान से दूसरे स्थान को पलायन करते थे और इस प्रकार प्राकृतिक संरक्षण प्राप्त किए हुए छुपकर अपने शत्रुओं से लड़ाई करते थे.

चित्र-1. ट्रोजन युद्ध में प्रयुक्त लकड़ी का ट्रॉय घोड़ा

छद्मावरण (Camouflage) फ्रेंच शब्द केमोफ्लेग से बना हुआ है जिसका शाब्दिक अर्थ है सामने आने वाले व्यक्ति (शत्रु) पर धुआं फेंकना, आखों में धूल झोंकना या धोखा देना. छद्मावरण एक गोपनीय कला है जिसके प्रयोग द्वारा शत्रु के क्रियाकलापों पर पैनी नजर रखते हुए अपनी सेनाओं, हथियारों व अन्य सामग्री को इस प्रकार छुपाकर रखा जाता है कि शत्रु भ्रमित हो जाये. इस प्रकार भ्रमित शत्रु हमारे सैन्य बल और अस्त्र-शस्त्रों पर आक्रमण न कर कृत्रिम हवाई अड्डों, बैरक, आयुध कारखानों, सैन्य उपकरणों और अन्य छद्मावरण किये लक्ष्यों पर आक्रमण कर अपना आयुध एवं उपकरण व्यर्थ में नष्ट कर देता है. इस प्रकार छद्मावरण विज्ञान शत्रु का मनोबल तोड़ उन्हें हतोत्साहित करने में सफल सिद्ध हुआ है. इस शताब्दि में भी सैनिक व्यक्तिगत व वाहन छद्मावरण में इसी विधि का प्रयोग करते हैं. जनरल वाशिंगटन दुश्मन को धोखा देने में इतने प्रवीण थे कि वे अपनी सेना के साथ टेन्टों में आग लगाकर रात्रि में प्रस्थान करते थे ताकि दुश्मन को उस स्थान विशेष पर उनके रहने का भ्रम बना रहे.

20 वीं सदी तक मनुष्य की दृष्टि ही एक मात्र सेंसर होने के कारण छद्मावरण सैन्यबल और उनके अस्त्र शस्त्रों तक ही सीमित था. सेंसर प्रौद्योगिकी के त्वरित विकास ने छद्मावरण की नई परिभाषा सृजित कर दी है. आधुनिक परिभाषा में छद्मावरण वह प्रौद्योगिकी है जो सैन्य लक्ष्यों में मल्टीस्पैक्ट्रल वेवलैन्थ में कार्यरत डिटैक्टरों द्वारा पता लगाने

में देरी या पूर्ण अनभिज्ञता प्रदान कर देती हे. इसके अंतर्गत ध्वनिक, चुम्बकीय, मल्टीस्पैक्ट्रल छद्मावरण, कम दृष्टिगोचर, प्रतिरोधात्मक, हस्ताक्षर प्रबंधन, स्टैल्थ प्रौद्योगिकी, नैनो पदार्थ आदि जैसी कुछ प्रौद्योगिकियां सम्मिलित हैं. इसके प्रत्युनर में छद्मावरण विज्ञान के अंतर्गत नए सेंसर और डिटैक्सन प्रौद्योगिकियां भी साथ-साथ विकसित की गई हैं.

प्रथम विश्व युद्ध के समय से ही ख्याति प्राप्त छद्मावरण तकनीकियों का द्वितीय विश्व युद्ध में और भी महत्व बढ़ गया था तथा सभी शक्ति सम्पन्न देशों द्वारा ये विधियां प्रयोगों में लाई जाने लगी थी. इसका प्रमुख कारण था, अत्यधिक हवाई हमलों से अपने महत्वपूर्ण प्रतिष्ठानों की रक्षा एवं हवाईअड्डों का निर्माण. सैन्य सामग्री, मोटर-गाड़ियों, स्वचालित टैंक और बड़ी-बड़ी तोपों को तारों से बने पर्दो से ढंक देते थे ताकि वे वातावरण में छिप जाएं और जहां तोपों, मशीनों एवं गाड़ियों को ढंकना संभव नहीं हो पाता था वहां धब्बों एवं आड़ी-तिरछी आकृति में काले, भूरे, हरे, रंग से इस तरह पोत देते थे ताकि हवाई सर्वेक्षण के दौरान आकृति छिन्न-भिन्न ज्यामिती के रूप में दिखाई दे और दृष्टिभ्रम पैदा कर वास्तविक वस्तु को पहचाने जाने से बचा सके. इस प्रकार छद्मावरण का प्रयोग युद्धों में एक कारगर तकनीक प्रचलित होकर विजय वरण की भूमिका में प्रतिष्ठित हुआ.

दक्षिण अफ्रीका में सन् 1899-1902 तक हुए युद्ध के दौरान ब्रिटिश सैनिक खाकी रंग की वर्दी पहनकर स्वंय को दुश्मन से छुपाकर रखते थे, क्योंकि वह पृष्ठभूमि से मेल खाती थी. फलस्वरूप विश्व की सभी सैनिक टुकडियां आज भी अपनी वर्दी का रंग प्राकृतिक पर्यावरण से मेल खाता रखने लगे हैं, ताकि शत्रुओं की तीक्ष्ण अन्वेषणीय निगाहों से बच सकें. पिछले दशक में ईरान-ईराक के मध्य हुए युद्ध में भी अनेकों आधुनिक छद्मावरण तकनीकियों का प्रयोग किया गया जिससे हम भली-भांति परिचित ही हैं. छद्मावरण प्रौद्योगिकी एवं तकनीकियों का उपयोग प्रथम विश्व युद्ध से लेकर अभी तक सभी युद्धों में सफलतापूर्वक हुआ है. परन्तु वर्तमान में छद्मावरण तकनीकी का अभूतपूर्व विकास हुआ है. पूर्व के युद्धों में परम्परागत तकनीकियों का उपयोग सम्मिलित था क्योंकि आधुनिक संसूचक सुदूर संवेदन, नैनो टैक्नोलॉजी व नैनो मटीरियल्स और स्टेल्थ एप्लीकेशन्स के साथ मौजूद नहीं थे और फलस्वरूप छद्म लक्षणों की पहचान करना आसान नहीं था. आज के बदलते परिवेश ने छद्मावरण विज्ञान के समक्ष अनेक चुनौतियां प्रस्तुत कर दी हैं. इस संदर्भ में सुदूर संवेदन और लैंड सेट उपकरणों की भूमिका (चित्र -2) और अधिक बढ़ गई है. सुदूर संवेदन में उपयोगिता की दृष्टि से विशाल बहु-स्पेक्ट्रल आंकड़ों के सम्पूर्ण विश्लेषण के अंतर्गत दृष्टिगोचर व अदृष्टिगोचर (विजिविल और अनविजिविल बैंड), 0.5-1.1 माइक्रोन, ; तापीय अवरक्त क्षेत्र (थर्मल इंफ्रा-रेड बैंड), 4-14 माइक्रोन और सूक्ष्म तरंग क्षेत्र (माइक्रोवैव बैंड), 0.1 मिलीमीटर-100 सेंटीमीटर सम्मिलित है.

मरूयुद्ध की समस्यायें सहस्त्रों वर्षो से पंजाब से लेकर गुजरात तक के सीमान्त क्षेत्र युद्व के मैदान रहे हैं. धन लोलुप विदेशी शासकों ने इस ओर से ही सोने की चिड़िया कहलाने वाले भारत पर अनेकों बार प्रहार किए हैं. महान भारतीय थार मरूस्थल भारत और पाकिस्तान के लगभग 4.46 लाख वर्ग किलो मीटर क्षेत्र में फैला हुआ है. मरूस्थलीय प्रतिकूल परिस्थितियों जैसे चारों ओर विस्तृत चल रेत के ऊंचे टीलों, मीलों दूर तक पानी व पेड़ों का दृष्टिगोचर न होना अत्यधिक गर्मी व ठंड, वर्षा की नगण्यता, सर्प, बिच्छुओं की बहुतायत आदि में सैनिकों को अपने देश की सीमा की चौकसी करनी पड़ती है. पेड़ों की कमी से सैनिकों, टैंकों, गाड़ियों व अन्य आयुधों, यहां तक कि स्वयं को भी शत्रुओं से बचाकर रखना अत्यंत कठिन हो जाता है. यह निगरानी रक्षा कार्यप्रणाली उस समय और चुनौती पूर्ण हो जाती है, जबकि आधुनिक सुदूर संवेदन की सर्वेक्षणीय पैनी निगाहों से मरुक्षेत्र की कोई भी वस्तु अनदेखी नहीं रह पाती है. फिर भी समस्याओं को वृक्ष संवर्धन तकनीक द्वारा कुछ हद तक सुलझाया जा सकता है. रेगिस्तान का सबसे प्रसिद्ध हरा-भरा बहुवर्षीय वृक्ष शमी है, जिसे खेजड़ी (चित्र -3) भी कहते है. यह वही पौराणिक पवित्र वृक्ष है जिसके कोटर में पांडवों के अज्ञातवास के समय पांडुनंदन धनुर्धारी अर्जुन ने अपने दिव्यास्त्र छिपा कर रखे थे.

मरूभूमि में जहां पेड़ पौधे न्यून मात्रा में हैं. वहां हमारी सेनाएं, गाड़ियां, टैंक, रडार व अन्य अस्त्र-शस्त्र सहज ही दुश्मन की निगाह में सीधे आकर निशाना बन जाते हैं.

चित्र-2. आधुनिक छद्मावरण विज्ञान के अंतर्गत प्रयुक्त सुदूर संवेदन आधारित विधियां

मरुयुद्ध में वानस्पतिक छद्मावरण विज्ञान के अंतर्गत प्रयुक्त सुदूर संवेदन की नवीन तकनीकियों द्वारा आकृति परिवर्तन, दृष्टि भ्रम, छाया एवं बाह्य आकृतियों का दृश्य वर्णक्रम व तापीय अवरक्त मापन द्वारा विभिन्न सैन्य गतिविधियों का आंकलन कर लिया जाता है. तत्पश्चात् उपर्युक्त छद्मावरण तकनीकियों के बचाव के लिए रक्षात्मक (डिफैंन्सिव) और प्रहार के लिए विभिन्न विभेदीय तकनीकियों का आक्रामक (आफैंन्सिव) प्रयोग मरुयुद्ध कौशल में किया जाता है. इस लेख में मेरा लक्ष्य छद्मावरण की तकनीकियों के साथ विशेषकर वानस्पतिक छद्मावरण के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालना है.

छद्मावरण की तकनीकियां : मरूयुद्ध में छद्मावरण की उपादेयता और प्रकृति में चतुर्दिक व्याप्त छद्मावरण के आधार पर सशक्त सेनाओं द्वारा परम्परागत युद्धों में सात 7 डी (7 D), तकनीकियों का प्रयोग किया जाता रहा है. आधुनिक अनुसंधान और विकास के अंतर्गत छद्मावरण विज्ञान

चित्र-3. खेजड़ी (प्रासोपिस सिनेरेरिया) व उसकी भू-छत्र छाया

की अत्यधिक भूमिका सिद्ध हुई है और विभिन्न प्रभावकारी छद्मावरण की नवीन तकनीकियों के विकास के साथ उपरोक्त प्रयुक्त तकनीकों का विस्तार किया गया है. परम्परागत प्रथम और द्वितीय विश्व युद्धों में सशक्त सेनाओं द्वारा उपरोक्त वर्णित निम्न 7 डी तकनीकियों का सहारा लिया गया है-

- प्रलोभन देना/झांसा देना (DECOY),
- झूठ का सहारा लेना/मना करना (DENY),
- धोखा देना/भ्रम पैदा करना (DECEIVE),
- देरी/टाल मटोल करना (DELAY),
- कृत्रिम चीजों का प्रदर्शन करना (DUMMY),
- विरूपण/विकृति/मिथ्यावर्णन से भ्रम पैदा करना (DISTORTION) और
- छद्मवेष/आवरण धारण करना या डालना (DISGUISING).

आधुनिक छद्मावरण विज्ञान के अंतर्गत प्रतिरक्षात्मक और आक्रामक आंकलन विधियों के अंतर्गत निम्न प्रभावकारी छद्मावरण तकनीकियों का विकास एवं विस्तार सम्मिलित है. जैसे :-

क. दृश्य छद्मावरण -

1. वानस्पतिक छद्मावरण
2 .मनोवैज्ञानिक छद्मावरण
3. प्रतिरूप अभिज्ञान छद्मावरण

ख. सुदूर संवेदन तकनीक

ग. सूक्ष्मतरंग छद्मावरण
घ. अवरक्त छद्मावरण
च. विशिष्ट छद्मावरणीय साम्रगी

विशिष्ट छद्मावरणीय साम्रगी के अंतर्गत-दृष्टिगोचर, अदृष्टिगोचर, तापीय, अवरक्त क्षेत्र और सूक्ष्म तरंगों के विकिरण से बचाव के लिए अनेक तकनीकियों और रडार एब्जार्बिंग मटीरियल्स (RAM), स्टेल्थ व नैनो मटीरियल्स के पेंन्टस् व अन्य उत्पादों का सफलतापूर्वक विकास कर लिया गया है. इन सफल उत्पादों और तकनीकियों को सेनाओं में समाहित कर लिया गया है, जिनकी नियमित प्रतिवर्ष दिल्ली में आयोजित प्रदर्शनियों के अंतर्गत प्रगति मैदान में रक्षा अनुसंधान विकास संगठन के स्टाल्स पर जनमानस को जानकारी उपलब्ध कराई जाती है. विभिन्न प्रकार के दृष्टिगोचर और अदृष्टिगोचर होने वाले सेनाओं के वस्त्रों, हवाई पट्टियों, टैंकों, वाहनों, वायुयानों, युद्ध पोतों, सैन्य छावनियों, युद्धक्षेत्रों आदि में असली सैन्य उपकरणों और उनके विभिन्न भ्रमित ज्यामितियों के प्रतिरूपों द्वारा अवरक्त पेंट्स के साथ (चित्र-4) उपरोक्त 7 D छद्मावरणीय तकनीकियों के सम्मिश्रण से सर्वेक्षणों से बचाने के साथ शत्रु को भ्रमित भी किया जा सकता है.

वानस्पतिक छद्मावरण - प्रकृति में भी छद्मावरण के कारण जीव-जन्तु एक ओर तो अपनी रक्षा करते हुए अपनी प्रजातियों का अस्तित्व बनाए हुए हैं, वहीं दूसरी ओर अपने भोज्य संग्रह हेतु आसपास के वातावरण में घुलमिल कर सहजता से अपना शिकार करने में सफल होते हैं. इन्ही क्रियाकलापों से प्रेरणा लेते हुए मनुष्य ने वानस्पतिक छद्मावरण के ज्ञान को विकसित किया है. जवानों की टोपियों, तोपों, गाड़ियों, टेन्टों, बंकरों आदि पर विभिन्न आकृति में पत्तियों और शाखाओं को प्रयोग में लिया जाता है. युद्ध के मैदान में सैन्य कारवां को वानस्पतिक आवरण के साथ गुजरते हुए देखा जाता है. दरअसल पेड़ पत्तियों से आच्छादित सैन्य बल व उपकरण सुदूर संवेदन द्वारा अंकित छाया चित्रों से उनकी

उपस्थिति कुछ हद तक नहीं पहचानी जा सकती. आधुनिक छद्मावरण विज्ञान के अंतर्गत प्रयुक्त की गई आकृति परिवर्तन, दृष्टि भ्रम, छाया एवं बाह्य आकृति को मिटाना, लंबी दूरी से दृष्टिगोचर होने वाले बहु-आयामी तीखे किनारों को घुमावदार बनाना और इंफ्रारेड अवरक्त ताप, उष्मामापीय यंत्र एवं सुदूर संवेदन आधारित विधियां हैं, जो कि अपने आप में अकेले पूर्ण सक्षम नहीं है. परन्तु प्राकृतिक वनस्पतियों के साथ मिलकर पृष्ठभूमि में सभी वस्तुएं पूर्ण रुप से विरोहित हो जाती हैं और निश्चित ज्यामिति इस तरह से छिन्न भिन्न हो जाती है कि दुश्मन उनको नहीं पहचान पाता विकास किया गया है (चित्र-5 व चित्र -6). फलस्वरुप आधुनिक सुदूर संवेदन

चित्र-4. भ्रमित ज्यामितियां व इनसे रंगे गन्स एवं युद्धक टैंक

विधियों द्वारा सर्वेक्षणों में व्यवधान उत्पन्न करने में यह उपयोगी सिद्ध हुए हैं.

इस प्रकार छद्मावरण तकनीक बचाव के अतिरिक्त दुश्मनों को दृष्टि भ्रमित कर उनके मानसिक संतुलनों को बिगाड़ने में पूर्ण सफल हुई है.

वानस्पतिक छद्मावरण प्राप्त करने के लिए भू-भाग की निम्न दो विशेषताएं ध्यान मे रखना अति आवश्यक है -

1 . मैदान में वस्तु को आत्मसात् रखने की क्षमता तथा

2 . विशेष भू-भाग में कम से कम दृष्टिगोचर होना

वानस्पतिक छद्मावरण द्वारा सशस्त्र सेनाओं के निम्न उद्धेश्यों की पूर्ति हो सकती है-

क. सैन्य -साम्रगी और अस्त्र-शस्त्रों का पृथ्वी एवं हवाई सर्वेक्षण द्वारा टोह लेने में व्यवधान.

ख. सैन्य -साम्रगी की मौलिक आकृति को छिन्न-भिन्न कर ज्यामिति को बदलने में सहयोग.

ग. विभेदी करण में जैसे तत्काल खोदी हुई या ऊबड़-खाबड़ जमीन पर वनस्पति उगाक

घ. सैन्य साम्रगी से उत्पन्न पार्श्व छाया चित्रों को घास, तृण भूमि (लान) एवं लता, बेलों आदि द्वारा ढंक कर मिटाना. परन्तु ऐसा करने में विशेष सावधानी की आवश्यकता है ताकि वनस्पतियां आड़ी तिरछी हों, आकृति से भिन्न हों, साथ ही पार्श्व भूमि में रखी सैन्य साम्रगी के आकार-प्रकार से मेल खाती हुई हो. अतः इन वस्तुओं को विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों से ढांकना उचित होता है.

ङ. वनस्पति छद्मावरण के अतिरिक्त सैनिकों के लिए आश्रय और एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए मार्ग प्रशस्त करती हैं.

च. सूर्य की तप्त किरणों से उत्पन्न 60 डिग्री सेल्सियस सतही तापक्रम से बचाव.

छ. धूल भरी ऑधियों एवं चल-अचल रेतीले टीलों द्वारा रक्षा.

ज. घने और दीर्घायु वाले पौधों द्वारा वार्षिक सिंचन में बढ़ोत्तरी एवं अति वृष्टि काल में भूमि कटाव एवं क्षरण को रोकने में अहम् भूमिका.

झ. वनस्पति का छद्मावरण के साथ-साथ आपातकाल

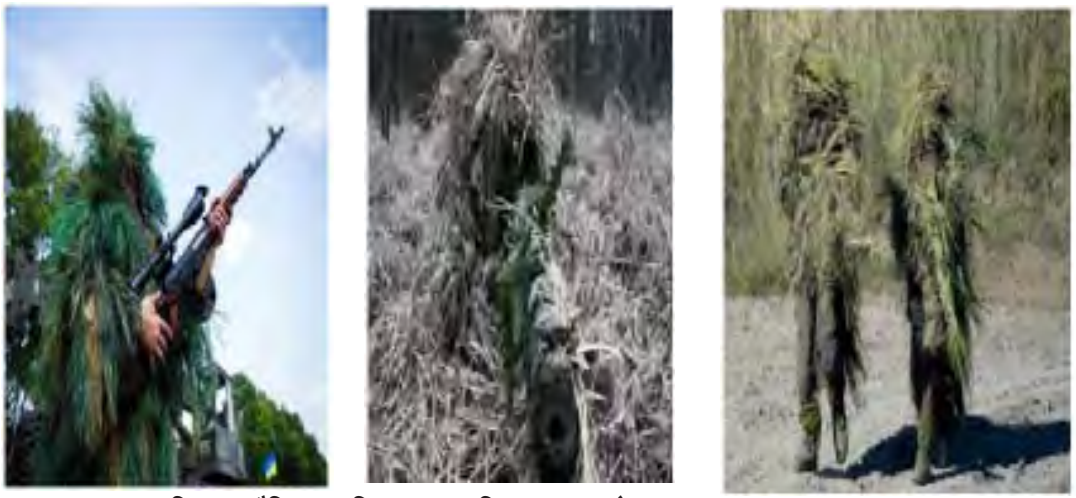

चित्र-5. सैनिक प्राकृतिक व वानस्पतिक छद्मावरण के साथ

चित्र-6. प्राकृतिक और वानस्पतिक छद्मावरण में सैनिक अस्त्रों के साथ

में खाद्य और प्राथमिक चिकित्सा में औषधि के रुप में उपयोग.

वानस्पतिक छद्मावरण के अंतर्गत वृक्ष संवर्धन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए मुख्यतयाः दो तकनीकें अपनाई जाती हैं -

प्रथम तकनीक में घास-पात द्वारा हरियाली उत्पन्न की जाती है, जिससे त्वरित ही छद्मावरण प्राप्त किया जाता है. यह छद्म आवरण भूखंड की मृदा और प्राकृतिक क्षेत्र से मिलती जुलती होनी चाहिए. इस तकनीक में प्राकृतिक घास व छोटे पौधों के गलीचे तथा कृत्रिम घास व नाइलोन से निर्मित वनस्पतियां एवं

बैराकुडा (Barracudab) द्वारा निर्मित विभिन्न उत्पाद प्रयोग में लाये जाते हैं. ये वनस्पतियां विभिन्न प्रकार के दृश्य व अदृश्य (विजिविल इंफ्रारेड मटीरियल्स) पदार्थों से छद्मावरण बना दिए जाते हैं. द्वितीय तकनीक के अंतर्गत पेड़ पौधों एवं झाड़ियों का आवश्यकतानुसार स्थानान्तरण सम्मिलित है. इस तकनीक में कटी हुई और कृत्रिम वनस्पतियों के साथ अन्य सैन्य सामग्रियों की आकृतियों को तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत करना और आड़े पर्दों का प्रयोग सम्मिलित है.

लेखिका ने वानस्पतिक छद्मावरण द्वारा सुरक्षा प्रदान करने की दिशा में 12 मरुभूमि के वृक्षों (चित्र-3, प्रासोपिस सिनेरेरिया ,चित्र -7 केर, केपरिस डेसीडुआ) का चयन किया था. जिनके नाम हैं-

(1) इजरायली बबूल , (2) विलायती बबूल , (3) खेजड़ी , (4) सुबबूल, (5) नीम, (6) जाल, (7) केर, (8) रोहिड़ा , (9) सरेस , (10) सोनापार, (11) सफेदा , (12) बोरडी

चित्र-7. केर (केपरिस डेसीडुआ) व उसकी भू-छत्र छाया

रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन की रक्षा प्रयोगशाला, जोधपुर ने बाड़मेर, जैसलमेर, और जोधपुर के प्रमुख सैनिक क्षेत्रों में सफलता पूर्वक वानस्पतिक छद्मावरण उपलब्ध कराया है जिनका उल्लेख संदर्भ (9 से 13) में किया गया है.

इन छावनियों और सैनिक क्षेत्रों में लाखों पेड़ों का सफलतापूर्वक प्रत्यारोपण कर आदिकाल से पेड़ पौधों की युद्ध क्षेत्रों में अहम् भूमिका रही है. सन् 1965 और 1971 के भारत-पाक युद्धों में मरुयुद्ध की भूमिका को सीमा सुरक्षा बल (BSF) के कर्नल जयसिंह ने भी अपनी पुस्तक 'तनोत की लडाई (Battle of Tanot, 1975)` में रोचकता पूर्वक उल्लेख किया है. इस समय छद्मावरण प्रौद्योगिकियों का समुचित विकास नहीं हुआ था. इन उपरोक्त भारत-पाक मरुयुद्धों में कटी हुई सूखी और हरी वनस्पतियों का सैनिकों की टोपियों के ऊपर, गाड़ियों, टैंकों, अस्त्र-शस्त्रों आदि के ऊपर, नाइलोन निर्मित जाल के साथ आच्छादित करना, पेड़ पौधों की जड़ों को चूसकर प्यास बुझाना, रात्रि में टीलों के पीछे गड्ढों में विश्राम करना आदि परम्परागत विधियों के प्रयोग का वर्णन उपरोक्त पुस्तक में किया गया है. देशीय और विदेशीय युद्ध चलचित्रों में भी इनका बहुतायत से प्रयोग दर्शाया गया है.

वानस्पतिक छद्मावरण का अर्थ है, सजीव अथवा सूखी हुई एवं सद्यः काटी हुई वनस्पति द्वारा आवरण डालना और यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि सजीव वानस्पतिक छद्मावरण रेगिस्तान व दूरस्थ क्षेत्रों में अपने आयुधों एवं सैनिकों को छुपाने का एक स्थाई तरीका है. पेड़ों में छुपने-छुपाने की क्षमता का आंकलन पेड़ों की छाया का घनत्व एवं दो पेड़ों की छत्र-छाया के घनत्व के बीच की आपेक्षिक दूरी को नाप कर किया जा सकता है जिसके लिए चित्र-3. खेजड़ी (प्रासोपिस सिनेरेरिया) और चित्र-7. केर (केपरिस डेसीडुआ) की भूमि पर पडने वाली छत्र-छाया को देखें.

पेड़ों की छत्र-छाया का घनत्व (d) वह अनुपातिक घनत्व है जो भू-भाग के एक ईकाई में उपलब्ध होता है और जिसे निम्न दो समीकरणों द्वारा समझा जा सकता है -

1 . घनत्व (d) =भू भाग पर अनुपातिक छत्र छाया का घनत्व / विशेष भू भाग (ईकाई)

2. आपेक्षिक दूरी/अनुपातिक दूरी = दो वृक्ष की छत्र छाया (घेरा) की दूरी का अनुपात/वृक्ष की छत्र छाया का

सारणी. 1 विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों द्वारा वस्तुओं को छुपा सकने (आत्मसात) की क्षमता

क्रमांक	लकड़ी प्राप्ति के स्थान एव प्रकार	वितानों का घनत्व(density) ग्राम/घन सेंटी मीटर	दो वितानों के बीच की आपेक्षिक दूरी	टिप्पणी
1	मोटे तनों व शाखाओ	0.5 से कम	एक तिहाई	सबसे बढ़िया आवरण
2	सामान्य घने जंगल	0.25 से 0.5 तक	एक तिहाई से शत् -प्रतिशत्	अच्छा आवरण/लंबी सपाट वस्तुएं जैसे पगडंडियां, सड़कें, चौराहे आदि आसानी से दृष्टिगोचर हो जाते हैं अतः इनको कम से कम 90 फीसदी तक इन सामान्य घने जंगलों से ढंका जा सकता है.
3	विरले घने जंगलं	0.1 से 0.25 तक	एक से दो गुना	50 फीसदी तक सामान्य आवरण तथा 50 फीसदी आवरण के लिए अन्य कृत्रिम उपाय जुटाने पड़ेंगे.
4	बहुत ही विरले जंगल	0.1 से कम	दो से पांच गुना	किसी भी तरह से सैन्य वस्तुएं एवं सैनिकों का छुपना असंभव, सड़कें, व पगडंडियां आसानी से दृष्टि गोचर हो जाते हैं अतः आवरण के लिए अन्य कृत्रिम उपाय जुटाने पड़ेंगें

अनुपात

दो छत्र छाया (घेरा)की आपेक्षिक या अनुपातिक दूरी को उपरोक्त समीकरण द्वारा समझा जा सकता है.

उपर्युक्त दोनों समीकरणों से हमें मैदान में कितनी जमीन बगैर वृक्ष के खाली पड़ी है तथा इस खाली जगह में कितने और पेड़ लगाने की आवश्यकता है, मालूम कर सकते हैं. इसे सारणी 1 द्वारा भी समझाया गया है -

उपर्युक्त सारणी से यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि वितान (Crown) का अनुपात 0.5 मीटर से अधिक है तो इसके द्वारा युद्ध सामग्री को छुपाना शत्-प्रतिशत् संभव है जैसा कि सघन पेड़ों से युक्त जंगलों में देखा जा सकता है अन्यथा सैन्य सामग्री को छुपाने के लिए वनस्पति के अलावा अन्य साधन जुटाने पड़ेंगे. जिनके अंतर्गत नाइलोन व अन्य पॉलीमरों द्वारा निर्मित कृत्रिम पेड़, झाड़ियां, घास नेट और सैनिक साजो सामान के छद्म डिकॉय सम्मिलित हैं . डिकाय (छद्म लक्ष्य) का निर्माण सस्ते मिलने वाले पदार्थों जैसे कि लकड़ी, प्लाइवुड, बांस, प्लास्टिक, रबर, एल्यूमीनियम आदि के उपयोग से कर सकते हैं. आधुनिक डिकाय के अंतर्गत चैफ, फ्लेयर्स, टोड डिकाय और स्मार्ट डिकाय आदि सम्मिलित हैं. इन डिकायों को वनस्पतियों के साथ योजनाबद्ध तरीके से युद्ध क्षेत्र में प्रयुक्त करने से शत्रु को काफी हद तक दिग्भ्रमित किया जा सकता है.

वृक्ष संवर्धन तकनीक : वृक्ष संवर्धन के उद्धेश्यों को ध्यान में रखते हुए दो प्रकार की तकनीक अपनाई जाती है.

1. घास-पात द्वारा हरियाली करना (By Creation of Herbage)

इस विधि द्वारा सतृण भूखंड के प्रयोग से त्वरित छद्म आवरण प्राप्त किया जा सकता है परन्तु विधि को अपनाते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है.

क. सतृण भूखंड की मृदा को जिस मृदा पर आवरण के लिए प्रयोग करनी है वहां से मिलती जुलती होनी चाहिए. यदि मृदा मरूस्थलीय है तो सतृण भूखंड की मृदा भी रेतीली होनी चाहिए न कि पहाड़ी मिट्टी से मिलती हो.

ख. आसानी से सतृण भूखंड को जमीन से निकालने से पूर्व जमीन को पहले पानी ड़ालकर नर्म कर लेना चाहिए ताकि आसानी से निकल आए और कम से कम 1 से 2 सेंटीमीटर गहरी मिट्टी के साथ निकालना चाहिए.

ग. निकाले हुए सतृण भूखंड को स्थानांतरण करते समय भूखंडों के तृणों को आमने-सामने रख कर ले जाना चाहिए ताकि सूखे नहीं. मौसम को ध्यान में रखते हुए 2 से 3 दिनों के अंतराल से पानी भी पिलाते रहना चाहिए और यदि भूखंड पर घास-पात न लगे तो कुछ खाद एवं वृद्धि कारक रसायन भी मिट्टी में मिला देना चाहिए.

यदि त्वरित सतृण भूखंड की प्राप्ति कठिन हो तो स्थान विशेष पर ही घास के बीज ड़ालकर घास तैयार कर लेनी चाहिए. परन्तु ऐसा करने में कम से कम 15 से 30 दिन लग सकते हैं. वर्षा ऋतु के आरंभ होते ही 10 से 12 सेंटीमीटर गहरी खोदी हुई जमीन में घास के बीज लगा देना चाहिए. सामान्यतया 20 से 75 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर तक बीज बोए जा सकते हैं.

2. पेड़ पौधों एवं झाड़ियों का आवश्यकतानुसार स्थानांतरण (Transplanting of Trees & Shrubs)

पहले से लगे हुए पेड़ पौधों को उखाड़कर स्थानांतरित करते समय निम्न बातें ध्यान में रखना चाहिए, ताकि पौधे सूखे नहीं और नई जगह पर लग जाएं.

1- पेड़ पौधों को जमीन से सावधानी पूर्वक निकालें और शीघ्रातिशीघ्र लगाएं ताकि किसी प्रकार की क्षति न हो.

2- पेड़ लगाने के पश्चात् पौधों के अग्रभाग में गीली मिट्टी या गोबर लगा दें ताकि जल वाष्पीकरण कम से कम हो .

रूस ने इस तरह के प्रयोगों पर सफलता प्राप्त की है और उन्होंने रातों-रात अपने शत्रुओं को बड़े-बड़े पेड़ों के प्रयोग से नया रूप दे धोखा देने में महारत हासिल की है.

कटी हुई वनस्पति द्वारा छद्मावरण : यदि पेड़ पौधों की तैयार पौध न मिले तो पहले से काटी हुई एकत्रित वनस्पतियों द्वारा भी अस्थाई छद्मावरण किया जा सकता है,

ये भी व्यक्ति, उपकरण,वाहन व अन्य सामग्री विशेष को नया रूप प्रदान करती है. सुबह-शाम कटी वनस्पति में नमी की अधिकता होती है अतः नकली होने का भ्रम नहीं होता. इन कर्तनीय वनस्पतियों को पेड़/पौधों से काटकर कुछ घंटों से लेकर अनेक दिनों तक प्रयोग के लिए सुरक्षित रखना पड़ता है. अतः इनकी जीवन अवधि बढ़ाने के लिए इन्हें मुख्य तने के ऊपरी भाग से काटना चाहिए तथा इसकी लम्बाई कम से कम 0.7 मीटर होनी चाहिए. जहां तक संभव हो सके शाखाओं को काटकर मोटे व गीले कपडे में लपेट कर रखना चाहिए ताकि सूखे नहीं. ताजा बनाए रखने के लिए कुछ रसायनों का प्रयोग किया जा सकता है. सामग्री पर कटी शाखाओं को सीधी एवं मजबूती से लगाएं और यदि कोई आधार न मिले तो 2 या 3 शाखाओं को आपस में गूंथ कर बांध दें . यह भी सुविधाजनक होगा यदि दो वस्तुओं के बीच की दूरी 15 से 20 सेंटीमीटर हो ताकि जो भी जाल बनाया जाए उसमें ढ़ील न हो और तनाव भी बना रहे.

छद्मावरण में वनस्पतियों का प्रयोग : वनस्पतियां चाहे वे बडे हरे पेड़, छोटी झाड़ियां, कर्तनीय वनस्पति, सूखी

चित्र-8. पहले से काटी हुई एकत्रित वनस्पतियों द्वारा अस्थाई छद्मावरण

घास हो या खूंटे सभी से छद्मावरण ड़ाला जा सकता है. परन्तु आवरण करते समय जगह एवं सामग्री विशेष का भी ध्यान रखना पड़ता है ताकि आवरण बनावटी न लगे और शत्रु सही स्थिति का आंकलन भी न कर पाए. छद्मावरण में जीवित वनस्पतियों का रोपण निम्न कई तरह से किया जा सकता है ताकि वे पर्दो का आभास प्रदान करें और इन पर्दो को किसी भी निम्न तरीके से प्रयोग में ला सकते हैं.

अ. ढांकना (Cover) :- सैन्य सामग्री को ढांकने के लिए सतृण भूखंड अति उत्तम है. झाड़ियों, पेड़ों और लताओं से भी ढांकने का कार्य लिया जा सकता है.

ब. सैन्य सामग्री की आकृति को तोड़-मोड़ कर प्रस्तुत करना :- पेड़, पौधे झाड़ियां और लताएं वस्तुओं की आकृति को विकृत करते है अतः इन्हें इस तरह भवनों, इमारतों, बंकरों आदि पर लगाया जाए जिससे इनकी छाया को तोड़ मरोड़कर प्रस्तुत किया जा सके और दूर से देखने पर इन भवनों की उपस्थिति महसूस न हो.

चित्र-9 छद्मावरण में प्रयुक्त बेराकुडा नेट के पीछे से सैनिक द्वारा गन से आक्रमण व छद्मावरित टैंक

स. आड़े पर्दे :- वनस्पति से बने पर्दो का प्रयोग किसी भी तरह की जमीन पर दो वस्तुओं,पहाड़ों, खाइयों के बीच की दूरी को ढांकने के लिए कर सकते हैं और इस तरह दुश्मनों की नजरों से सामग्री को छुपा कर रखा जा सकता है.

वानस्पतिक छद्मावरण थार मरूस्थल के संदर्भ में - थार मरूस्थल भारत के 3.42 लाख वर्ग किलामीटर क्षेत्र में अपना साम्राज्य फैलाए हुए है. यह विगत तीन पाक-भारत युद्धों का चश्मदीद गवाह है और भविष्य में भी सैनिक अभ्यास और युद्ध इसी धरती पर ही होंगे, अतः मरूक्षेत्र की सामरिक महत्ता और भौगोलिक स्थिति अत्यन्त महत्वपूर्ण है. सीमावर्ती जिले जैसलमेर, बाड़मेर, श्रीगंगानगर, बीकानेर और कच्छ के साथ सामरिक महत्व के जिले जोधपुर, अहमदाबाद, जामनगर आदि की चौकसी सैनिको के लिए विचारणीय है. इन अर्धशुष्क क्षेत्रों में प्राकृतिक वनस्पति और वानस्पतिक छद्मावरण की अहम् भूमिका है. रक्षा प्रयोग शाला जोधपुर (सुशीला राय, संदर्भ 9 से 13) ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है . वानस्पतिक सुरक्षा प्रदान करने की दिशा में उपरोक्त चयनित 12 वृक्षों का उत्पादन और स्थानांतरण कर कुछ अंशों में वानस्पतिक छद्मावरण सैनिक छावनियों और सीमावर्ती क्षेत्रों में उपलब्ध कराया है. बाड़मेर, जैसलमेर और जोधपुर जिले के प्रमुख सैनिक क्षेत्रों में लाखों वृक्षों और हजारों बेलों का सफल प्रत्यारोपण कर विकास किया है.

युद्ध में प्रयुक्त होने वाली छद्म प्रौद्योगिकी को तीन

भागों में विभक्त कर सकते हैं. पहली थलसेना के प्रयोग में आने वाले टैंकों, मिसाइलों, तोपों, ट्रकों, जीपों व अन्य उपकरणों का छावनियों और युद्ध क्षेत्रों में आने वाले साजो सामान हैं. नौ सेना में मुख्यतया काम में आने वाले उपकरणों में जहाज, पनडुब्बियां, मोटर बोट, डॉकयार्डस् आदि सम्मिलित है. इसी प्रकार वायुसेना में काम आने वाले विभिन्न लडाकू विमान, मिसाइलें, एंटी एयर क्राफ्ट गन, हेलिकॉप्टर्स, वायुपट्टी , एयर ट्रैफिक कंट्रोल, हैंगर्स आदि हैं. प्राकृतिक और कृत्रिम वनस्पतियों के साथ विभिन्न डिकायों (डमीज और डिकॉयज़)के उपयोग द्वारा छद्म युद्ध क्षेत्र व छावनी के लक्ष्य निर्मित किए जाते हैं.स्मार्ट डिकायों और कृत्रिम वायुपट्टी की प्रतिरूप अनुकृतियों (डिसरप्टिव पैटर्नस) पर विशिष्ट छदमावरणीय पदार्थों मल्टीस्पैकट्रल केमोफ्लेज पैट्स नैनो पैट्स, टार्पलीन्स, नैट्स, फोम्स, रेडार एब्जार्बविंग मटीरियल्स आदि को प्रयोग में लेकर प्राकृतिक स्थिति उत्पन्न कर एवं वातावरणीय तापमान के अनुसार रंग परिवर्तन कर शत्रु को दिग्भ्रमित किया जाता है. इस प्रकार शत्रु असली लक्ष्यों का पता लगाने में काफी समय गंवा देता है और अपना गोला बारूद इन छद्म लक्ष्यों को नष्ट करने में खर्च कर देता है. चतुर्दिक वानस्पतिक छद्मावरण इन कृत्रिम लक्ष्यों को और अधिक सजीव सा बना देता है. विशेषकर मरूक्षेत्र में वानस्पतिक छद्मावरण की भूमिका और अधिक सार्थक हो जाती है.

मरुयुद्ध में वानस्पतिक छद्मावरण की एक अनिवार्य तकनीक के रुप में अहम भूमिका है. वानस्पतिक छद्मावरण के साथ बेराकुडा नेट (चित्र-9), प्रतिरुप अभिज्ञान, अवरक्त पेंट्स व कृत्रिम वनस्पति आदि तकनीकियों का संयुक्त प्रयोग रणकौशल में पूर्णता प्रदान करता है. मरु पर्यावरण, प्राकृतिक आपदा प्रबंधन एवं पारिस्थितिकी संतुलन के साथ सैन्यबलों, अस्त्र-शस्त्रों और मरुयुद्ध क्षेत्रों की सुरक्षा एवं मारक क्षमता बढ़ोत्तरी की दिशा में वानस्पतिक छद्मावरण में प्रयुक्त सुदूर संवेदन तकनीक निर्णायक सिद्ध हुई है.

चित्र-9 छद्मावरण में प्रयुक्त बेराकुडा नेट के पीछे से सैनिक द्वारा गन से आक्रमण व छद्मावरित टैंक 70 के दशक में उपग्रहों द्वारा पृथ्वी के सर्वेक्षण का कार्य छद्मावरण विज्ञान में क्रांति लाया था, पर विद्युत-चुम्बकीय वर्णक्रम में उपलब्ध सभी विकिरणों के लिए विकसित खोजी उपकरणों ने सभी छद्मावरण संसाधनों को निष्फल व निष्क्रिय कर दिया है, जिसके फलस्वरुप नवीन अनुसंधानो अंतर्गत स्टेल्थ साम्रगी व तकनीक के अंतर्गत नैनोट्यूब तक का विकास किया गया है.

अतः ऐसी छद्मावरण प्रणाली की आवश्यकता है जो बदलते परिवेश में सम्पूर्ण विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम में कहीं भी खोजी न जा सकें. इस संदर्भ में नैनो टैकनेलॉजी व नैनो मटीरियल्स और स्टेल्थ एप्लीकेशन्स पर प्रकाषित छंदवूमता के जनवरी 30, 2014 के अंक में प्रकाषित एक महत्वपूर्ण रिव्यू लेख (एस आर वडेरा एण्ड नरेन्द्र कुमार, संदर्भ 14) इस विषय पर नवीनतम जानकारी उपलब्ध कराता है. युद्ध में उपरोक्त वर्णित उच्च तकनीकियों एवं आधुनिक उपकरणों के साथ वानस्पतिक छद्मावरण का समायोजन युद्ध सामग्री, उपकरणों और छावनियों को शत्रु के आक्रमणों से सुरक्षित रखने के लिए प्रभावी तकनीक है. प्रयुक्त छद्मावरण विज्ञान के अंतर्गत यह निष्कर्ष है कि छद्मावरण किए गए सैन्यबल, सैन्य सामग्री, अस्त्र-शस्त्र, वाहन, बंकर, हवाई अड्डे, बंदरगाह, छावनियां आदि हवाई व उपग्रह सर्वेक्षणों से टोह लेने के दौरान भ्रम उत्पन्न करने में वानस्पतिक छद्मावरण सफलतम तकनीक सिद्ध हुई है.

चित्र- ९ नैनो टैक्नोलॉजी व नैनो मटीरियल्स और स्टेल्थ एप्लीकेशन्स

सोयाबीन का औषधीय महत्त्व

-डॉ हेमलता पंत
वैज्ञानिक, एस.बी.एस.आर.डी.
10/96 गोलाबाजार, नई झूसी, इलाहाबाद-211019

सोयाबीन का औषधीय महत्त्व सोयाबीन में उपस्थित प्रोटीन व आहरिक रेशे पाए जाने के कारण इससे रक्त में ग्लूकोज की मात्रा कम होती है जिससे खून की कमी होने से रोकता है तथा सोयाबीन में आयरन की मात्रा अधिक होने के कारण यह एनीमिया को भी नियन्त्रित करता है. सोयाबीन में पाई जाने वाली प्रोटीन से हमारे शरीर के रक्त में हानिकारक कोलेस्ट्रोल की मात्रा भी कम होती है. जिससे हृदय रोग की संभावनाये कम होती है. सोयाबीन में पाए जाने वाले आइसाफ्लोविन रसायन के कारण महिलाओं से सम्बन्धित रोग व स्तन कैंसर से बचाव करता है.

सोयाबीन की पौष्टिकता को देखते हुए इसे हमारे दैनिक जीवन में विभिन्न रूपों में प्रयोग किया जा सकता है सोयाबीन के प्रसंस्करण से विभिन्न पदार्थ बनाए जा सकते है, जिनका हम अपने घर में उपयोग करने के साथ साथ अपना घरेलू उद्योग भी प्रारम्भ कर सकते है, उद्यमों की स्थापना तथा बेरोजगारों को रोजगार प्रदान करने में सोयाबीन प्रसंस्करण काफी हद तक मददगार सिद्ध हो सकता है. इसका लाभ उठाने के लिए तथा सोया पदार्थों की ग्रामीण जरूरतों को पूरा करने के लिये देहातों / कस्बों में ऐसे उद्यमों की स्थापना करनी चाहिए जिससे वहां के लोगों की जरुरतें पूरी होने के साथ साथ उनको रोजगार स्थानीय स्तर पर ही उपलब्ध हो सके तथा उनको शहर की ओर रुख करने की आवश्यकता महसूस न हो साथ छोटे शहरों में सोयाबीन पर आधारित उद्यमों को प्रोत्साहन मिलने से शहरवासियों को कम दाम पर अच्छी गुणवत्ता वाला प्रोटीन उपलब्ध हो सके. यह तरीका अपनाने से प्रसंस्करण के लिए कच्चे माल को शहर की तरफ जाने तथा प्रसंस्कृत पदार्थ को देहात में वापस ले आने में परिवहन व्यय तथा इसके रख रखाव में होने वाली हानियों को कम किया जा सकता है. ग्रामों तथा शहरों में सोयाबीन का प्रसंस्करण करते समय तथा उद्यमों का चयन करते समय इस बात का ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिए कि जो खाद्य पदार्थ तैयार करने की इकाई लगाई जा रही है उस पदार्थ में लोगों की रुचि या पसंद अवश्य हो. जो पदार्थ उस क्षेत्र में पारम्परिक रूप से प्रचलन में हो तथा स्थानीय लोगों केखान पान / आहार का एक हिस्सा हो उनके आधार पर तथा स्थानीय मांग के अनुरूप सोयाबीन का उद्यम स्थापित करना लाभप्रद सिद्ध हो सकता है.

सोयाबीन को प्रयोग करने के मुख्य तरीके निम्न प्रकार हैं -

1- सोयाबीन का आटा : साफ सोयाबीन को उबलते पानी में 20 मिनट के लिए उबालें और उसके बाद पानी से निकालकर धूप में सुखाएं एबं सूखने पर पिसवा कर रखें सोयाबीन का आटा तैयार है.

सोयाबीन के तैयार आटे को गेंहू के आटे या बेसन के साथ विभिनन् खाद्य पदार्थ बनाने के लिए मिलाया जा सकता

है सूखे हुए सोयाबीन को गेंहूं या चने के साथ भी पिसवाया जा सकता है लेकिन गेहूं तथा सोयाबीन का अनुपात 1: 9 का होना चाहिए.

2- सोयाबीन दूध / पेय : साफ किए हुए सोयाबीन या सोयाबीन की दाल को भिगोकर 6-8 घंटे के लिये रख दे. तत्पश्चात 1 भाग सोयाबीन तथा 6 भाग पानी के साथ मिक्सी या ग्राइन्डर में पीसें तथा तैयार स्लरी को 10 मिनट के लिये उबालें तत्पश्चात मलमल के कपडे से छान लें और स्वाद अनुसार चीनी मिलायें. ठंडा करने पर मनपसंद की खुशबू मिलायें। लीजिये सोयाबीन दूध तैयार है तथा इस प्रकार 1 किलोग्राम सोयाबीन से लगभग 6 लीटर दूध तैयार हो जाता है.

3- सोया पनीर : सोया पनीर सोयाबीन का सवीत्तम खाद्य पदार्थ है तथा आसानी से पाचन हो जाता है। आइसोफ्लेवान की मात्रा इसमें सर्वाधिक मिलती है तथा यह देखने में दूध के पनीर जैसा लगता है जापान में इसको टोफू कहते हैं इसको भी आसानी से घर पर बनाया जा सकता है। इसको बनाने के लिये साफ सोयाबीन को उबलते पानी में डालकर गरम करें

तथा फिर ठंडे पानी में 3/4 घंटे के लिये भिगो दें. तत्पश्चात मिक्सी में गरम पानी केसाथ 1:9 के अनुपात में पीस लें तथा मलमल के कपडे से छान लें दूध के समान तरल पदार्थ को उबालें तथा 5 मिनट पश्चात कैल्शियम क़्लोराइड के घोल से फाड़ दें तथा 5 मिनट के लिये बिना हिलाए डुलाए रख दें फिर मलमल के कपडे में दबाकर रख दें लगभग 10 मिनट बाद कपड़े से निकालकर

4- वसा रहित आटे का उपयोग : सोयाबीन का वसारहित आटा प्रोटीन का बहुत ही अच्छा स्त्रोत है इसमें 50-60 प्रतिशत प्रोटीन होता है और इसमें बीन की गन्ध भी बहुत कम आती है इसको आसानी से प्रयोग में लाया जा सकता है गेहूं के आटे में मिलाकर सभी गेहूं के आटे से बनने वाले

व्यंजन बनाये जा सकते हैं जैसे - रोटी, डबलरोटी, पूडी पराठा, समोसे, हल्वा आदि खाद्य पदार्थों में 30 प्रतिशत मिलाने पर भी स्वाद में अन्तर नहीं आता है. वसा रहित आटे को बेसन के साथ भी मिलाया जा सकता है. बेसन के सेब (नमकीन) बनाने में इसको 40^3 तक स्वाद मे बिना अंतर आये मिलाया जा सकता है. तथा वसा रहित आटा मिलाने पर बेसन के नमकीन का रंग व कुरकुरापन बढ जाता है. इसी प्रकार बेसन का हलुआ बनाने में भी 20^3 तक सोयाबीन आटा मिलाया जा सकता है. बेसन में मिलाने पर खाद्य पदार्थों की पोष्टिक गुणवत्ता बढने के साथ साथ कीमत भी कम हो जाती है.

5- सोयाबीन पापड : घरों में पापड सामान्यत उडद या मूंग की दाल से बनाए जाते हैं. पापड के लिए भी वसा रहित सोयाबीन के आटे को

तैयार कर अन्य दालों के आटे के साथ मिलाकर पापड बनाने में उपयोग कर सकते हैं शोध द्वारा यह ज्ञात हो चुका है कि वसा रहित सोयाबीन का आटा पापड बनाने के लिये

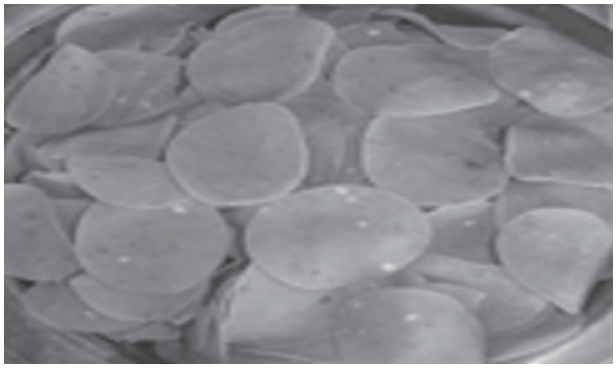

80^3 तक प्रयोग में लाया जा सकता है.

6- सोयाबीन नमकीन : साफ सोयाबीन को नमक के घोल में 20 मिनट तक उबालें तथा बाद में नमक के घोल से निकालकर 5 मिनट के लिए पंखे के नीचे फैला दें तथा फिर

गरम तेल में तल लें और फिर चाट मसाला स्वाद अनुसार मिला लें सोया नमकीन तैयार है.

7- अंकुरित सोयाबीन का नाश्ता : सोयाबीन 2 भाग तथा 1भाग चना तथा 1 भाग मूंग को पानी में भिगोकर रात भर रखना चाहिये तथा इसके लिये तीनों दालों को अलग अलग कपडे में बांध कर 6-8 घंटे भिगोकररखें तथा जब अंकुरण ह जाये तो साफ पानी से धोकर अंकुरित सोया दालों को हल्की भाप में पका लेना चाहिये. तथा बाद में तीनों को मिलाकर हरा धनिया,प्याज,टमाटर,मिर्च तथा नमक व नींबू स्वाद अनुसार मिलाकर नाश्ते में उपयोग किया जा सकता है.

8- सोयाबीन की बडी : सोयाबीन 100 ग्राम,मूंग दाल 100 ग्राम,चना दाल 100 ग्राम,उडद दाल 100 ग्राम तथा कुम्हडा किसा हुआ 500 ग्राम हरी मिर्च, अदरक, हींग स्वाद अनुसार. सभी दालों को 8-10 घंटे के लिये पानी में भिगो दें उसके बाद अच्छी तरह साफ पानी से धो लें तथा इसमें सोयाबीन के छिलके निकालकर धोयें. इसके बाद में सभी दालों को पीस कर उसमें कसा हुआ कुम्हडा व मसाले मिलायें तथा इसकी बडी बनाकर धूप में सुखा लें व हवा बंद डिब्बे में रखें एवं आवश्यकतानुसार उपयोग करें.सोयाबीन के उपयोग में सावधानीसोयाबीन में कुछ ऐसे तत्व पाये जाते हैं जो कि सामान्य पोषण के पाचन में बाधा डाल सकते हैं इसलिये इन तत्वों के बुरे प्रभाव को दूर करने के लिये हमें सोयाबीन के बने खाद्य पदार्थों को या उन्हे बनाने से पहले सोयाबीन को कम से कम 15 मिनट के लिये 100 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान पर गरम करलेना चाहिये एवं कभी भी कच्चे सोयाबीन का

होमीभाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता-2013 में प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त लेख

इबोला के लपेट में पश्चिम अफ्रीका : कुछ वैज्ञानिक तथ्य

राघव शैलेंद्र कुमार सिंह
वैज्ञानिक अधिकारी
भारतीय उष्णदेशीय मौसम विज्ञान संस्थान
पुणे-411008 (महाराष्ट्र)

इबोला विषाणु रोग (ईवीडी) जिसे पहले इबोला रक्तश्रावी रोग से जाना जाता था, अब उसे WHO व्दारा एक गंभीर बहुधा मनुष्यों में घातक रोग पैदा करनेवाला माना जाता है. विषाणुओं के वर्गीकरण पर आधारित अंतरराष्ट्रीय समिति वर्तमान में ईबोला वायरस की पांच प्रजातियों को पहचानता है-ईबोला वायरस (EBOV), सुडान वायरस (SUDV), रेस्टोन वायरस (RESTV), ताई फॉरेस्ट वायरस (TAFV) और बूंदीबुग्यों वायरस (BDBV) इनमें से चार विषाणुओं को मनुष्यों में ईबोला विषाणु रोग (EVD) पैदा करते हुए पाया गया है जबकि पांचवा रेस्टोन विषाणु दूसरे वानर-जातीय जीवों में EVD पैदा करते हैं. ईबोलावायरस जयरे (Zaire) ईबोला वायरस का एकमात्र सदस्य है जो ईबोला वायरस वर्ग के लिए टाइप प्रजाति है. वर्तमान में पश्चिमी अफ्रीका के प्रकोप को पैदा करने वाला वायरस जयरे प्राजति से संबंध रखता था.

ईबोला की उत्पत्ति : ईबोला सर्वप्रथम सन् 1976 में दो लगातार प्रकोपों व्दारा पहली बार, सुडान और दूसरी बार यमबुकु कांगो प्रजातांत्रिक गणराज्य में प्रकट हुआ. पिछला प्रकोप ईबोला नदी के निकट बसे एक गांव में हुआ जिससे इस रोग का नामकरण हुआ. डॉ.पीटर पॉयट (Dr.Peter Piot) जिनका जन्म सन् 1949 में हुआ, एक बेल्जियन सूक्ष्म जीव विज्ञानी थे. जो ईबोला और एड्स में अपने अनुसंधान के लिए विख्यात थे.

डॉ.पीटर पॉयट ने सन् 1976 में इस प्राणघातक विषाणु की खोज की और इससे अपने को सुरक्षित बचाने के लिए खुद को भाग्यशाली मानते हुए डॉ.पीटर पॉयट इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रापिकल मेडीसिन, अंतवर्प में काम कर रहे थे. वर्तमान महामारी से जग को बचाने के लिए अब वे मदद जुटा रहे हैं. मात्र 27 वर्ष की आयु और साहसिक कार्यों को पूरा करने की उमंग से ओत-प्रोत उदीयमान विषाणुविज्ञानी को एक खौफनाक विषाणु का पता लगाने के लिए अफ्रिका भेजा गया. यह सन् 1976 था और बेलिजयम स्थित अंतवर्प की उनकी प्रयोगशाला में रक्त की दो कांच नलियों को धारण करनेवाली एक नीले प्लास्टिक कूलर में, वायरस को लाया गया था. एक बेल्जियन मठवासिनी जो रक्त एंव रक्ताल्पता से मरणासन्न थीं, की देखभाल करने वाले एक बेल्जियन डॉक्टर व्दारा उस वायरस को जयरे से भेजा गया था. एक नली अछूता था, दूसरा टूटा हुआ था और लाल शोरबा बनाने के लिए इसके अंदर रखी वस्तु पिघले बर्फ से मिश्रित की गई थी. एक रक्तरंजित टिप्पणी बयां कर रही थी कि

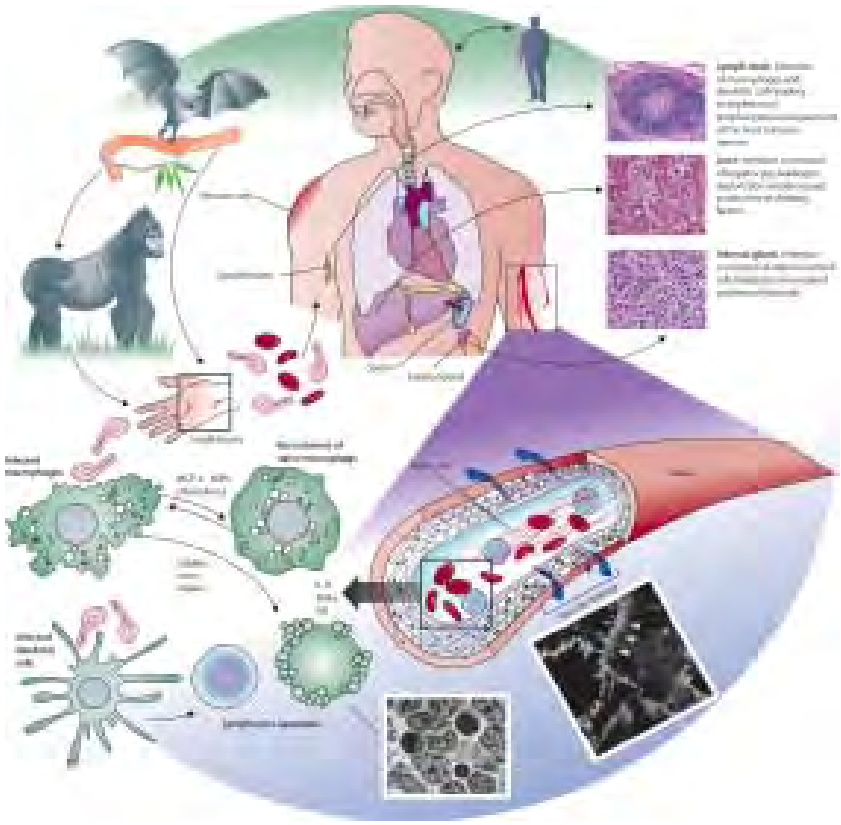

डाक्टरों और नर्सों को लगा कर 200 व्यक्तियों के एक समूह को किसी प्रकोप ने ईबोला नदी से कुछ दूर निर्जन यमबुक को ध्वस्त कर दिया था और मरनेवालों में मठवासिनी भी थीं.

मुख्य संदिग्ध पात्र मच्छर-जनित संक्रमण पीला ज्वर था जिसे इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रोपिकल मैडिसिन की पॉयट प्रयोगशाला सभी साज-समान के साथ पता लगाने को तैयार थी. परंतु किसी को मालूम नहीं था कि मठवासिनी के रक्त ने जिस विषाणु को आश्रय दिया था उसका नाम बाद में ईबोला रख दिया गया. उन दिनों सूक्ष्मजीव विज्ञानीगण अपने सुरक्षा के प्रति लापरवाह रहते थे. जब पॉयट और उनके सहयोगियों ने बरतन को खाली किया तब वे लोग केवल पतले लेटेक्स दस्ताने पहने हुए थे. उस समय उच्च सुरक्षा वाले मुखौटों और मंहगें मूनसेटों का प्रचलन नहीं था. परंतु आज अनिवार्य और प्रामाणिक हो गया है.

अब पॉयट और उनके सहयोगियों ने ज्ञात जीवाणुओं के लिए नित्य परीक्षण और लासा, मारबुर्ग और डेंग जैसे रक्तश्रावी जीवाणुओं और पीले ज्वर वाले जीवाणुओं के लिए विशेष परीक्षण को पूरा करने हेतू अछूते नली से रक्त की लघु मात्रा निकाली. उन्होनें प्रयोगशाला में विकसित कोशिकाओं और चूहों के मस्तिष्क के अंदर मठवासिनी का रक्त भी पहुचाया. परीक्षण में सभी ज्ञात संक्रमक कारकों को शामिल नहीं किया गया, परंतु पॉयट ने अनुमान लगाया कि जो भी कारक मठवासिनी की बीमारी को पैदा किया होगा, वह अवश्य ही जयरे से वायुयान यात्रा के दौरान नष्ट हो गया होगा. फिर भी वे और उनके सहयोगियों ने प्रतिदिन चूहों पर परीक्षण करते रहे.

एक सप्ताह बाद सभी चूहे मर गए थे जो इस बात का प्रबल रूप से इशारा करते थे कि संक्रामक कारकों ने आखिरकार उन्हें नष्ट नहीं किया. शव परीक्षण से ज्ञात हुआ कि मठवाहिनी के यकृत में अति सूक्ष्म जख्म थे जिसे डॉ.पीटर के बॉस डॉ. स्टीफेन पट्टयन को लासा ज्वर में होने की जानकारी थी. चूंकि लासा पहले से ही निकाल दिया था कि इसलिए डॉ.पट्टयन ने अपने अनुसंधान का परिचालन एक नवीन कारक को पहचानने की ओर किया. उस समय प्राणघाती विषाणुओं को सुरक्षापूर्वक संभालने के लिए सोवियत संघ के बाहर मात्र तीन प्रयोगशालाएं थीं. पोर्टन डाउन (porton down), लंदन के निकट, फोर्ट डेट्रिक (Fort detrick), मेरीलैंड में एक फौजी आधार और अटलांटा में स्थित रोग नियंत्रण एंव रोकथाम केंद्र (CDC) विश्वस्वास्थ्य संगठन ने शीघ्र ही बेल्जियम वासियों को उस प्रतिदर्श को कसे हुए मोहरबंद पात्रों में भर कर पोर्टन डाउन भेजने का निर्देश दिया जिसे

बाद में CDC को अग्रसारित किया गया क्योंकि यह रक्तस्त्रावी विषाणुओं के लिए संदर्भ प्रयोगशाला थी.

अतंवर्प के वैज्ञानिकों ने सामग्री का कुछ भाग अपने पास रखा और इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी के माध्यम से इसका निरीक्षण किया. इसने प्रदर्शित किया कि मठवासिनी के वायरस एक नए प्रकार के कृमि जैसे और विशालकाय थे जो मारबुर्ग से मिलते जुलते थे. CDC के वैज्ञानिकों ने तब अंतवर्प दल के खोज की पुष्टि की और उसका नाम ईबोला रखा गया.

ईबोला की आकृति एंव विस्तृत वर्णन : ईबोला एक अतिसूक्ष्म, संवेदनशील एंव रहस्यपूर्ण विषाणु है. रेशेदार दिखलाई पड़ने वाले कणों में प्रोटीन के दो स्तरों में लपेटा हुआ एक जीनोम रहता है. एक वृहद प्रोटीन के साथ इस ब्रबे एंव पतले पैकेज को पोलीमरेज कहते हैं. यह एक झिल्ली में भरा हुआ होता है जो ग्लाइकोप्रोटीन से जड़ा रहता है अर्थात उनसे शर्करा के साथ प्रोटीन चिपका रहता है. (चित्र-1)

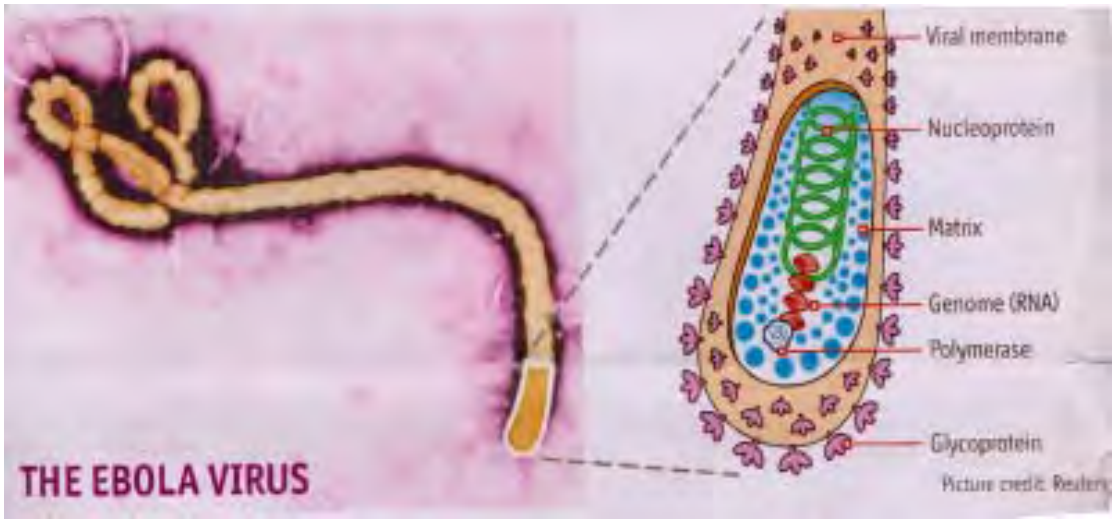

चित्र-1 : ईबोलावायरस की आकृति

जब विषाणु किसी कोशिका को संक्रमित करता है तो पोलिमरेज जीनोम की प्रतिलिपि तैयार करता है और कोशिका धूर्ततापूर्वक इनकी सहायता से प्रोटीन का निर्माण करता है जिसे बाद में विषाणुओं को जरूरत पड़ती है. इनमें दो जीनोम VP_{24} और VP_{35} शामिल रहते हैं जो इंटरफेरोंस (interferons) अणु का यह वर्ग जो प्रतिरक्षी तंत्र को संक्रमण के प्रति सचेत करता है कि सक्रियता में गतिरोध पैदा करते हैं.

VP_{24} इंटरफेरोंस की उत्पादकता को रोकता है और VP_{35} मदद के लिए लगाए गए उसकी गुहार को अनसुनी कर देता है. कहने का तात्पर्य यह है कि विषाणु संक्रमित कोशिका को इसके आवरण की जयरत से ज्यादा ग्लाइकोप्रोटीन पैदा करने पर मजबूर कर देता है जिससे अतिरिक्त ग्लाइकोप्रोटीन रक्तप्रवाह में श्रावित हो जाता है.

अनुसंधानकर्ता विषाणुजनित ब्रह्मांड या वाइरोम (virome) की सर्वव्यापकता से भलीभांति परिचित हैं. विषाणु विज्ञान से परिचित सभी जीवों की कोशिकाओं में घुसपैठ कर गए हैं. ये जानवरों, पौधों, बैक्टीरिया, मृदा और यहां तक कि बृहदतर विषाणुओं को भी संक्रमित करते रहते हैं. अपने मेजवान कोशिकाओं में आश्चर्यजनक रूप से प्रतिलिपि बनाते है और इतने सतत रूप से बहते रहते हैं कि यदि हम संसार के सभी महासागरों में प्लवित विषाणुओं को इकट्ठा करें तो उनकी सम्मिलित टनधारिता महासागरों में उपस्थित सभी नीले व्हेलों से कहीं ज्यादा होगी.

इधर-उधर छोड़े गए विषाणु कब तक कायम रह सकते हैं यदि उन्हें नम अवस्था में अथवा अलग-थलग कर दिया जाए, उदाहरण स्वरूप मृदा अथवा शारीरिक उत्सर्जन जैसे खून या वमन में. यह हमेशा एक जैसा नहीं रहता है परंतु अधिक से अधिक एक या दो सप्ताह तक टिक सकता है. यही कारण है कि ईबोला रोगियों के चादर और परिधान को प्राणघातक अपशिष्ट माना जाता है, इसलिए पाइप लगा कर विरंजक से धो लेना ही श्रेष्ठकर होता है.

विषाणु प्रतिरक्षी तंत्र से बच निकलने के लिए अथक रूप से काम करते रहते हैं. ईबोला वायरस के घातक लक्षणों में से एक लक्षण इंटरफेरोंस (interferons) की उन्मुक्ति में

अवरोध पैदा कर एक नवीन रोगाणु (pathogen) के विरूद्ध शारीरिक हिफाजत के प्रथम चरण को अयोग्य बना देता है.

फिर भी ईबोला विषाणु की वास्तविक घातकता भ्रमवश चुने गए स्थान से उत्पन्न होता मालूम पड़ता है : जंगली जानवरों से मानव समुदाय पर आकस्मिक आक्रमण. ईबोला विषाणु के लिए सामान्य मेजवान फल गादुर (fruitbat) है जिसमें विषाणु गादुर को बिना मारे अथवा बिना रूग्ण करके मध्यम गति अपनी प्रतिलिपि बनाते रहते है. एक पूर्ण परजीवी अपने मेजवान को मारने में नहीं अपितु उसकी प्रतिलिपि बनाने में सक्षम है. ईबोला विषाणु एक फल गादुर के लिए ही संपूर्ण परजीवी है.

ईबोला के लक्षण : ईबोला या मारबुर्ग से संक्रमण के पांच से दस दिनों के भीतर अचानक संकेत एंव लक्षण शुरू हो जाते हैं. प्रारंभिक संकेतों एंव लक्षणों में शामिल है- ज्वर, तीव्र सिरदर्द, संधि एंव स्नायु दर्द, जुकाम, कमजोरी, खराब गला.

कालक्रम में लक्षण अत्यधिक प्रचंड हो जाने से निम्नलिखित परेशानियों का सामना करना पड़ सकता है- ऊबकाई एंव वमन, साधारण या खूनी अतिसार, लाल आंखें, छाती दर्द एंव खांसी, पेट दर्द, वजन में अत्यधिक कमी, रक्तस्त्राव, सामान्यतः आंखों से आंतरिक रक्तस्त्राव.

जब कोई व्यक्ति ईबोला विषाणु से संक्रमित हो जाता है तो यह उसके शरीर में व्दिगुणित होते जाता है. आमतौर पर चार से छह दिनों के बाद ईबोला के लक्षण शुरू हो जाते हैं. विषाणु से संक्रमण और लक्षण के शुरूआत के बीच का समय उद्भायन (incubation) अवधि कहलाता है. ईबोला की स्थिति में यह कम से कम 2 और अधिक से अधिक 21 दिनों का हो सकता है.

गर्भवती महिलाओं में गर्भपात और योनि से अत्यधिक रक्तस्त्राव ईबोला के सामान्य लक्षण हैं. बारंबार भारी रक्ताल्पता के परिणामस्वरूप रोगी की मृत्यु सामान्यतः बीमारी के दूसरे सप्ताह के दौरान होती है.

ईबोला का प्रसार : ईबोला एक खौफनाक संक्रामक रोग है. सबसे पहले हमें यह मालूम होना चाहिए कि यह बहुत सांसर्गिक नहीं है. खांसी और छींक के व्दारा इस विषाणु का प्रसार शायद ही होता है. ईबोला का प्रसार रक्त या एक संक्रमित मनुष्य या अन्य जानवरों के शारीरिक द्रवों के साथ प्रत्यक्ष संपर्क मं आने से होता है. शरीरिक द्रवों में ईबोला वायरस (ebolavirus) रहते हैं जिसके अंतर्गत लार, बलगम, वमन, मल, पसीना, आंसू, स्तन दूध, मूत्र और वीर्य आते हैं. अधिकांश लोग विषाणु को खून, मल और वमन से फैलाते हैं. विषाणु का प्रवेश बिंदु नाक, मुंह, आंखें, अनावरित घाव, चीरा और खंरोच हो सकते हैं. इस विषाणु का संक्रमण हाल ही में संदूषित पदार्थ या सतह के साथ प्रत्यक्ष संपर्क में आने से होता है. इसका प्रसार रोग निवृत्ति के बाद भी कई सप्ताह से लेकर महीनों तक वीर्य या स्तनपान के संपर्क में आने से होता है. फल गादुर प्रकृति में सामान्य वाहक माने जाते हैं जो इससे बिना प्रभावित हुए विषाणु को फैलाने में सक्षम हैं. गादुर या गादुर से संक्रमित जीवित या मृत पशु के संपर्क में आने से मनुष्य संक्रमित हो सकता है.

ईबोला के विषाणु चंगे होकर बचे मनुष्यों के वीर्य में सात सप्ताह तक कायम रह सकते हैं जिससे यौन समागम होने पर संक्रमण हो सकता है. ईबोला के विषाणु रोगमुक्त औरत के स्तनदुग्ध में भी हो सकती है और यह ज्ञात नहीं हैं कि कब दूध पिलाना उचित है. यदि ऐसा नहीं होता तो रागमुक्त होकर भी लोग संक्रमित नहीं होते.

ईबोला एक वायुवाहित संचरण नहीं है. वायु के माध्यम से प्राकृतिक पर्यावरण में इस रोग के प्रसार का प्रमाण अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है. ईबोला से संक्रमण किसी संक्रमित व्यक्ति के शारीरिक द्रवों और उसके खून को बारंबार स्पर्श करने पर ही हो सकता है. यद्यपि ईबोला के विषाणु एक संक्रमित जीवधारी के बाहर द्रव में कुछ दिनों के लिए जीवित पाये जाते हैं. क्लोरिन जैसे अभिकर्ता, ऊष्मा, प्रत्यक्ष सूर्य का प्रकाश, साबुन एंव अपमार्जक इसे नष्ट कर डालते हैं.

क्या वायुयान यात्रा से ईबोला संसर्ग संभव है? रोग नियंत्रण एंव रोकथाम केंद्र (CDC) के निदेशक डॉ.थॉमस फ्राइडेन (Dr.Thomas Frieden) का कहना है कि ''ईबोला उस आदमी से नहीं फैलता है जिसको न तो बुखार और न ही दूसरे लक्षण हों. परंतु कभी-कभी यह फैल भी सकता है जैसा कि USA की स्थिति में हुआ. वायुयान यात्रा के दौरान विषाणु के फैलने की संभावना बहुत ही कम है जब तक कि सहयात्री पसीने से तर न हो, रक्तस्त्राव हो रहा हो अथवा वमन कर रहा हो.''

ईबोला वायु, जल या सामान्यतः भोजन के व्दारा नहीं फैलता है. कोई साक्ष्य नहीं है कि मच्छर या दूसरे कीड़े ईबोला वायरस को संचारित कर सकते हैं. स्तनधारियों में कुछ ही प्रजातियों (जैसे मनुष्य, चमगादड़, बंदर और लंगूर) की क्षमता वायरस से संक्रमित होने और ईबोला वायरस को फैलाने की रहती है.

ईबोला का खुलासा स्वास्थ्य सेवा केंद्रों में हो सकता है जहां पर अस्पताल के कर्मचारी उपयुक्त व्यक्तिगत सुरक्षात्मक यंत्र पहने हुए न हों. समर्पित चिकित्सा यंत्रों का प्रयोग रोगी

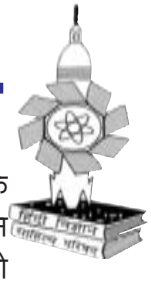

की देखभाल करनेवाले स्वास्थ्यसेवा कर्मचारियों व्दारा किया जाना चाहिए. सुई एंव सिरिंजों जैसे उपकरणों की यथोचित सफाई एंव निपटान जरूरी है. यदि उपकरणों का निपटान नहीं होता है तो दोबारा प्रयोग में लाने से पहले उन्हें जीवाणुहीन अवश्य कर लेना चाहिए. उपकरणों के पर्याप्त रोगाणुनाशन के बिना, वायरस का संचरण जारी रह सकता है और प्रकोप को बढ़ा सकता है.

25 मार्च 2014 को विश्व स्वास्थ्य संगठन ने गिन्नी के चार दक्षिणपूर्वी जिलों में 59 मौतों के साथ कुल 86 संदिग्ध स्थितियों के लिए ईबोला वायरस के प्रकोप का विवरण दिया. MSF, एक गैर सरकारी फ्रांसीसी संस्था ने गिन्नी के स्वास्थ्य मंत्रालय के साथ मिलकर ईबोला प्रकोप के केंद्र बिंदु के आसपास ईबोला उपचार केंद्र की स्थापना की. 31 मार्च को अमेरिका के रोग नियंत्रण एंव रोकथाम केंद्र (CDC) ने गिन्नी के स्वास्थ्य मंत्रालय और WHO की सहायता करने के लिए पांच सदस्यी दल को भेजा. यह प्रकोप धीरे-धीरे पड़ोसी देशों लाइबेरिया, सियरा लिओने, नाइजीरिया और सेनेगल में पहुंच गया.

लाइबेरिया के लोफा (Lofa) और निम्बा प्रान्तों में ईबोला का प्रकोप अप्रैल के मध्य में दर्ज किया गया. 27 जुलाई को लाइबेरियाई राष्ट्रपति ने हवाई अड्डों जैसे कुछ पार-गमन स्थानों (crossing points) को छोड़कर दूसरे देशों के साथ लगे सीमाओं को बंद करने का आदेश दिया. सभी शैक्षणिक संस्थानों को बंद करवा दिया गया और देश के बुरी तरह से प्रभावित क्षेत्रों को संगरोधन के अधीन रखा गया. 17 जुलाई तक ईबोला वायरस के 442 संदिग्ध मामले दर्ज किए गए. सितंबर माह में US CDC को मालूम हुआ के लाइबेरिया के कुछ अस्पताल वीरान पड़ गए हैं और जो अस्पताल काम कर रहे हैं, उनमें मूलभूत सुविधाओं और दवा-दारू का नितांत अभाव है. 30 सितंबर तक ईबोला वायरस से मरनेवालों की संख्या लगभग 2000 तक पहुंच गई थी.

सियरा लिओने में ईबोला से संक्रमित होने वाली एक कबायली आरोग्यसाधिका थी. उसने कई संक्रमित लोगों का ईलाज किया और खुद 26 मई को मर गई. जनजातीय परंपरा के अनुसार उसके शव को किसी नदी में बहा दिया गया और निकटवर्ती क्षेत्र के लोग संक्रमण की चपेट में आ गए. 11 जून को सियरा लिओने ने गिन्नी और लाईबेरिया के साथ व्यापार के लिए अपनी सीमाएं बंद कर दी. विषाणु के प्रसार को कम करने के लिए कुछ शैक्षणिक संस्थानों को बंद करवा दिया. अक्तूबर माह के अंत तक ईबोला वायरस से इस देश में मरनेवालों की संख्या लगभग 1000 तक पहुंच गई थी. नवंबर के उत्तरार्ध में एमएसएफ के संयोजकों ने विवरण दिया कि सियरा लियोन में स्थिति विनाशकारी हो गई है. कई गांव पूरी तरह से नष्ट हो गए हैं. कई समुदाय गायब हो गए हैं और उनमें से कुछ कसा कोई अता-पता चल नहीं पा रहा है. 4 नवंबर को मालूम हुआ के केनेमा शहर में हजारो लोगों ने भोजन की खोज में संगरोधन का उल्लंघन किया. 6 नवंबर को दर्ज किया गया कि राजधानी शहर फ्रीटाउन (Freetown) में ईबोला संक्रमण की 115 संदिग्ध स्थितियों को दर्ज किया. आपदा निवारण समिति के अनुसार भोजन की कमी और आक्रामक संगरोधन के कारण स्थिति बद से बदतर होती चली जा रही है.

संयुक्त राज्य अमेरिका में भी ईबोला खतरे की घंटी बजी : 30 सितंबर 2014 को रोग नियंत्रण एंव रोक-थाम (CDC) के लिए यू.एस. केंद्रों ने ईबोला वायरस रोग की सर्वप्रथम स्थिति घोषित किया. CDC ने जाहिर किया कि थॉमस एरिक डंकन लाइबेरिया में संक्रमित हुआ और 20 सितंबर को टेक्सास की यात्रा की. 26 सितंबर को वह बीमार पड़ा और उपचार के लिए उसे कुछ प्रतिजैविक दवाएं दी गयीं. परंतु उससे ज्यादा लाभ नहीं हुआ और एम्बुलेंस व्दारा उसे वापस अस्पताल भेजा गया. उसे कुछ दिनों तक आइसोलेशन में रखना पड़ा परंतु 8 अक्तूबर 2014 को उसकी मृत्यु हो गई.

12 अक्तूबर को CDC ने पुष्टि की कि एक 26 वर्षीय स्वास्थ्य सेविका नीना फाम, जिसने डंकन का उपचार किया, ईबोला वायरस के लिए धनात्मक पायी गई. डंकन का उपचार करनेवाली एक दूसरी स्वास्थ्य सेविका अंबर जॉय विनसन (29 वर्षीय) भी 14 अक्तूबर को ईबोला वायरस के संक्रमण से पीड़ित पायी गई. दोनों सेविकाओं को कुछ दिनों तक आइसोलेशन में रखा गया. बाद में दोनों भली-चंगी हो गयीं.

हाल ही में डॉ.मार्टिन सलिया, 44 वर्ष, सियरा लिओने का नागरिक परंतु अमेरिका का निवासी, अपने पैतृक देश में रोगियों का ईलाज करते-करते स्वंय ईबोला वायरस से संक्रमित हो गये. नेब्रास्का मेडिकल केंद्र, USA में उसे उपचार के लिए भेजा गया परंतु रोग की चरम अवस्था पहुंचने पर 17 नवंबर को उनकी मृत्यु हो गई.

भारत, जो कि अब तक इस विषाणु के चुंगल से बचता आ रहा था, में एक नई स्थिति का निदानीकरण हुआ है. एक 26 वर्षीय भारतीय, जो 10 नवंबर को लाईबेरिया से दिल्ली आया, को दिल्ली विमानतल स्थित स्वास्थ्य संगठन के संगरोधन केंद्र में पृथक रखा गया है. यद्यपि उसके रक्त

प्रतिदर्श तीन विभिन्न परीक्षणों में ईबोला के लिए ऋणात्मक पाए गए, परंतु मंत्रालय के अधिकारियों ने ईबोला की पुष्टि उस समय की जब 17 नवंबर को विश्लेषित किए गए उसके वीर्य प्रतिदर्श विषाणु के लिए धनात्मक पाए गए. उस युवक के वीर्य प्रतिदर्श का विश्लेषण 17 नवंबर को RT-PCR विधि व्दारा नई दिल्ली के NCDC में करने पर ईबोला वायरस के लिए धनात्मक पाया जाना तथा इसी विश्लेषण की पुनरावृत्ति उसी दिन पुणे के राष्ट्रीय विषाणु विज्ञान संस्थान (NIV) में करने पर ठीक वही परिणाम की प्राप्ति होने पर उसके वीर्य में स्पष्ट रूप से ईबोला वायरस विद्यमान होने के लक्षण मिलते हैं.

मंत्रालय के सूत्रों ने आगे कहा---'वर्तमान में इस व्यक्ति के पास रोग के कोई लक्षण दिखलाई नहीं पड़ते हैं. परंतु उसके वीर्य प्रतिदर्श में विषाणुओं की उपस्थिति से चिकित्सकीय उपचार के समय से 90 दिनों की अवधि तक लैंगिक पथ के माध्यम से होकर रोग के संचरण होने की संभावना रहती है. इसलिए उसे आइसोलेशन कक्ष में तब तक रखा जाएगा तब तक कि उसके शारीरिक द्रवों के सारे परीक्षण ऋणात्मक न पाएं जाते हो और उनमुक्त होने के लिए चिकित्सकीय रूप से स्वस्थ्य न पाया जाता हो.'

देर से प्राप्त मंत्रालय के सूत्रों के अनुसार एक 26 वर्षीय भारतीय मोहम्मद अमीर, जो लाइबेरिया के किसी फार्मेसी में कार्यरत था, की मृत्य ईबोला संक्रमण से 7 सितंबर 2014 को लाइबेरिया में ही हो गई थी.

USA में ईबोला से 2 मौतें होने पर, भारत सरकार संदिग्ध रोगियों के प्रतिदर्शों को पुणे के NIV और नयी दिल्ली के NCDC में नैदानिकरण के लिए भेजने से पहले देश भर में दस नवीन प्रयोगशालाओं के खोलने पर विचार कर रही है. ये नए प्रयोगशालाएं डिब्रुगढ़, पोर्ट ब्लेयर, लखनऊ, गुवाहाटी, बेगलुरू, चंडीगढ़, थिरूवनंथपुरम, भुवनेश्वर और जयपुर में खोले जाएंगे. कैबिनेट सचिव अजित सेठ ने ईबोला से निपटने की तैयारी की समीक्षा करने के लिए 16 अक्तूबर को नई दिल्ली में एक उच्च स्तरीय सभा की अध्यक्षता की. सभा में 19 राज्यों और 5 केंद्र शासित प्रदेशों के मुख्य सचिवों एंव स्वास्थ्य सचिवों के साथ वीडियो सुदूर सम्मेलन के माध्यम से सरकार ने ईबोला वायरस की संदिग्ध स्थितियों का प्रबोधन करने के लिए तटीय क्षेत्रों, जहां समंद्री पथ के माध्यम से विषाणं प्रवेश कर सकते हैं, में अनुवीक्षण (screenings) एंव चौकसी (surveillance) की घोषणा की.

पश्चिम अफ्रीका के कुछ देशों में ईबोला का कहर अभी भी जारी है. ईबोला के आतंक से प्रभावित विभिन्न देश, मनुष्यों में उतपनन हुई संदिग्ध स्थितियों तथा कुल मौतों का अंतिम अद्यातन नीचे दी गई सारणी में दिया जा रहा हैः

प्रभावित देश	नैदानिक स्थितियां	कुल मौतें	अंतिम अद्यतन
लाइबेरिया	7280	4200	15.12.2014, तीव्र संचरण जारी है
सियरा लिओने	7276	1905	15.12.2014, तीव्र संचरण जारी है
गिन्नी	2150	1304	13.12.2014, तीव्र संचरण जारी है
कांगो	66	49	9.11.2014, प्रकोप 15.11.2014 को समाप्त हुआ
नाइजीरिया	20	8	प्रकोप 20.10.2014 को समाप्त हुआ
माली	8	6	12.12.2014, कई स्थितियां और बृहदतर संचरण का खतरा
यूएसए	10	2	14.12.2014
सेनेगल	1	0	प्रकोप 17.10.2014 को समाप्त हुआ
स्पेन	1	0	14.12.2014
भारत	2	1	अब तक

कैंब्रिज, मस्साचुसेटस के एक गंदे इलाके में बसी एक पुरानी दो मंजली भवन अब लोगों और विषाणुओं से प्राप्त जीन का विश्लेषण करने के लिए संसार की सबसे शक्तिशाली फैक्टरी बन गई है. किसी भी समय दस हजार लघु परखनलियां, जिनमें से प्रत्येक में जीनयुक्त द्रव्य की कुछ बूंदे रखी रहती हैं, कुछ तकनीशियनों व्दारा सालों भर चौबीसों घंटे रात के दो पालियों में 50 डिशवाशर आकार के मशीन का प्रयोग करके संसाधित किया जाता है. मशीनें एक लंबी सूची के रूप में अक्षरों, जो कि जननिक सामग्री को पूरा करते हैं, के क्रम में एक कम्प्यूटर स्क्रीन पर अनुक्रम आकड़ों को प्रदर्शित करते रहते हैं. अक्षरों की संख्या तीन अरब होती है यदि ये जीन किसी मनुष्य से लिए जाते हैं. दूसरे 64 तकनीशियन विश्लेषण हेतू प्रतिदर्श तैयार करने के लिए घोर परिश्रम करते हैं. ये सभी कार्य उन अनुसंधानकर्ताओं की छत्रछाया में किया जाता है जो सभी साधनों से सुसज्जित बोर्ड इंस्टीट्यूट में काम करते हैं. (चित्र 2)

इस अनुक्रमण केंद्र ने 1000 जीनोम्स प्रोजेक्ट, जो विश्वभर के हजारों लोगों के जीन पर नजर रखता है, पर अंतर्राष्ट्रीय प्रयास से मानवीय 'ॐ पर काम किया है. इसे डेंगु बुखार, मलेरिया, एंव वेस्ट नील वायरस जैसे सूक्ष्म जीवाणुओं की अनुक्रमणिकाएं प्राप्त हुई है. चिंपांजिस जैसे जानवरों की आनुवंशिक अनुक्रमणिकाएं भी प्राप्त हुई हैं. ईबोला और एक सदृश प्राणघातक रोग लासा पर काम करने वाले वैज्ञानिक करीब चालीस घंटों में इनकी अनुक्रम आंकड़े तैयार करते हैं.

डॉ.परदीस सबेती के नेतृत्व में ईबोला और लासा दल यह जानना चाहती है कि वायरस देखने में कैसा लगता है. क्या ये विषाणु लोगों को संक्रमित करते समय रूपांतरित होते हैं और प्रतिरक्षित प्रणाली (ग्स्स्ल्होंब्रुस) से अलग-थलग हो जाते है? क्या कुछ नस्लें दूसरों से अधिक प्राणघातक हैं? और उन लोगों की आनुवंशिकता का क्या कहना जा संक्रमित हो जाते हैं? क्या कुछ लोग अपने जीनों में ऐंठन के कारण इन जीवाणुओं के प्रति अधिक प्रतिरोधी और शायद अधिक प्रतिरक्षित हैं?

सबेती और उनके दल ने सियरा लिओने में प्रकोप शुरू होने के पहले कुछ सप्ताहों के अंदर 78 विभिन्न रोगियों में ईबोला विषाणु की आनुवांशिकी का परीक्षण किया. उनलोगों ने निरीक्षण किया कि ईबोला वायरस सतत रूपांतरित हो रहा था जिससे मन में यह प्रश्न उठ रहा था कि क्या यह वायुवाहित हो कर अधिक घातक हो सकता था? इस संबंध

चित्र-2 : ब्रोड इंस्टिट्यूट में डॉ.परदीस सबेती

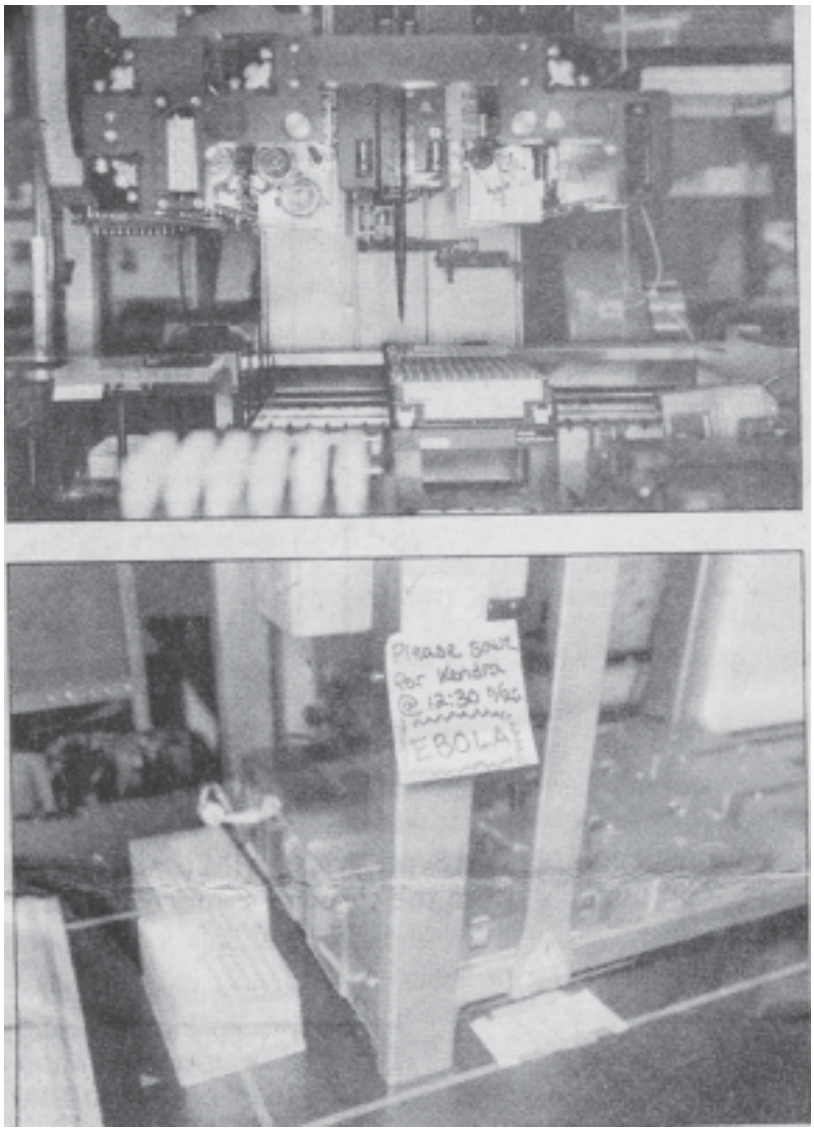

चित्र-3 : ईबोला प्रतिदर्श (samples) को तैयार करने के लिए एक मशीन के ऊपर चिपका हुआ नोट

में डॉ.सबेती का उत्तर था कि यह रूपांतरण कोई आश्चर्यजनक बात नहीं थीं क्योंकि ये विषाणु वही कर रहे थे जो कि अधिंकांश विषाणु करते हैं. (चित्र 3)

ईबोला के रोगियों की जांच करते समय कैसा वस्त्र धारण करें ?

जब ईबोला से बचाव का प्रश्न आता है तो संपूर्ण शरीर व्यक्तिगत सुरक्षात्मक उपस्कर सूट (PPE) पहनना ईबोला वायरस से बचने का सबसे अच्छा तरीका है. एक पीपीई सामान्यतः संपूर्ण शरीर का बना हुआ चोगा के साथ अभेद्य सूट,टाइवेक ऊनी मोजे से ढके हुए रबर के जूते, शल्यक दास्तानों के कई जोड़े, नाक एंव मुंह के ऊपर एक मुखौटा, प्लास्टिक की एक गांती, गूगल्स, प्लास्टिक का एक पेटबंद और बहुत से वाहिनी फीता (duct tape) होता है. इसे ठीक से पहनना चाहिए तथा चमड़े का एक इंच भी दृष्टिगोचर नहीं होना चाहिए. सर्वोत्तम परिस्थितियों में भी ऐसे वस्त्रों को शरीर से उतारना, एक तो जटिल प्रक्रिया है और दूसरी जानलेवा भी सिद्ध हो सकती है.

संयुक्त राज्य अमेरिका ने ईबोला रोगियों का उपचार करनेवाले स्वास्थ्य सेवकों के लिए सख्त नई उपसंधि जारी की और चिकित्साकर्मियों को संक्रमण होने से बचने के लिए वैसे सुरक्षात्मक कपड़े पहनने के निर्देश दिए जिसमें चमड़े का कोई भाग अथवा सिर का एक भी बाल दिखलाई न पड़े. ॐर्त्ते की दो नर्सें जो डंकन के शारीरिक द्रवों के संपर्क में आईं, मुख रक्षक, खतरनाक जिस्मानी सूट और सुरक्षात्मक जूते

पहनी हुई थीं. परंतु कैथेटरों और स्वास्थ्य नलियों का अंतर्वेशन और डायलिसीस मशीन के माध्यम से खून का शोधन, ईबोला मरीजों के ईलाज की स्थिति में शायद यह एक अनोखी घटना थी.

नई उपसंधि के अंतर्गत, ईबोला से जूझे स्वास्थ्यसेवा कर्मियों को भी विशेष प्रशिक्षण पर जाना चाहिए और सुरक्षात्मक उपकरणों के इस्तेमाल करने में सामर्थ्यता दिखलानी चाहिए. लबादा लगा कर अन्य कपड़ों का एक ही बार प्रयोग, प्रयोज्य (disposable) कनटोप के इस्तेमाल का निरीक्षण पर्यवेक्षकों द्वारा यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाना चाहिए कि क्या ईबोला रोगियों की देख-भाल करनेवाले सेवाकर्मियों के साथ उचित प्रविधियों का पालन किया जा रहा है अथवा नहीं.

यह हमेशा ध्यान में रखना चाहिए कि ईबोला वायरस का संक्रमण रोगी के शारीरिक द्रवों के प्रत्यक्ष संपर्क में आने से होता है और यह वायुजनित नहीं है, इसलिए एक भी स्वास्थ्यसेवा कर्मी का संक्रमण स्वीकार्य नहीं है.

क्या ईबोला के लिए कोई दवा या टीका उपलब्ध है? अभी तक ईबोला के लिए कोई दवा या टीका संसार में कहीं भी उपलब्ध नहीं है. कई दवाओं का परीक्षण किया जा रहा है, परंतु कोई भी चिकित्सकीय इस्तेमाल के लिए उपयुक्त पाया नहीं गया है. तीव्र रूप से बीमार रोगियों को गहन सुरक्षा एंव देख-भाल की जरूरत पड़ती है. रोगियों को बार-बार निर्जलीकृत किया जाता है और विद्युत अपघट्य या अंतःशिरा (Intraveneous) के द्रवों वाले घोलों के साथ मौखिक रूप से पुनःजलयोजित (rehydrated) करना पड़ता है.

अंग्रेजी दवा निर्माणकर्ता ईबोला टीके के विकास की गति को बढ़ाने के लिए साथ काम करने की योजना बना रहे हैं और अगले वर्ष में इस्तेमाल के लिए लाखों खुराक बनाने की आशा रखते हैं. अमेरिकी फर्म जॉनसन एण्ड जॉनसन का कहना है कि यह 2-सोपानी वाले टीके की कम से कम दस लाख खुराक अगले वर्ष में उत्पादन करने का लक्ष्य रखती है और ब्रिटेन की ग्लैक्सोस्मिथक्लाईन (GSK) कंपनी, जो प्रतिस्पर्धी टीके पर काम कर रही है, के साथ पहले ही चर्चा कर चुकी है.

अक्तूबर के अंतिम सप्ताह में दवा नियंत्रकों, उद्योग प्रबंधकों, अन्य अधिकारियों और विशेषज्ञों का एक दल जेनेवा में यह चर्चा करने के लिए एकत्रित हुआ कि ईबोला टीकों के उत्पादन एंव आपूर्ति में कौन-कौन सी बाधाएं हैं और उनका निराकरण कैसे किया जाए? अमेरिका और युरोप के नियंत्रक आंकड़ों पर एकत्रित दिशा निर्देशों को छपवाने का प्रयास कर रहे हैं जिससे दवाओं के वृहद पैमाने पर प्रसार हेतु, उसे अनुमोदन की मंजूरी मिलने की जरूरत पड़ेगी. चूंकि ये दवाएं अथवा टीके स्वस्थ लोगों को दिए जाने हैं, इसलिए इन्हें कड़े सुरक्षा परीक्षण से गुजरना होगा. औषधिनिर्माण फर्मों का कहना है कि यदि नियंत्रक उनके अनुमोदन प्रक्रियाओं से सामंजस्य स्थापित करें तब वे लोग नए टीकों की आपूर्ति की गति बढ़ा सकते हैं.

मई 2013 में ग्लैक्सोस्मिथक्लाइन फर्म, एक ब्रिटिश औषधनिर्माण कंपनी ने 3250 लाख डालर्स में एक लघु स्विस टीका बनाने वाली कंपनी खरीदी. इसने Okairos प्राप्त किया क्योंकि इसके पास उन टीकों के निर्माण की प्रौद्योगिकी थी जो सामान्य प्रतिरक्षित अनुक्रिया के मुकाबले तीव्रतर अनुक्रिया प्रेरित कर सकती है. चूंकि ईबोला वायरस का प्रसार कई देशों में फैल गया है, इसलिए कई अभ्यर्थी आगे आएं हैं. इससे कंपनियों, नियंत्रकों, सरकारों एंव WHO जैसे निकायों के बीच अप्रत्याशित सहयोग बन गया है. दो अभ्यर्थियां, पहला GSK और दूसरा एक अमेरिकी फर्म न्यू लिंक जेनेटिक्स वर्तमान वर्ष के अंत में पश्चिम अफ्रीका में परीक्षण के लिए तैयार हो जाएगा. जॉनसन एण्ड जॉनसन, एक दूसरी अमेरिकी फर्म ने थोड़ी देर से प्रवेश किया है और इसकी दोगुनी खुशवाली टीका जनवरी 2015 में मनुष्यों पर जांची गयी. GSK का कहना है कि यह अप्रैल 2015 तक 2,30,000 खुराकें और सन् 2015 के अंत तक 10 लाख खुराकें बना सकता है. GSK और J & J के कर्मचारीगण उत्पादन की गति बढ़ाने के लिए दिन-रात कार्य कर रहे हैं. फायजर एक दूसरी अमेरिकी फर्म अपने विशिष्ट उत्पादन का आदान-प्रदान करने की पेशकश कर रही है. GAVI , एक अंतरराष्ट्रीय एजेंसी जो गरीब देशों के लिए टीके का निर्माण करती है, दोगुनी खुशवाला ईबोला टीका की वृहत अग्रिम आदेश मिलने की आशा पर काम कर रही है.

मूत्र संक्रमण के प्रकार और उपचार

डॉ.दया शंकर त्रिपाठी
बी-2/63 सी-1के,
भदैनी, वाराणसी-221 001 (उत्तरप्रदेश)

मूत्र संक्रमण (यूरिन इंन्फेक्शन) एक ऐसी बीमारी है जो किसी भी उम्र के व्यक्ति में पायी जा सकती है. परंतु यह बीमारी पुरूषों की तुलना में महिलाओं में ज्यादा पायी जाती है. 15 से 45 वर्ष की आयु की स्त्रियों को यह बीमारी अक्सर हो जाया करती है. इसमें मूत्र मार्ग में खुजली, मूत्र त्याग में जलन एंव सूई चुभने जैसी असहनीय पीड़ा होती है. इसके कारण रोगी मूत्र त्याग करने में भय महसूस करता है तीव्र अवस्था में मूत्र के साथ मवाद एंव रक्त भी आ सकता है. इस बीमारी के कारण लगभग 26 प्रतिशत तक लोगों के गुर्दे फेल हो सकते हैं और उन्हें सी.ए.पी.डी., हीमोडायलिसिस या गुर्दा प्रत्यारोपण तक करवाना पड़ सकता है.

मूत्र में संक्रमण दो प्रकार का होता है. एक साधारण तथा दूसरा असाधारण. असाधारण संक्रमण विशेषतः मधुमेह, सिकेलसेल, एनीमिया, पथरी के रोगियों, रेफलेक्स, बिस्तर पर मूत्र त्याग करने वाले बच्चों, मूत्र मार्ग की रूकावट, एड्स के रोगियों तथा गुर्दा प्रत्यारोपण के रोगियों को होता है. ऐसे रोगियों में संक्रमण के कारण गुर्दा फेल होने व पूरे शरीर में जहर फैलने का भय बना रहता है जिसका इलाज ठीक

मूत्र पीड़ा

मूत्र प्रणाली की संरचना

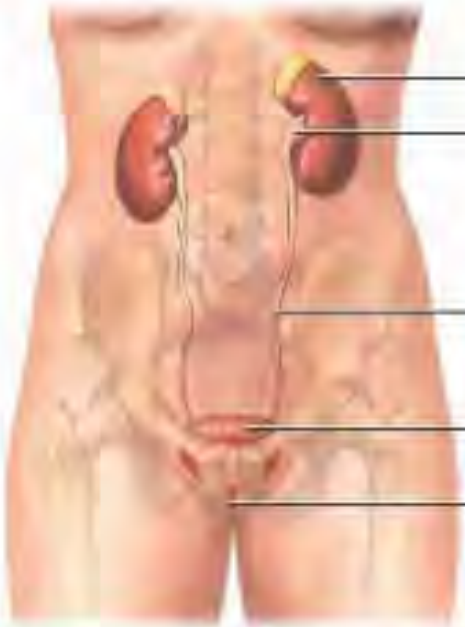

प्रकार से किया जाना आवश्यक है.

ज्यादातर संक्रमण जीवाणुओं के प्रवेश के कारण होते हैं. सभी जीवों के मूत्र मार्ग में कुछ ऐसे जीवाणु निवास करते हैं जो लाभदायक होने के साथ-साथ संक्रमण होने से भी बचाते हैं. इनमें लेक्टोबैसिलस, बैक्टीरायड्स, स्ट्रेप्टोकोकस प्रमुख हैं. जब किसी कारणवश उपरोक्त जीवाणुओं की संख्या कम हो जाती है अथवा नष्ट हो जाते हैं तो हानिकारक जीवाणु पेशाब के रास्ते प्रवेश कर जाते हैं. इन हानिकारक जीवाणुओं में ई.कोलाई, क्लेबसेल्ला, प्रोटियस प्रमुख हैं. जिनमें से प्रोटियस पुरुषों के लिंग की खाल के नीचे मिलता है. अतः लिंग की सफाई करते रहना चाहिए, अन्यथा संक्रमण का खतरा बना रहता है. कुछ ऐसे जीवाणु भी पाए गए हैं जिनका संक्रमण होने पर गुर्दे में पथरी बन सकती है. यह पथरी उस जीवाणु के बाहरी तरफ कैल्सिफिकेशन के कारण होता है. इनमें प्रोटियस, स्यूडोमोनाड्स, क्लेबसेल्ला इत्यादि प्रमुख हैं.

पहले से रोगग्रस्त व्यक्तियों और लम्बी बीमारी के रोगियों में मूत्र संक्रमण अधिक पाया जाता है. यह संक्रमण मधुमेह के रोगी, सिकलसेल रोगी, जोड़ों के दर्द की दवाइयों का सेवन करने वाले रोगी, पेशाब के रास्ते की रुकावट वाले रोगी जैसे प्रोस्टेट ग्रंथि, फाइमोसिस के रोगी, पथरी के रोगी, फालिस के रोगी, गर्भधारण के दौरान वे रोगी जिनको कैथेटर (ट्यूब) डालकर मूत्र त्याग कराई जाती है तथा अन्य गुर्दा रोगियों को अधिक होता है. मूत्र में संक्रमण पैदा करनेवाले जीवाणु भी कुछ ऐसे रासायनिक पदार्थ बनाते हैं जिन्हें साइड्रोफोर, एरोबैक्टिन, हीमोलाइसिन, यूरिऐज कहते हैं. उन जीवाणुओं के सतह पर स्थित फिम्ब्री की मदद से ये मूत्र-मार्ग की आन्तरिक त्वचा से चिपककर धीरे-धीरे चलते हुए ऊपर बढ़कर पेशाब की थैली, प्रोस्टेट व गुर्दे तक पहुंच जाते हैं. कुछ व्यक्तियों में जीवाणुओं को आकर्षित करनेवाले रिसेप्टर पारिवारिक गुणों के कारण मौजूद रहते हैं जिससे पेशाब की थैली में कम प्रतिपदार्थ (एन्टीबाडीज) बनते हैं. इस कारण उनमें बार-बार संक्रमण होता रहता है. कुछ लोगों में आंतों की पुरानी बीमारी कोलाइटिस के कारण भी बार-बार मूत्र में संक्रमण होता है. इसके अतिरिक्त कुछ लोगों में जीवाणु शरीर के किसी दूसरे भाग से आकर गुर्दों में संक्रमण, घाव इत्यादि पैदा कर देते हैं. पेशाब में संक्रमण होने पर उसकी सभी प्रकार की जांच विस्तारपूर्वक होनी चाहिए जिसमें यूरिन कल्चर, एक्सरे, अल्ट्रासोनोग्राफी, सिस्टोस्कोपी, आई.बी.पी. आदि प्रमुख हैं.

संक्रमण की जांच : मूत्र में संक्रमण की जांच का प्राथमिक व मुख्य तरीके हैं मूत्र की जांच. इस जांच में मूत्र का प्रयोगशाला में कल्चर कराया जाता है जिससे रोग पैदा करनेवाले जीवाणुओं का संवर्द्धन करके उनकी पहचान व संख्या का पता लगाया जाता है. इसी से रोग की तीव्रता भी समझी जाती है. कुछ लोग पेशाब में पस सेल (मवाद) उपस्थित होने पर संक्रमण समझ लेते हैं जो कि सही नहीं है क्योंकि गुर्दे की टी.बी.या अनेक अन्य बीमारियों में भी पेशाब में पस सेल आ सकते हैं.

पुरुषों में मूत्र-संक्रमण होने पर उनकी विस्तृत जांच की जानी चाहिए. जिसमें यूरिन कल्चर, आर/एम, एक्सरे, अल्ट्रासाउंड, सिस्टोस्कोपी, आई.बी.पी. आदि प्रमुख हैं. आवश्यकता पड़ने पर रक्त की जांच भी आवश्यक है. महिलाओं में 6 माह में दो बार से ज्यादा संक्रमण होने पर आई.बी.पी. की जांच करानी चाहिए. परंतु आई.बी.पी.की जांच गर्भधारण के दौरान, प्रसव के 6 सप्ताह के भीतर, संक्रमण के 4 सप्ताह तक तथा गुर्दा खराब होने की स्थिति में नहीं करानी चाहिए अन्यथा गुर्दे पर दुष्प्रभाव की संभावना बनी रहती है.

संक्रमण के प्रकार व निदान

सिस्टाइटिस व यूरेथ्राइटिस :- मूत्र-नली व थैली में संक्रमण सिस्टाइटिस व यूरेथ्राइटिस कहलाता है. मरीज को पेशाब करने में दर्द या जलन होता है, बार-बार पेशाब लगती है, पेशाब नहीं रुकती, रात में दो से ज्यादा बार पेशाब होती है, पेशाब में खून आता है तथा स्त्रियों में पेडू व कमर में हल्की व असह्य दर्द जैसी तकलीफें होती है. ऐसा होने पर तुरंत चिकित्सक से परामर्श लेकर दवा प्रारंभ कर देनी चाहिए और पेशाब के कल्चर की जांच कराकर औषधि सेवन करनी चाहिए. ऐसे रोगियों को यूरिन कल्चर की रिपोर्ट के अनुसार चिकित्सक उन्हें पांच से सात दिनों तक दवा खाने की सलाह देते हैं. दवा को बीच में छोड़ना हानिकारक

दवा खाने की सलाह देते हैं. दवा को बीच में छोड़ना हानिकारक होता है, उसे पूरी अवधि तक खाना चाहिए. इस प्रकार का संक्रमण युवा वर्ग की महिलाओं में बहुत होता है. इसके बचाव के लिए उन्हें पानी की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए और दिन में कम से कम 2-3 लीटर पानी पीना चाहिए. कब्ज से बचना चाहिए, सोने से पहले तथा सहवास के बाद मूत्र त्याग जरूर करना चाहिए. कॉपर टी इत्यादि का कम से कम प्रयोग करना लाभकारी होता है.

वैजीनाइटिस :- महिलाओं के मूत्र मार्ग में होने वाले संक्रमण को वैजीनाइटिस कहते हैं. यह बीमारी ज्यादातर बच्चों वाली महिलाओं तथा वृद्ध महिलाओं में पायी जाती है. इस बीमारी में भी सिस्टाइटिस व यूरेथ्राइटिस जैसी ही सभी तकलीफें होती हैं. यदि इस रोग से ग्रस्त मरीज के यूरिन कल्चर में कोई संक्रमण नहीं मिलता तो ऐसे रोगी महिलाओं को अन्य दवाओं के साथ-साथ नइ तकलीफों से दूर रखने वाली दवाओं का भी प्रयोग करना हितकर होता है.

प्रोस्टेटाइटिस :- पुरुषों में प्रोस्टेट ग्रंथि के संक्रमण को प्रोस्टेटाइटिस कहते हैं. इसमें रोगियों को खुलकर पेशाब नहीं होता और उन्हें बार-बार पेशाब करने जाना पड़ता है. इसके साथ ही उन्हें मूत्र त्याग में जलन एंव दर्द महसूस होता है, बेचैनी बनी रहती है, पेडू में दर्द होता है, पेशाब में रुकावट हो जाती है, सहवास में दर्द तथा वीर्य में खून आने

जैसी तकलीफें होने लगती हैं. ऐसे में अक्सर पेशाब के कलचर में संक्रमण नहीं मिलता. अतः बीमारी की पकड़ बड़ी मुश्किल से हो पाती है. ऐसे में एक विशेष प्रकार की जांच की जाती है जिसमें प्रोस्टेट ग्रंथि के मसाज के बाद निकले मूत्र की कल्चर करायी जाती है. इसमें अल्ट्रासाउण्ड की सहायता से प्रोस्टेट की वृद्धि व आकार को देखा जा सकता है. इस बीमारी में कुछ विशेष एन्टीबायटिक दवाइयां ही कारगर होती हैं. कुछ उपयुक्त एन्टीबायटिक 4 से 6 सप्ताह तक लेने पर यह बीमारी दूर हो सकती है.

पाइलोनेफ्राइटिस :- गुर्दे के अंदर के संक्रमण को पाइलोनेफ्राइटिस कहा जाता है. इसमें मरीज को ठंढ़ के साथ बुखार हो जाता है, साथ ही कमर दर्द है, बदन दर्द , उल्टी, भूख न लगना, बच्चों में पतले दस्त व पीलिया होना जैसे लक्षण मिलते हैं. इसमें गुर्दा फेल होने की संभावना बनी रहती है. यह बीमारी उन मरीजों को ज्यादा होती है जिनमें मूत्र संक्रमण का पूर्णरूप से इलाज नहीं हो पाता अथवा जिनको गुर्दे की दूसरी बीमारियां होती है. गर्भधारण के दौरान यदि यह बीमारी हो जाए तो गुर्दा फेल होने की संभावना बढ़ जाती है. इसकी जांच यूरिन कल्चर, अल्ट्रासाउण्ड, सी.टी.स्कैन आदि के द्वारा की जाती है.

इस बीमारी के मरीज को अस्पताल में भर्ती करके आवश्यक उपचार किया जाना चाहिए. इसके दौरान गुर्दा फेल होने की जांच बराबर कराते रहना चाहिए. यदि गुर्दा फेल हो जाय तो एक या दो डायलिसिस की भी जरूरत पड़ सकती है. इस बीमारी के ठीक होने के चार सप्ताह बाद आई.वी.पी. जरूर करानी चाहिए जिससे इस रोग का कारण पता चल सके और मरीज को दुबारा यह बीमारी होने अथवा गुर्दा फेल होने से बचाया जा सके.

विशेष स्थितियों के संक्रमण

गर्भधारण के दौरान मूत्र संक्रमण :- गर्भधारण के दौरान मूत्र संक्रमण अक्सर हो जाया करता है. यद्यपि ऐसी महिलाओं को मूत्र संक्रमण होने पर भी मूत्र त्याग में कोई परेशानी नहीं होती. ऐसे संक्रमण को समय पर पता न चलने व इलाज न कराने के कारण लगभग 40 प्रतिशत महिलाओं को पाइलोनेफ्राइटिस व गुर्दा फेल होने की संभावना बनी रहती है. अतः सभी महिलाओं को गर्भधारण के दौरान हर तीन माह पर पेशाब की कल्चर जांच अवश्य करानी चाहिए. संक्रमण पाये जाने पर उपयुक्त दवाइयों द्वारा इसका इलाज करवा के गर्भधारण का बाकी समय सुरक्षित किया जाना

कैथेटर एवं मूत्र संग्रहण थैली

मूत्र संक्रमण करने वाले कुछ जीवाणु

चाहिए.

बच्चों में मूत्र संक्रमण :- जिन बच्चों को तीन साल की उम्र के बाद या रात या दिन में बिस्तर पर पेशाब करने की शिकायत होती है उनमें लगभग 40 से 50 प्रतिशत बच्चों को रेफ्लेक्स की बीमारी हो सकती है. इस बीमारी में पेशाब करते समय मूत्र नीचे-ऊपर उछल कर गुर्दे पर आक्रमण करता है. ऐसे बच्चों को बार-बार पेशाब में संक्रमण हो जाता है और 20 से 25 साल की उम्र तक धीरे-धीरे गुर्दा फेल हो सकता है. यद्यपि इस बीमारी का बचाव अब शत प्रतिशत उपलब्ध है. ऐसे बच्चों में पेशाब का कल्चर, अल्ट्रासाउण्ड तथा एमसीयू जैसी जांच करने पर बीमारी पकड़ी जा सकती है और दवाओं अथवा छोटे से आपरेशन द्वारा इसे बढ़ने से रोका जा सकता है. इसके साथ ही इससे होने वाली गुर्दे की खराबी को भी बचाया जा सकता है. गुर्दे में बार-बार संक्रमण होने पर बच्चे का शारीरिक और हड्डियों का विकास भी प्रभावित होता है.

मूत्र संक्रमण से बचाव :- मूत्र व गुर्दे में संक्रमण से बचाव के लिए आवश्यक है कि खूब पानी पीया जाय, सोने से पहले तथा सहवास के बाद अनिवार्य रूप से मूत्र त्याग किया जाय. कब्ज न होने दें. गर्भधारण के दौरान प्रत्येक तीन माह में मूत्र का कल्चर कराकर अपनी स्थिति का आकलन कराते रहना चाहिए. बिस्तर पर मूत्र त्याग करने वाले बच्चों की जल्द से जल्द उचित जांच कराकर उपचार कराना चाहिए. जिन लोगों में बार-बार संक्रमण होने की शिकायत होती है, उन्हें जांच कराकर समय रहते उपचार करवाना चाहिए. यदि संक्रमण के साथ गुर्दा फेल होने की शिकायत हो तो दवाइयों का प्रयोग कम मात्रा में तथा विशेष सावधानी के साथ चिकित्सक की देखरेख में करना चाहिए.

शहतूत- एक बहुपयोगी फल वृक्ष

डॉ.नवीन कुमार बोहरा
प्लाट नंबर 389, गली नंबर 10
मिल्कमेन कॉलोनी, पॉल रोड,
जोधपुर (राज.)

शहतूत भारत का एक प्रमुख फल है तथा इसकी उत्पत्ति एशिया महाद्वीप मानी जाती है, परंतु इसकी व्यापकता के कारण इसका निश्चित स्थान ज्ञात करना कठिन है वर्तमान में रंग के आधार पर ही काले शहतूत का उत्पत्ति स्थल ईरान व भारत तथा सफेद शहतूत का चीन एंव जापान को माना जाता है. शहतूत मोरेसी वंश का पौधा है जिसका वानस्पतिक नाम 'मोरस अलवा' है तथा साधारणतः इसे शहतुत या तूत के नाम से जाना जाता है. इसका अंग्रेजी नाम मलबरी है. यह मध्यम आकार का छायादार वृक्ष होता है जिसमें मीठे खाने योग्य फल आते हैं. इसमें कापिस व्दारा कल्ले अच्छी तरह आते हैं तथा पोलार्डिंग (नई शाखा प्राप्त करने के लिए वृक्ष को तने के मध्य से काटना) भी अच्छी होती है. यह सूखे से प्रभावित होता है परंतु पाला सहन कर लेता है.

यह भारतवर्ष में जम्मू कश्मीर, कर्नाटक, पश्चिमी बंगाल, मध्यप्रदेश में रेशम के कीड़े पालने को उगाया जाता है. यह नदियों व नहरों के किनारे तथा नमीयुक्त घाटियों में अच्छी तरह उगता है. राजस्थान की नमीयुक्त जलवायु में भी इसे रेशम के कीड़े पालने को उगाया जाता है. इसकी लकड़ी बहुत उपयोगी है तथा क्रिकेट के बल्ले, टेनिस, रैकिट, हॉकी

स्टिक आदि बनाने के काम आती है. इसकी लकड़ी में अच्छे एंव बारीक ग्रेन के कारण इसका उपयोग बहुउद्देशीय है. इसकी लकड़ी को गरम भाप से मोड़ा जाता है इसका उपयोग नाव बनाने, मकान बनाने, इमारती एंव कृषि क्षेत्रों में होता है. यह एक अच्छा ईंधन भी है. इसकी पत्तियां पशुओं के लिए पौष्टिक एंव स्वादिष्ट चारा है. इसकी टहनिया टोकरी बनाने एंव जड़ व छाल औषधियां महत्व की है. इसका फल स्वादिष्ट होता है जो खाने योग्य होता है. इसकी लकड़ी से लुगदी भी बनाई जाती है.

इसमें मार्च-अप्रैल में फूल आते हैं तथा इसका फल मई जून में पकता है. 5 वर्ष के वृक्ष से फल व बीज प्राप्त किए जा सकते हैं. बीज एकत्र करने के लिए फलों को सीधे ही तोड़ते हैं. हाथ से पानी में फल को मसलने से बीज प्राप्त हो जाता है तथा सूर्य की धूप में इसे सूखा लेते हैं तथा सुखाने के बाद राख या रेतीली मिट्टी में मिलाकर रख लेते हैं. एक किलो में लगभग 4,50,000 बीज होते हैं तथा इनका औसत अंकुरण 10 प्रतिशत होता है. इन्हें 2 वर्ष तक संग्रहित रखा जा सकता है.

शहतूत की जातियां :- शहतूत की मुख्यतः तीन जातियां उगाई जाती है जिनकी विभिन्न उपजातियों से अच्छी उपज प्राप्त हो सकती है ये तीन जातियां हैं:-

1- मोरस अल्बा :- यह सफेद किस्म का शहतुत है तथा मुख्यतः कीड़ा पालने हेतू (मुख्यतः मौगा रेशम कीड़ा) उगाई जाती है. ये पौधे लगभग 15 मीटर तक ऊंचे होते हैं तथा इनकी 8 उपजातियां प्रयोग में लाई जाती हैं.

2- मोरस नाइगा :- यह काले रंग की शहतूत है तथा फलो के लिए ही लगाई जाती है. इसका फल उत्तम स्वाद का होता है तथा वृक्ष की ऊंचाई लगभग 9 मीटर होती है.

3- मोरस रूब्रा :- इसे लाल शहतूत भी कहते हैं. यह लगभग 15-18 मीटर ऊंचा होता है तथा लकड़ी फर्नीचर बनाने के काम आती है.

खेती :- शहतूत के लिए चिकनी दोमट मिट्टी अच्छी होती है परंतु यह किसी भी प्रकार की भूमि में उग सकता है. यह शीतोष्णजलवायु में अच्छी फसल देता है. इसकी खेती हेतु इसे बीजों द्वारा कलम लगाकर या 'टी चरमा विधि' से तैयार किया जा सकता है. बीजों को नर्सरी में बुआई के पश्चात 5-8 सेमी की पौध को पोलीथीन की थैली में जिसमें एक भाग बाग की मिट्टी, 1 भाग कम्पोस्ट एंव एक भाग बालू हो लगाया जाता है. कलम लगाने हेतु 25-30 सेमी लंबी कलम हो 2/3भाग मिट्टी में दबाकर गाड़ देते हैं तथा फिर चरमा विधि से सांकुर डाली को मूलवृन्त में फिट कर देते हैं. साधारणतः चरमा चढ़ाने का कार्य मार्च-अप्रैल में होता है.

अक्तूबर-नवंबर माह में अच्छी तरह तैयार भूमि में 6-8 मीटर की दूरी पर 45-45 सेमी आकार के गड्ढे तैयार कर पानी भर देते हैं तथा दिसंबर-जनवरी में पौधारोपण कर देते हैं. रेशम कीड़े पालने हेतु लगाए पौधों की आपसी

दूरी 3 मीटर रखी जाती है. पौधारोपण के पश्चात गर्मी में 15-20 दिन के अंतराल पर सिंचाई की जाती है. जिससे नई शाखाएं उत्पन्न होती हैं जिनपर फल लगते हैं. रेशम कीड़े पालने हेतु तने को जमीन के अत्यंत निकट से

काटा जाता है जिससे अधिक संख्या में बड़े आकार के पत्ते उत्पन्न होते हैं जो कीड़ो का भोजन बनते हैं. शहतुत की फसल उत्तर भारत में मुख्य रूप से मई-जून में आती है तथा औसतन 20-25 किग्रा फल एक वृक्ष से प्राप्त होते है, जिन्हें ज्यादा देर तक नहीं रखा जा सकता है. शहतूत के पेड़ पर कैंकर, शीर्षारम्भी जीवाणू एंव अंगमारी नामक बीमारियां लगती हैं.

इस प्रकार शहतूत की लकड़ी, फल, टहनियां आदि सभी उपयोगी है. विदेशों में मुख्यतः यूरोपीय देशों में इस फल से मदिरा निर्मित की जाती है. इसका प्रयोग मंदाग्नि को ठीक करने तथा कुछ टॉनिक बनाने में भी होता है. शहतूत एक उपयोगी फल वृक्ष है.

पर्यावरण संरक्षण- उम्मीद महिलाओं से

वृक्षों से भारतीय नारी का भावात्मक संबंध है. समर्पित भाव से वृक्षों की सेवा, उनकी पूजा और संरक्षण प्रकृति को संजीव मानने की विचारधारा को पल्लवित करता है. महिलाओं को वृक्षारोपण, वृक्षों की देखभाल और संरक्षण करने की प्रेरणा, प्राचीनकाल से ही प्राप्त है. इस युग में भी महिलाओं ने सर्वस्व को कष्टों में रखकर पेड़-पौधों की रक्षा करने के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं.

भारतीय वन इतिहास इस बात का गवाह है कि देश में समय-समय पर महिलाओं ने ही वन, वृक्ष, पेड़-पौधों एवं जीव-जंतुओं को संरक्षण प्रदान किया है और उन्हें पूजा है. आज भी बहुत से त्यौहारों एवं शुभ कार्यों को संपन्न करने से पूर्व महिलाएं उनकी पूजा करती हैं. लगभग 500 वर्ष पूर्व रामासड़ी गांव की करमा एवं गौरा ने वृक्षों की रक्षा के लिए अपने प्राण न्यौछावर किए.

दूसरी घटना तिलासनी गांव (जोधपुर) में घटित हुई जब खींवणी खोखर एवं नेतू नेणा ने पेड़ों को न काटने देने के विरोध में अपने प्राण न्यौछावर करके वृक्षों की रक्षा की.

जोधपुर से 25 किलोमीटर दूर स्थित खेजड़ली गांव में संवत 1787 में अमृता देवी, दामी एवं चीमा आदि अनेक महिलाओं ने खेजड़ी के वृक्षों को बचाने के लिए अपने प्राणों का त्याग कर दिया. आज भी देश के विभिन्न भागों में महिलाओं द्वारा वृक्षों को बचाने एवं पर्यावरण के संरक्षण हेतु कार्य किया जा रहा है. 'चिपको आंदोलन' के अंतर्गत पेड़ों की रक्षा के लिए आंदोलन एवं वृक्षारोपण का कार्य महिलाओं द्वारा ही संपन्न हो रहा है.

भारत की ग्रामीण महिलाएं ही ईंधन एवं अन्य कार्यों के लिए वनों का दोहन करती हैं. इन महिलाओं को पर्यावरण के संरक्षण के लिए परंपरागत ईंधन का उपयोग करने एवं गोबर गैस व सौर चूल्हों से ईंधन की आवश्यकता पूरी करने के लिए शिक्षित करने की आवश्यकता है यदि ग्रामीण महिलाएं ईंधन के वैकल्पिक स्त्रोतों को काम में लेना प्रारंभ कर दें तो पारिवारिक एवं ग्रामीण प्रदूषण को काफी कम किया जा सकता है. इसके साथ ही रसोईघरों के धुंए से होने वाली विभिन्न बीमारियों यथा- कफ, एक्सपेक्टोरेशन, हृदय रोग एवं रक्त अल्पता आदि से भी निजात मिल सकती है.

डॉ.नवीन कुमार बोहरा
प्लाट नंबर ३८९, गली नंबर १०
मिल्कमेन कॉलोनी, पॉल रोड,
जोधपुर (राज.)

विज्ञान समाचार

मिलते-जुलते ग्रह

यूनिवर्सिटी के शोध दल के द्वारा किए गए अनुसंधान के अनुसार ब्रह्माण्ड में हमारी पृथ्वी की तरह जीवन के लिए सहायक परिस्थितियों वाले ग्रह भारी संख्या में विद्यमान है. यह संख्या करोड़ों के पार भी हो सकती है. शोधकर्ताओं ने ग्रहों की गणना के आधार पर बताया कि हमारे तारामण्डल में अधिकांश तारों के आसपास पृथ्वी जैसे अरबों ग्रह हैं. एक मानक तारे के लगभग दो ग्रह होते हैं. ये ग्रह कथित गोल्डीलॉक्स क्षेत्र में होते हैं. यह क्षेत्र तारे के परे वह क्षेत्र होता है, जहां जीवन के लिए जरूरी जल द्रव की अवस्था में रह सकता है. एएनयू के रिसर्च स्कूल ऑफ एस्ट्रोनॉमी एण्ड एस्ट्रोफिजिक्स के वैज्ञानिक लाइनवीवर ने कहा, कि जीवन के लिए जरूरी चीजें वहां मौजूद हैं और अब हम जानते हैं कि रहने लायक पर्यावरण भी पर्याप्त हैं. खगोलशास्त्रियों ने एक ऐसे तरीके का पता लगाया है, जिससे दूर के बिल्कुल धरती जैसा ग्रहों (एक्सोप्लैनेटस-सौरमण्डल से बाहर का ग्रह) के निर्माण के बारे में जानने की सम्भावना जगी है. ये पृथ्वी जैसे तत्वों और मिश्रण प्रक्रिया से बने हो सकते हैं. हॉवर्ड-स्मिथसोनियन सेंटर फॉर एस्ट्रोफिजिक्स (खगोल भौतिकी) के एक प्रमुख लेखक ने बताया कि हमारा सौरमण्डल उतना विशिष्ट नहीं है जितना कि हम सोचते हैं. अन्य पथरीले ग्रह भी उसी तरह के तत्वों से बने प्रतीत होते हैं जैसे कि पृथ्वी है. शुक्र ग्रह और पृथ्वी कुछ हद तक मिलते-जुलते ग्रह हैं.

गैनीमेडे में जीवन की संभावना

अंतरिक्ष एजेंसी नासा को इस बात के पक्के सबूत मिले हैं कि बृहस्पति ग्रह के सबसे बड़े चंद्रमा गैनीमेडे पर एक भूमिगत समंदर है. इसके कारण वहां भी जीवन के लिए उपयुक्त माहौल होने की उम्मीद जगी है. हमारे सौर मंडल के सबसे बड़े ग्रह बृहस्पति के सबसे बड़े चंद्रमा गैनीमेडे पर वैज्ञानिकों को एक भूमिगत समुद्र होने के साक्ष्य मिले हैं. नासा के रिसर्चरों का दावा है कि इस समंदर में धरती से भी ज्यादा पानी है. हमारे सौर मंडल में जीवन की तलाश करने की दिशा में इस पिंड पर और शोध किए जाने की जरूरत है. वैज्ञानिकों ने बताया है कि हबल स्पेस टेलीस्कोप से इस पर ऑरोरे दिखाई दिए हैं. ऑरोरे से सतह के नीचे पानी के मौजूद होने के सबूत मिलते हैं. बृहस्पति ग्रह का चंद्रमा,

गैनीमेडे, हमारे पूरे सौर मंडल का सबसे बड़ा चंद्रमा है. 1995 में बृहस्पति पर उतरे गैलीलियो नामके स्पेसक्राफ्ट को गैनीमेडे पर संभावित या गहराई के बारे में अभी पता नहीं है. वैज्ञानिकों का अनुमान कि यह धरती के समुद्रों से कम से कम 10 गुना गहरा होगा और लगभग 150 किलोमीटर मोटी

चुम्बकीय क्षेत्र के संकेत भी मिले थे. अब हबल दूरबीन के ऑरोरे में आने वाले बदलावों से चुम्बकीय क्षेत्र की पुष्टि भी हो चुकी है. जर्मनी की कोलोन यूनिवर्सिटी के योआखिम जाउर का कहना है, 1970 के दशक से ही इस तरह की अटकलें और परिकल्पनाएं रही हैं कि गैनीमेडे पर समंदर हो बर्फीली सतह के नीचे दबा होगा. बृहस्पति एक विशालकाय पिंड है, जो मुख्यत हाइड्रोजन और हीलियम से बना है. यूरोपीय स्पेस एजेंसी 2022 में बृहस्पति ग्रह के लिए एक मिशन लॉन्च करना चाहती है. इसमें आठ सालों तक ग्रह का चक्कर लगाने और इसके तीनों बड़े चंद्रमाओं को भी

सकता है. अब इस पर संदेह नहीं रहा. नासा ने ऑरोरे का वर्णन करते हुए इन्हें ऐसे जगमगाते, गर्म इलेक्ट्रिफाइड गैसों के फीते जैसा बताया है, जो चंद्रमा के उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों पर दिख सकते हैं. चूंकि किसी ऑरोरे का नियंत्रण या तो चंद्रमा या फिर किसी ग्रह के चुंबकीय क्षेत्र से होता है इसीलिए इनमें दिखने वाले बदलावों से उस जगह के बारे में बहुत कुछ समझा जा सकता है. गैनीमेडे के समुद्र के तापमान पास से जानने की कोशिश की जायेगी. नासा इस मिशन के लिए रडार का निर्माण कर रहा है जिससे इन चंद्रमाओं की बर्फीली सतह को भेदकर उसके भीतर छुपी चीजों के बारे में जाना जा सके.

प्रस्तुति : संजय गोस्वामी
एनआरबी, बीएआरसी

टिप्पणी

आलू से बिजली

लाखों टन आलू यानि बटाटा भारतवर्ष में भंडारण के अभाव में सड़ जाता है. कल्पना करें कि आप इससे बिजली पैदा करें तो कितना किफायती होगा. जी हां घरों को रोशन करने के लिए बिजली ग्रिड की जगह आलू का इस्तेमाल संभव है?

येरुशलम की हिब्रू यूनिवर्सिटी के शोधकर्ता राबिनोविच और उनके सहयोगी पिछले कुछ सालों से लोगों को यही करने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं. जिन्होंने सस्ती धातु की प्लेट्स, तारों और एलईडी बल्ब को जोड़कर एल ई डी बल्ब को जला दिया. उनका दावा है कि ये तकनीक दुनिया भर के छोटे कस्बों और गांवों को रोशन कर देगी. राबिनोविच का यह भी दावा है, 'एक आलू चालीस दिनों तक एलईडी बल्ब को जला सकता है.' राबिनोविच इसके लिए कोई नया सिद्धांत नहीं दे रहे हैं. ये सिद्धांत हाईस्कूल की किताबों में पढ़ाया जाता है और इस पर ही बैटरी काम करती है.

इसके लिए ज़रूरत होती है दो धातुओं की- पहला एनोड, जो निगेटिव इलेक्ट्रोड है, जैसे कि ज़िंक, और दूसरा कैथोड - जो पॉज़ीटिव इलेक्ट्रोड है, जैसे कॉपर यानी तांबा. आलू के भीतर मौजूद एसिड ज़िंक और तांबे के साथ रासायनिक क्रिया करता है और जब इलेक्ट्रॉन एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ की तरफ जाते हैं तो ऊर्जा पैदा होती है. वैसे इसकी खोज वर्ष 1780 में लुइगी गेल्वनी ने की थी जब उन्होंने मेंढक की मांसपेशियों को झटके से खींचने के लिए दो धातुओं को मेंढक के पैरों में बांधा था. लेकिन आप इसी प्रभाव को पाने के लिए इन दो इलेक्ट्रोड्स के बीच कई पदार्थ रख सकते हैं. एलेक्जेंडर वोल्टा ने नमक के पानी में भीगे हुए कागज का इस्तेमाल किया था. अन्य शोधों में धातु की दो प्लेट्स और मिट्टी के एक ढेर या पानी की बाल्टी से 'अर्थ बैटरियां' बनाई गईं थीं.

आलू पर शोध - वर्ष 2010 में, राबिनोविच ने कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी के एलेक्स गोल्डबर्ग और बोरिस रुबिंस्की के साथ इस दिशा में एक और कोशिश करने की ठानी. गोल्डबर्ग के अनुसार, 'हमने 20 अलग-अलग तरह के आलू देखे और

उनके आंतरिक प्रतिरोध की जांच की. इससे हमें यह समझने में मदद मिली कि गरम होने से कितनी ऊर्जा नष्ट हुई.' उनकी शोध के अनुसार

1. आलू को आठ मिनट उबालने से आलू के अंदर कार्बनिक ऊतक टूटने लगे, प्रतिरोध कम होने लगता है और इलेक्ट्रॉन्स ज़्यादा मूवमेंट करने लगे. इससे अधिक ऊर्जा बनती है.

2. आलू को चार-पाँच टुकड़ों में काटकर इन्हें तांबे और ज़िंक की प्लेट के बीच रखा गया. इससे इसकी ऊर्जा 10 गुना बढ़ गई यानी बिजली बनाने की लागत में कमी आई.

3. राबिनोविच कहते हैं, 'इसकी वोल्टेज़ कम है, लेकिन ऐसी बैटरी बनाई जा सकती है जो मोबाइल या लैपटॉप को चार्ज कर सके.'

4. एक आलू उबालने से पैदा हुई बिजली की लागत 9 डॉलर प्रति किलोवाट घंटा आई, जो डी-सेल बैटरी से लगभग 50 गुना सस्ती थी.

5. विकासशील देशों में जहां केरोसिन (मिट्टी के तेल) का इस्तेमाल अधिक होता है, वहां भी यह छह गुना सस्ती पड़ सकती है. यह तो भारत के लिये वरदान है.

भारतीय आलू बैटरी से बेख़बर

वर्ष 2010 में दुनिया में 32.4 करोड़ टन आलू का उत्पादन हुआ. यह दुनिया के 130 देशों में उगाया जाता है और स्टार्च का सबसे अच्छा स्रोत माना जाता है. यह सस्ते हैं, इन्हें आसानी से स्टोर किया जा सकता है और लंबे समय तक रखा जा सकता है. दुनिया में 120 करोड़ लोग बिजली से वंचित हैं और एक आलू उनका घर रोशन कर सकता है. राबिनोविच कहते हैं, 'हमने सोचा था कि संगठन इसमें दिलचस्पी दिखाएंगे. हमने सोचा था कि भारत के राजनेता हमें हाथों-हाथ लेंगे.' फिर ऐसा क्या हुआ कि तीन साल पहले हुए इस शोध की तरफ दुनियाभर की सरकारों, कंपनियों या संगठनों का ध्यान नहीं गया.राबिनोविच कहते हैं, 'सीधा सा जवाब है, वे शायद इसके बारे में जानते ही नहीं हैं.'

मामला जटिल भी है : लेकिन वजह शायद इतनी सीधी नहीं है, मामला कुछ जटिल है. पहली वजह है यह मुद्दा बिजली के लिए खाद्यान्न से जुड़ा है. संयुक्त राष्ट्र के कृषि और खाद्य संगठन का कहना है कि गन्ने या जैव ईंधन से ऊर्जा बनाने से बचना चाहिए. पहली आवश्यकता इस बात को देखने की है कि क्या खाने के लिए पर्याप्त आलू हैं?

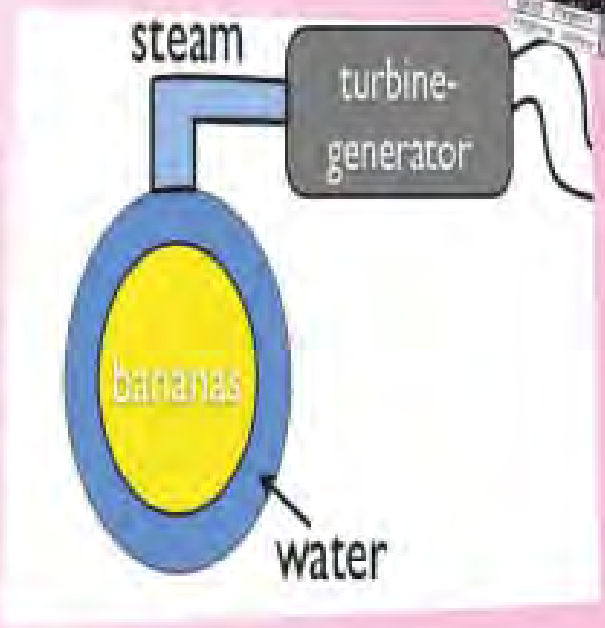

कीनिया जैसे देश में लोगों के लिए मक्का के बाद आलू सबसे प्रमुख भोजन है. वहाँ छोटे किसानों ने इस साल एक करोड़ टन आलू उगाए. विशेषज्ञों के अनुसार इनमें से 10-20 प्रतिशत स्टोर न किए जाने या अन्य वजहों से नष्ट हुए और वो तो ज़रूर ऊर्जा पैदा करने के काम में लगाए जा सकते थे.

केले के छिलके : शायद यही वजह है कि श्रीलंका की केलानिया यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने केले के तने से यह प्रयोग करने की ठानी है. भौतिक विज्ञानी केडी जयसूर्या और उनकी टीम का कहना है कि केले के तने के हिस्सों को उबालने से एक एलईडी 500 घंटे तक चल सकता है. हालाँकि ऊर्जा का असली स्रोत आलू या केले का तना नहीं है. ऊर्जा तो ज़िंक के घिसने से पैदा होती है. इसका मतलब कुछ देर

बाद ज़िंक दोबारा लगाना होगा. लेकिन ज़िंक सस्ता है और ज़िंक इलेक्ट्रोड लगभग पांच महीने तक चलता है और इसकी कीमत एक लीटर केरोसीन के बराबर आती है. कम से कम श्रीलंका में तो एक लीटर केरोसीन एक परिवार दो रात में ही इस्तेमाल कर लेता है. अगर ज़िंक उपलब्ध नहीं है तो मैग्नीशियम और लोहे को भी विकल्प के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है.

लैपटॉप की बेकार बैटरी से जलेगा बल्ब

शोधकर्ताओं के अनुसार लैपटॉप की बेकार हो चुकी बैटरियों में इतनी जान होती है कि उससे झुग्गी झोपड़ियों में रहने वाले लोगों के घरों में रोशनी की जा सकती है. कंप्यूटर कंपनी आईबीएम की ओर से कराए गए एक शोध में ऐसी बैटरियों का परीक्षण किया गया जो लैपटॉप के लिए उपयोगी नहीं थीं.

परीक्षण में शामिल 70 फ़ीसदी बैटरियों से एक एलईडी बल्ब को एक साल तक रोज़ाना क़रीब चार घंटे से जलाया जा सकता था. इस तकनीकी का पहला परीक्षण इसी साल भारत के बैंगलुरु में किया गया. शोधकर्ताओं का कहना है कि बेकार हो गई पुरानी बैटरियों का इस्तेमाल बिजली के मौजूदा विकल्पों से सस्ता है. उनका मानना है कि इससे

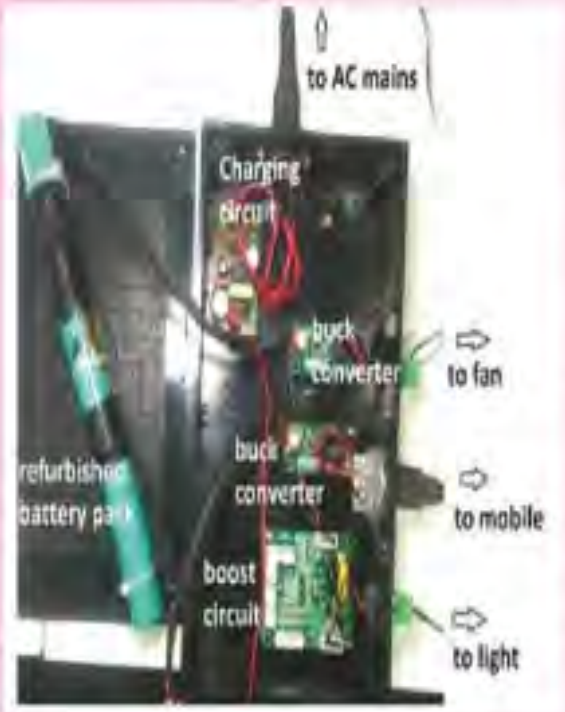

बढ़ते हुए इलेक्ट्रॉनिक कचरे पर लगाम लगाने में मदद मिल सकती है. विकासशील देशों में इलेक्ट्रॉनिक कचरे की समस्या बढ़ती जा रही है. माना जा रहा है कि सड़क किनारे दुकान लगाने वाले खोमचे वाले और झुग्गियों में रहने वाले ग़रीब लोगों के बीच पुरानी बैटरियों का इस्तेमाल लोकप्रिय होगा.

ऊर्जा का विकल्प : अमेरिका के मैसेचुएट्स इंस्टीट्यूट ऑफ़ टेक्नोलॉज़ी की रिसर्च मैगज़ीन ने लिखा है कि आईबीएम की भारतीय यूनिट के इस शोध पर कैलिफोर्निया के सैन जोस में होने वाले एक कांफ्रेंस में चर्चा की जाएगी. आईबीएम की रिसर्च टीम का कहना है कि अमरीका में ही हर साल तकरीबन पांच करोड़ कंप्यूटर फेंक दिए जाते हैं. सौर ऊर्जा का विकल्प अपेक्षाकृत महंगा है और शोधकर्ताओं को उम्मीद है कि बिजली के बिना काम चलाने वाले चालीस करोड़ लोगों को इससे मदद मिल सकती है.

सोना है आपका मोबाइल

कहा जाता है कि एक झोला भर पुराने मोबाइल फ़ोन में एक ग्राम तक सोना होता है. विश्व भर में ऐसे पुराने मोबाइल फ़ोन की बहुत बड़ी तादाद है तो फिर हम इनसे कितना सोना निकाल सकते हैं.

पर्यावरण मामलों के यूरोपीय कमिश्नर जानेज़ पोटोक्निक ने यूरोपीय संघ की बैठक में कहा, 'यह कारोबार का मामला है. कचरे में वाक़ई सोना है. एक टन कचरे से एक ग्राम सोना मिलता है, लेकिन आप इतना ही सोना 41 मोबाइल फ़ोन की रीसाइक्लिंग से भी पा सकते हैं.'

संघ ने ई-कचरे का निर्धारण करने के लिए एक बैठक आयोजित की थी.

वैज्ञानिक

ई-कचरे में सोना

जहां ई-कचरे पर संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट कहती है कि 41 हैंडसेट्स से 1 ग्राम सोना मिल सकता है, वहीं

ब्रसेल्स की टेक्नोलॉज़ी कंपनी यूमीकोर ने बीबीसी को बताया कि आप सिर्फ़ 35 फ़ोन से इतना ही सोना पा सकते हैं। हर साल खानों से लगभग 2700 टन सोना निकाला जाता है यानी एक टन पुराने फ़ोन (बिना बैटरी के) से 300 ग्राम तक सोना मिल सकता है।

यूरोपीय कमिश्नर के दावे के बावजूद ई-कचरे से सोना निकालने का कारोबार कितना फ़ायदेमंद है, यह तो स्पष्ट नहीं है, लेकिन यूमिकोर का कहना है कि फ़ोन से सोना निकालने का कारोबार मुनाफ़े का सौदा हो सकता है. हालाँकि, लंदन के जेन्युइन सॉल्युशंस ग्रुप का कहना है कि इससे थोड़ा बहुत पैसा बन सकता है या बिल्कुल भी नहीं बन सकता है.

पोटोक्निक मोबाइल फ़ोन रीसाइक्लिंग को 'सर्कुलर इकोनॉमी' के रूप में बढ़ावा देना चाहते हैं और 60 करोड़ टन ई-कचरे को वापस अर्थव्यवस्था के लिए लाभदायक इस्तेमाल में बदलना चाहते हैं.

दूर नहीं उड़ती कारों का सपना

अब ये अब काल्पनिक बात नहीं रह गई कि आपके घर के बाहर ऐसा वाहन पार्क हो जो कार भी हो, विमान भी और ड्रोन भी. तो क्या ऐसा भी हो पाएगा कि खचाखच भरी सड़कों से वाहन चालक जब चाहे, उड़ान भरे और फिर जब सड़क, खेत या खुली जगह पर उतरना चाहे, तो ऐसा कर पाए?

कम से कम इसे साकार करने में तकनीकी तो आड़े नहीं आने वाली है. मुश्किल मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक बाधा दूर करने की है, क्योंकि शायद हमें इस बदलाव को स्वीकारने में अभी समय लगे. मैसाच्यूसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ़

टेक्नोलॉजी (एमआईटी) में एसोसिएट प्रोफ़ेसर मेरी कमिंग्स ने तो भविष्य का यही सपना देखा है. इस वाहन को ड्रोन और रोबोट कार से मिलाकर बनाया जाएगा लेकिन क्रांतिकारी

बदलाव ये होगा कि आप न तो कार चला रहे होंगे न ड्रोन.

विमान भी तो ड्रोन है

कमिंग्स का कहना है कि ड्रोन को लेकर मीडिया का पूर्वाग्रह नकारात्मक है, क्योंकि इन्हें जासूसी वाले कैमरों के रूप में देखा जाता है. लेकिन ज़्यादातर लोगों को पता नहीं है कि जब वे विमान में होते हैं तो असलियत में वे ड्रोन पर सफ़र कर रहे होते हैं. सभी एयरबसों और बोइंग विमानों की फ्लाई-बाई-वायर वही तकनीकी है जो ड्रोन्स में काम करती है.

मनुष्य और कंप्यूटर

तो भविष्य में ड्रोन क्यों चाहिए? जवाब यह है कि लोग बहुत ख़राब ड्राइवर हैं.

मनुष्य सहज तौर पर किसी भी त्वरित काम को करने में आधा सैकेंड देरी से करता है. मसलन, यदि गली में लुढ़कती जा रही गेंद को देखकर या फिर आकाश में किसी विमान को देखकर उससे बचाव करना हो तो, मनुष्य को कदम उठाने में इतना समय लग ही जाता है. आधा सेकेंड की देरी भी ज़िंदगी और मौत का अंतर बन सकती है. कंप्यूटर और ऑटोमैटिक सिस्टम ऐसा नहीं करते- वे माइक्रोसेकंड में कदम उठाते हैं. इसलिए, ज़मीन और हवा में भविष्य की परिवहन व्यवस्था जब हम कंप्यूटर के हवाले करेंगे तो यह वास्तव में ज़्यादा सुरक्षित होगी. कमिंग्स का कहना है कि इस विचार को अमली जामा पहनाने में कोई तकनीकी बाधा नहीं है. हमें उत्पादन में सुधार और इन्हें बनाने की लागत में कमी लानी है यानी और रोबोट्स की ज़रूरत पड़ेगी. इसलिए ऐसे रोबोट बनाने होंगे जो सस्ते में और रोबोट्स बना सकें.

हैकर्स से ख़तरा

तो क्या हमें मशीनों से डरने की ज़रूरत है? क्या सारा नियंत्रण मशीनों के हाथों में चला जाएगा। कमिंग्स इससे चिंतित नहीं हैं. उनकी चिंता हैकर्स और चरमपंथी हैं. वह ऐसी तकनीकी विकसित करने पर काम कर रही हैं, जिससे किसी भी उड़ने वाला रोबोट हमले बच सके और ख़ुद ही बिना जीपीएस या बाहरी सिग्नल के, अपनी रास्ता खोज सके। इस पूरी योजना की सुरक्षित यातायात के नज़रिए से अपार संभावनाएँ हैं। ये संभावनाएँ दुनिया के उन हिस्सों में ज़्यादा है जहाँ सड़क और हवाई नेटवर्क ज़्यादा विकसित नहीं हैं.

संकलन : पूनम सैन

वैज्ञानिक राजभाषा वर्ग पहेली -२

1	8	14	19		27	32
2	9	15	20			33
3	10		21	25	28	34
4	11	16	22			
5	12		23	26	29	
6		17	24		30	
7	13	18			31	

बायें से दायें :

१. भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग के प्रमुख वैज्ञानिक (६)
२. त्याग दिया (२)
३. गुरू नानक देव का प्रमुख ग्रंथ का नाम आरम्भ (२)
५. रतजगा करो तो समझो (२)
६. मेरी छाती पर मूंग मत दलो (३)
७. सिन्धी पंजाबी का सरनेम (२)
८. मेरा बदन (२)
९. चाय हटाकर देखो २ नम्बरी लगाओ, यह दुनिया कैसी है (३)
१०. बिना मेरे पाप का नाम मत लो, यह तो लेखा जोखा है (२)
११. वाह पंडित जी मेरे बिना पूजा कैसे करोगे (४)
१२. ऐसी लागी लगन मीरा हो गई मगन उर्दू में (३)
१३. यार बेकार में मत झीको (२)
१६. बहुत धन इकट्ठा किया है कुछ तो जोड़ो (२)
१७. तेरी मां की मां बोले तो (२)
१८. भाई क्या देखते हो (३)
१९. कालीदास के प्रसिद्ध ग्रंथ का नाम आरम्भ (३)
२०. अध्यापक जी अंगेजी में बोलो न (३)
२१. मुसलमान भाई इस महीने दिन में नहीं खाते (४)
२२. अंगेजी में क्या स्टैंडर्ड है आपका (३)
२३. बाइबिल की संत (२)
२४. नियमानुसार सर्वनियम फैसला करो (४)

२५. आनन्द आया क्या ९२)
२६. नहीं नहीं अभी नहीं थोड़ा करो इंतजार, यहीं कहीं (२)
२७. इसके कारण सृष्टि है नहीं तो वृष्टि है (२)
२८. इस सीमेंट में बहुत जान है, छूढो न (२)
२९. यह भावना मानसिक रोगी बना देगी (२)
३१. पंजाब इसका कटोरा है (२)

ऊपर से नीचे :

१. करवटें बदलते रहे सारी रात हम आपकी की कसम (४)
२. गुजराती में दालचीनी (२)
३. सुबह हो गई बच्चों को उठा दो (२)
४. फौज की टुकड़ी समझ (३)
५. आ देखें जरा तुझमें कितना है ---(२)
८. क्या यार घुमाकर २ नम्बरी बातें से दातें हो गया (२)
९. तीन तियां नौ, समझे क्या (२)
१२. इतनी बेरूखी से जवाब (४)
१४. समझो तो शून्य के बराबर (३)
नहीं तो अगूंठी में जड़ा लो (२)
१५. मान लगाओ तो इज्जतदार आदमी हो (२)
१९. घरेलू उद्योग में इसका भी योगदान है (३)
२१ एक स्त्री नाम जो देवी का भी है (२)
२२. सम्मानीय अतिथिगण और श्रोताओं यह दूसरा सम्बोधन है (४)
२५. अध्ययन मेरा बिना अधूरा है (२)
२६. नतीजा मराठी में कैसे लिखोगे (३)
२९. बिना मेरे सब्जी में छौंका कैसा (२)
३०. ऐ मेरी तुलना इंसान से, जानवर हूं तो क्या (२)
३२. यूनिवर्सिटी को संक्षेप में तो जानो (२)
३३. महाकवि तुलसीदास की भक्ति पत्रिका का आरम्भिक नाम. वैसे मैं बहुत नम्र हूं (३)
३४ नयन लड़ जाइयें तो मनवा मा कसक होवे करी (३)

वर्ग पहेली निर्माता :
- विपुल लखनवी

वैज्ञानिक राजभाषा वर्ग पहेली -१ का हल

1.	कौ	8.	अ	11	ज	17.	ग	23	र	27.	ह	31	ट		
2.	आ	9.	हो	12	ग	18	ल		गा	28.	न	32	का		
3	टा		मी	13.	म	19.	आ	24.	म		टा		र		
4.	ग	10.	ज	14	ग	20	टी		श	29.	चं	33.	ट		
5.	जी		हां		म		टा	25	अ		च		र		
6.	टा		गी	15	ज	21.	र		मो	30	ला		वा		
7.	म		र	16	ट	22	म	26.	न		भ		जा		

डा.होमी भाभा हिन्दी विज्ञान लेख प्रतियोगिता 2014 के परिणाम

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति (भा.प.अ.केन्द्र) के संयुक्त तत्वाधान में आयोजित अखिल भारतीय हिन्दी विज्ञान लेखन प्रतियोगिता-2014 में निम्नलिखित प्रविष्टियों को निर्णायक मंडल ने पुरस्कृत किया है.

निर्णायक मंडल :

1. श्री.एच.मिश्रा, सह निदेशक, तकनीकी सेवा वर्ग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र

2. श्री.डी.के.शुक्ला, निदेशक, परमाणु नियामक मुंबई

3. श्री. विपुल सेन, प्रतियोगिता संयोजक एवं व्यवस्थापक 'वैज्ञानिक'

प्रथम : 2000 रु.	आभामण्डल का विज्ञान : अनुज श्रीवास्तव, आई आई टी (खड़गपुर), एम.बी.ए. बैंगलौर
द्वितीय : 1500रु.	हरित गृह से जलवायु परिवर्तन : डॉ अखिलेश कु.द्विवेदी भूगोल विभाग, श्री.अग्रव राजकीय स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय, अगस्त्यमुनि, रुद्र प्रयाग (उत्तराखंड)
तृतीय : 1000रु.	इबोला-एक दुर्दांत घातक व्याधि : रामप्रताप तिवारी, एच-3, बी-2, नीलकमल अपा. प्रणामी मंदिर मार्ग, सिलीगुड़ी, - 734001
प्रोत्साहन : 500रु.	ग्लोबल वार्मिंग और प्रदूषण नियंत्रण : डॉ हेमलता पंत, सोसायटी आफ बायलाजिकल साइंसेस एण्ड रूरल डेवलपमेंट, (एस बी एस आर डी), 10/96, गोला मार्ग, नई फूंसी, इलाहाबाद-211010
प्रोत्साहन : 500रु.	फफूंद से बनता है जैव - विष : डा.एन.के.वोहरा
प्रोत्साहन : 500रु.	जल प्रदूषण : डॉ.ए.के.चतुर्वेदी, 26, कावेरी एंक्लेव, फेज-2, निकट स्वर्ण जयंती नगर, रामघाट रोड, अलीगढ़
प्रोत्साहन : 500रु.	ईबोला की लपेट में पश्चिमी अफ्रिका : कुछ वैज्ञानिक तथ्य : राघव शैलेन्द्र कु.सिंह, वैज्ञानिक अधिकारी, भारतीय उष्णदेशईय मौसम विज्ञान संस्थान, पाषाण पथ, डाकघर - एन सी एल पुणे-411008 (महाराष्ट्र)
प्रोत्साहन : 500रु.	(हिन्दी भाषी पुरस्कार) मेथी स्पर्श द्वारा असाध्य रोगों का उपचार : डॉ.चंचलमल चोरडिया, चोरडिया भवन, o/s जैलोरी गेट, गोले बिल्डिंग रोड, जोधपुर-342003 (राजस्थान)

डॉ. होमी भाभा हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता- 2016

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति (भा.प.अ. केंद्र) के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता 2016 हेतु प्रविष्टियां आमंत्रित हैं. लेख में किसी भी वैज्ञानिक विषय पर मौलिक एवं आधुनिक जानकारी होनी चाहिए, लेख का अप्रकाशित होना अनिवार्य है. मूल्यांकन में नवीनतम जानकारी के साथ-साथ अच्छे रेखाचित्रों/ फोटोग्राफों, तालिकाओं इत्यादि को समुचित महत्व दिया जाता है. अतः चित्रों को अलग से सफेद कागज/ ट्रेसिंग पेपर पर काली रोशनाई (इंडिया इंक) से बनायें. फोटोग्राफ ब्लैक एंड व्हाइट हो तो उचित रहेगा. इन्हें लेख के अंत में संलग्न करें। नीचे दिये गये पते पर कृपया दो टंकित अथवा स्पष्ट हस्तलिखित प्रतियां (लगभग 3000-4000 शब्दों में) भेजें.

अंतिम तिथि : 31 दिसंबर 2016

पुरस्कार

प्रथम	-	2000/रु.
द्वितीय	-	1500/रु.
तृतीय	-	1000/रु.
प्रोत्साहन	-	500/रु.

पांच प्रोत्साहन पुरस्कार एवं इतर हिंदी भाषी प्रतियोगियों को दो विशेष पुरस्कार 500/-रु. (प्रत्येक) के दिये जायेंगे। अतः अपनी मातृभाषा का स्पष्ट उल्लेख करें।

विशेषः पुरस्कृत रचनाएं 'वैज्ञानिक' की संपत्ति होगी। 'वैज्ञानिक' पत्रिका से संबंधित पदाधिकारी इस प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकेंगे। यदि रचना एक ही लेखक द्वारा लिखी गयी हो तो उचित होगा। ईमेल से भेजी गयी प्रविष्टियां प्रशंसनीय होंगी।

प्रविष्टियां भेजने का पता

– श्री विपुल सेन -

प्रतियोगिता संयोजक एवं व्यवस्थापक, 'वैज्ञानिक'
वैज्ञानिक अधिकारी, ई.डी. एण्ड सी.डी., पी. पी. परिसर,
भा.प.अ.केंद्र (B.A.R.C.), मुंबई- 400085, फोनः 022 25591154
vsen@barc.gov.in, vipkavi@gmail.com

संक्षिप्त परिचय

बालक कलाम

पूरा नाम	:	अबुल पाकिर जैनुल्लाबदीन अब्दुल कलाम (अविवाहित), तमिल कवि
जन्म		15 अक्तूबर,1931, रामेश्वरम, तमिलनाडु - **महाप्रयाण** 27 जुलाई, 2015, शिलांग, मेघालय
अभिभावक		जैनुल्लाबदीन अब्दुल
प्रसिद्धि/पद		भारतीय मिसाइल कार्यक्रम के जनक / यह भारत सरकार के 'मुख्य वैज्ञानिक सलाहकार', भारत के 11वें राष्ट्रपति (25 जुलाई, 2002 से 25 जुलाई, 2007 तक)
शिक्षा		वैमानिकी स्नातक, मद्रास इंस्टीट्यूट ऑफ टैक्नालॉजी
पुरस्कार-उपाधि		भारत रत्न (1997), पद्म विभूषण (1990), पद्म भूषण (1981), इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार एवं देशी-विदेशी कई विश्वविद्यालयों से मानद डॉक्टरेट की उपाधियां
लेखन		'विंग्स ऑफ़ फायर', 'इण्डिया 2020- ए विज़न फ़ॉर द न्यू मिलेनियम', 'माई जर्नी', 'इग्नाटिड माइंड्स-अनलीशिंग द पॉवर विदिन इंडिया', 'महाशक्ति भारत', 'हमारे पथ प्रदर्शक', 'हम होंगे कामयाब', 'अदम्य साहस', 'छुआ आसमान', 'भारत की आवाज़', 'टर्निंग प्वॉइंट्स'

सम्मान और पुरस्कार

डॉ. कलाम को अनेक सम्मान और पुरस्कार मिले हैं जिनमें शामिल हैं-

- नेशनल डिज़ाइन अवार्ड- इंस्टीट्यूशन ऑफ इंजीनियर्स
- डॉ. बिरेन रॉय स्पेस अवार्ड- एरोनॉटिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया
- आर्यभट्ट पुरस्कार- एस्ट्रोनॉटिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया
- विज्ञान के लिए जी.एम. मोदी पुरस्कार
- राष्ट्रीय एकता के लिए इंदिरा गांधी पुरस्कार
- आप भारत के एक विशिष्ट वैज्ञानिक हैं, जिन्हें 30 विश्वविद्यालयों और संस्थानों से डॉक्टरेट की मानद उपाधि प्राप्त हो चुकी है.
- इन्हें भारत के नागरिक सम्मान के रूप में 1981 में पद्म भूषण, 1990 में पद्म विभूषण, 1997 में भारत रत्न सम्मान प्राप्त हो चुके हैं.

विशेषता

डॉक्टर अब्दुल कलाम ऐसे तीसरे राष्ट्रपति हैं जिन्हें भारत रत्न का सम्मान राष्ट्रपति बनने से पूर्व ही प्राप्त हुआ है, अन्य दो राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन और डॉक्टर ज़ाकिर हुसैन हैं.

यह प्रथम वैज्ञानिक हैं जो राष्ट्रपति बने हैं और प्रथम राष्ट्रपति भी हैं जो अविवाहित हैं.

संकलन : विपुल सेन

हम सबके दिल में बसे

अलविदा

जन्म : 15 अक्तूबर 1931 : महाप्रयाण : 27 जुलाई 2015

कार्टून : विशाल के. मुलिया
गूगल से साभार

* 'वैज्ञानिक' में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। * वैज्ञानिक में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार हिं.वि.सा.परिषद के पास सुरक्षित हैं। * 'वैज्ञानिक' तथा हिं.वि.सा.परिषद से संबंधित सभी विवादों का निर्णय मुंबई के न्यायालय में ही होगा। * 'वैज्ञानिक' में प्रकाशित सामग्री का आप बिना अनुमति लिए उपयोग कर सकते हैं, परंतु इस बात का उल्लेख करना अनिवार्य होगा कि अमुक सामग्री 'वैज्ञानिक' से साभार.

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, भा.प.अ.केंद्र ट्रांबे, मुंबई 85 के लिए श्री विपुल सेन द्वारा सम्पादित व निर्भय पथिक (संपर्क : Email : nirbhaypathik@gmail.com फोन : 24153784, 9869022787, 32201260) से मुद्रित व प्रकाशित.